आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 68 ★ अंक : 09 ★ मूल्य : 10 रु.
10 सितम्बर, 2011 ★ भाद्रपद, 2068

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नवकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं।।

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

मंगल-मूल धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
महिमामयी यह 'जिनवाणी'।।

अहिंसा तीर्थ
एक संस्कार केंद्र

*"मांसाहार मानवजाति पर कलंक है।
मांस जमीनसे या झाड पर नहीं पैदा होता।
निर्दोष बेजबान प्राणियों की हत्या से
मांस तयार होता है। ऐसे पाप कार्य से
लोगों को बचाओ।"*

शाकाहार प्रसारक एवं गोपालक मा. श्री. रतनलालजी बाफना द्वारा निर्मित जलगाँव का अहिंसा तीर्थ शाकाहार प्रचार-प्रसार के लिये समूचा समर्पित है। यहाँ का यूटर्न म्युझियम देखकर आजतक लाखों लोगोंने मांसांहार त्यागा है। यह प्राणियों की मुक भावनाओं तथा उनकी असीम यातनाओं को बखुबी प्रदर्शित करता है

आपका अहिंसा तीर्थ में स्वागत है।

*आप जैन है, शाकाहार का प्रसार करो
सच्चे महावीर बनो, धर्म का नाम उँचा करो।*

रतनलाल सी. बाफना
शाकाहार प्रवर्तक

ACHARYA SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA
Koba, Gandhinagar 382 009
Phone: (079) 232762...

**रतनलाल सी. बाफना
गो सेवा अनुसंधान केंद्र**
गोशालाही नहीं एक संस्कार केंद्र

अहिंसा तीर्थ, कुसूंबा, जळगांव. फोन : 2213415, 2270125 • www.ahimsatirth.com

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
विरदराज सुराणा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर-342005 (राज.), फोन-0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-RJ/JPC/M-07/2009-11
ISSN 2249-2011

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

एवं सिक्खासमावन्ने, गिहवासे वि सुव्वए।
मुच्चइ छवि-पव्वाओ, गच्छे जक्खसलोगयं।।
-उत्तराध्ययन सूत्र, 5.24

ऐसी शिक्षा से युक्त गृही, यदि सुव्रत पालन करता है।
तज कर औदारिक तन अपना, वह देवलोक पद धरता है।।

सितम्बर, 2011
वीर निर्वाण संवत् 2537
भाद्रपद, 2068
वर्ष 68 अंक 9

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 120 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
आजीवन देश में : 500 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
आजीवन विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क भेजने का पता- जिनवाणी, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-03 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail:sgpmandal@yahoo.in
ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	न्यायपूर्ण व्यवहार	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	9
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	10
प्रवचन-	जीवों के रक्षण में बनें सजग	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	11
	सुपात्रदान की महत्ता	-उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.	17
	चातुर्मास की सफलता	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा.	19
	कर लें भजन	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.	28
शोधालेख-	जैन साहित्य में नियतिवाद-विमर्श	-डॉ.श्वेता जैन	37
	श्रीवत्स प्रतीक का उद्भव और विकास	-प्रो. भागचन्द्र जैन	46
चिन्तन -	उपादान के साथ निमित्त भी आवश्यक	-श्री जशकरण डागा	53
	जैन वैज्ञानिक भी जानें जैनदर्शन	-प्रो. वीरसागर जैन	73
नारी-स्तम्भ-	अष्ट प्रवचन माता का उपयोग गृहस्थ जीवन में भी	-श्रीमती सुशीला बोहरा	56
अंग्रेजी-स्तम्भ-	GURU : A Light in Life	*-Ku. Deepti Jain*	66
पत्र-स्तम्भ -	दीवार जब टूट जाती है(7)	-आचार्य विजयरत्नसुन्दरसूरिजी म.सा.	68
तत्त्व-ज्ञान -	आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ (69)	-श्री धर्मचन्द जैन	75
धर्मकथा -	धर्म का बाह्यरूप	-श्रीमती पारसकंवर भण्डारी	78
प्रासङ्गिक -	जैन स्थानकों की पवित्रता	-श्री स्वरूपचन्द बाफना	82
स्वास्थ्य-स्तम्भ-	चैतन्य चिकित्सा	-डॉ. चंचलमल चोरडिया	84
युवा-स्तम्भ-	संत-सतियों के जीवन से लें प्रेरणा	-श्री नितेश नागोता जैन	87
बाल-स्तम्भ -	बोरियत से कैसे बचें?	-श्री कैलाश जैन 'एडवोकेट'	92
विचार-	व्यक्तित्वं-विकास	-श्री अभयकुमार जैन	45
	पर्युषण जागने का पर्व	-उपाध्याय साध्वी यशा	72
	गुरु आप हो महान्	-सुश्री रिंकल जैन	74
	अपनों से दूरी	-महासती रुचिता जी म.सा.	77
कविता/गीत-	क्षमा मांगता हूँ, क्षमा कीजियेगा	-श्री मोहन कोठारी 'विनर'	52
	विषादहीन मरघट	-श्री जितेन्द्र चोरडिया 'प्रेक्षक'	90
	गुरुकृपा	-कवि प्रकाश नागोरी	91
	कविताएँ	-डॉ. दिलीप धींग	104
	छोड़ दे माँ! तुच्छ विचार	-श्रीमती कमला सुराणा	117
श्राविका-मण्डल-	मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (18)	-संकलित	96
साहित्य समीक्षा-	नूतन साहित्य	-डॉ. धर्मचन्द जैन	100
स्वाध्यायी परिचय-	श्री उम्मेदचन्द जी जैन	-श्रीमती मोहनकौर जैन	103
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन		105
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		117

सम्पादकीय

न्यायपूर्ण व्यवहार

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

मनुष्य की यह प्रकृति है कि वह दूसरों की भूलों एवं अपराधों के लिए दण्ड का विधान चाहता है तथा अपनी भूलों एवं अपराधों को दूसरों के द्वारा क्षमा किए जाने की अपेक्षा रखता है। क्या यह मानव का न्यायपूर्ण व्यवहार है? बेशक नहीं। हम अपनी भूलों एवं अपराधों को भी जिस दिन दण्ड के योग्य मानेंगे तब अपने प्रति न्याय का व्यवहार करने में समर्थ होंगे।

पहली बात तो यह है कि प्रायः मनुष्य का ऐसा स्वभाव बन गया है कि उसे दूसरों के दोष आसानी से नज़र आते हैं और अपने दोषों एवं भूलों पर उसकी दृष्टि ही नहीं जाती। दूसरों का व्यवहार देखने में उसकी सजगता रहती है, किन्तु अपने द्वारा कृत अविनीत अथवा दोषपूर्ण व्यवहार के प्रति उसकी दृष्टि ही नहीं जाती। कभी ऐसा भी होता है कि व्यक्ति अपने व्यवहार के द्वारा दूसरों को जानबूझ कर तंग करता है, उसे परेशान करता है अथवा चिढ़ने के लिए मजबूर करता है एवं फिर उसके चिढ़े हुए व्यवहार का मज़ा लेकर उसे दोषी होने का प्रमाण-पत्र देता है। कभी अशान्त व्यक्ति दूसरे को भी शान्ति से नहीं जीने देता एवं वह किसी न किसी बहाने दूसरों को भी अशान्त बनाता रहता है। दूसरे के सुख-चैन से ईर्ष्या होना इसका प्रमुख कारण है। मनुष्य को दूसरे के सुख-चैन से ईर्ष्या होती है- यह भी उसके दुःख का कारण है। इससे स्वयं के सन्तोष एवं शान्ति पर आघात होता है तथा व्यक्ति अशान्त बनकर अपेक्षाकृत सुखी की कमियां ढूंढने में निरत हो जाता है। यह उसे ज्ञात नहीं है कि संसार में पूर्णतः सुखी कोई भी नहीं है। सबके साथ कोई न कोई दुःख लगा हुआ है। किसी का दुःख हमें दृष्टिगोचर होता है, किसी का नहीं। हम बाहर के साधनों से किसी के सुखी एवं दुःखी होने का अनुमान करते हैं, किन्तु उनकी मानसिक दशा, पारिवारिक तनाव, व्यापारिक तनाव, कार्यक्षेत्र के तनाव आदि का हम अनुमान नहीं कर पाते हैं। दुःख का सम्बन्ध जितना बाहर से नहीं, उतना भीतर से है। सब प्रकार के बाह्य साधन प्राप्त होने पर भी व्यक्ति डिप्रेशन (अवसाद) में आ सकता है, अनेकविध रोगों से आक्रान्त हो सकता है। जो भी इच्छाओं के भार से आक्रान्त है तथा बाहर में सुख ढूँढ रहा है, वह दुःखी ही है, सुखी नहीं।

व्यक्ति को अपने दोषों में ही सुख की प्रतीति होती है। निन्दा करने के दोष वाला व्यक्ति जब तक किसी की निन्दा नहीं करता तब तक उसका चित्त हलका नहीं होता एवं वह सुख का अनुभव नहीं करता। क्रोधी स्वभाव का व्यक्ति जब तक किसी पर क्रोध नहीं करता तब तक उसे चैन नहीं मिलता। मायावी आदत वाला व्यक्ति जब तक माया का, छलकपट का आचरण नहीं करता, तब तक उसकी खुजली दूर नहीं होती। इसी प्रकार लोभी व्यक्ति को लाभ का चस्का रहता है। लाभ होने पर उसे सुख का अनुभव होता है तो हानि होने पर दुःख की प्रतीति होती है।

वास्तव में वस्तु में न कोई सुख होता है और न कोई दुःख। सुख-दुःख का अनुभव हम करते हैं। यह हमारी दृष्टि एवं अनुभूति पर निर्भर करता है। जो हमें ज्ञानेन्द्रियाँ प्राप्त हैं, उनसे हमें विषयों का ज्ञान होता है, वह विषयज्ञान हमें मनोज्ञ या प्रिय लगता है तो हम उनका निरन्तर अधिक समय तक सेवन करना चाहते हैं और इस तरह वे ज्ञानेन्द्रियाँ भोगेन्द्रियों के रूप में कार्य करने लगती हैं। वह भोग भी हमें एक बार बोर करने लगता है, किन्तु हम उसे पुनः भोगने की इच्छा से युक्त हो जाते हैं। जो विषयभोग मनोज्ञ या प्रिय लगता है उसे हम बार-बार सेवन करना चाहते हैं तथा जो विषयभोग अमनोज्ञ या अप्रिय लगता है, उसका संयोग हमें दुःख का अनुभव कराता है। उससे हमें एलर्जी हो जाती है। उदाहरण के लिए जो मिठाई का स्वाद हमें मनोज्ञ अनुभव होता है, उसको खाने की इच्छा आगे भी बनी रहती है, किन्तु किसी व्यक्ति के मिलने पर हमें अच्छा अनुभव नहीं होता है, तो पुनः उसके मिलने से हम बचना चाहते हैं। यदि मिल भी जाए तो पूर्व अनुभव के कारण उसके मिलने पर अप्रियता का अनुभव करते हैं। इन्द्रियजन्य ज्ञान, मनोजन्यज्ञान एवं बुद्धिजन्य ज्ञान के आधार पर ही हम प्रायः अपने अनुकूल विषयों, व्यक्तियों एवं अवस्थाओं की कामना करते हैं एवं उनके मिलने पर सुख का अनुभव करते हैं तथा इनके प्रतिकूल होने पर उनका संयोग हमें दुःख की प्रतीति कराता है। सुख-दुःख का यह मनोविज्ञान हमारे जीवन की दिशा का नियन्त्रक बन जाता है।

इन्द्रियजन्यज्ञान की अपेक्षा बुद्धिजन्यज्ञान महत्त्वपूर्ण होता है, जो कई बार हमें इन्द्रियजन्यज्ञान के प्रति उत्पन्न रुचि की परीक्षा करने की प्रेरणा करता है। रसनेन्द्रिय से ज्ञात स्वाद के वशीभूत होकर हम जब खाने में अति करते हैं तो बुद्धि रोकती है कि स्वस्थ रहना है तो अत्यधिक खाना उचित नहीं। बुद्धि से हम

अनेक समस्याओं का समाधान खोजते हैं तथा रचनात्मकता को प्रश्रय देते हैं। मानव-व्यवहार में हम बुद्धि का भी खूब प्रयोग करते हैं। व्यापार, उद्योग, अध्यय-अध्यापन, प्रबन्धन,अंकेक्षण, न्याय-निर्णय आदि सभी क्षेत्रों में बुद्धि का उपयोग होता है। किन्तु बुद्धि का उपयोग भी दो प्रकार का हो सकता है। एक हमारे स्वार्थ की पूर्ति में तथा दूसरा न्याय-नीति के निर्णय में। जब स्वार्थ की पूर्ति में अथवा भोगों की प्राप्ति एवं मोह में बुद्धि लग जाती है तो वह न्याय-नीति के पक्ष को प्रश्रय नहीं देती। मोह मनुष्य की बुद्धि को दोषग्रस्त बना देता है। फिर बुद्धि निष्पक्ष नहीं रहती। वह मोह से संचालित होती है। वह कभी विकास की अपेक्षा विनाश में प्रवृत्त हो जाती है। आंतकवादियों की बुद्धि इसी प्रकार कार्य करती है। वे विनाश में उसी प्रकार बुद्धि लगाते हैं जिस प्रकार कोई एडवोकेट गलत केस को जिताने में बुद्धि का प्रयोग करता है।

मोहग्रस्त बुद्धि भोगों की ओर आकर्षित करती है तथा सच्चे ज्ञान पर आवरण डाल देती है, जबकि बुद्धि का नियन्त्रक यदि विवेक हो जाए तो बुद्धि निष्पक्ष रीति से सही-सही कार्य करने में समर्थ होती है। विवेकवती बुद्धि सत् एवं असत् का भेदज्ञान कराती है। वह मोहनिर्मित मिथ्या मान्यताओं से ऊपर उठने की प्रेरणा करती है।

विवेकयुक्त बुद्धिवाला व्यक्ति ही अपने दोषों को ठीक से देखने में समर्थ होता है एवं दूसरों को व्यर्थ में दोषी ठहराने की रुचि नहीं रखता। उसे परदोषों के देखने में रुचि नहीं होती, अपितु अपने रत्तीभर दोष को देखकर भी उससे रहित होने के लिए व्यथित हो जाता है। उसे संसार के स्वरूप का सही दर्शन होता है, क्योंकि उसकी दृष्टि मिथ्या से सम्यक् बन जाती है।

आज व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सजग है, किन्तु कर्त्तव्य के प्रति नहीं। जो मात्र अधिकारों का ध्यान रखता है, कर्त्तव्य का नहीं, वह कभी दूसरे के प्रति न्याय नहीं कर सकता। जो दूसरों के अधिकारों की रक्षा के प्रति सजग है वही न्यायपूर्ण व्यवहार करता है एवं अपने कर्त्तव्य का निर्वाह सम्यक् प्रकार से कर पाता है। परिवार में भी प्रत्येक सदस्य का कोई न कोई अधिकार होता है, उसका पहचानना एवं उसकी रक्षा करना अपने कर्तव्य में समाहित है। सबको यथायोग्य सम्मान एवं उनकी समीचीन आवश्यकताओं की पूर्ति हमारे पास उपलब्ध संसाधनों के अनुसार करनी चाहिए। सम्यक् संस्कार प्राप्त करना भी बालकों का अधिकार होता है एवं माता-पिता का यह कर्तव्य होता है कि वे

सत्संस्कार प्रदान करें, उनके लिए योग्य शिक्षा की व्यवस्था करें। उनके आत्म-सम्मान को सुरक्षित रखें। समाज में प्रत्येक सदस्य को योग्य आदर मिले, यह उसका अधिकार है एवं उसकी रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। समाज को हम अपने आचरण से दूषित न करें, यह भी हमारा कर्तव्य है। इस प्रकार कर्तव्यों के प्रति सजगता आवश्यक है। यह सजगता आत्महित एवं परहित दोनों के लिए उपयोगी है। अपने द्वारा यथा शक्ति कर्तव्य का निर्वहन हमें निर्दोष बनाने में सहायक होता है तथा दूसरे भी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।

यद्यपि राजकीय न्याय के अनुसार अपराधी या दोषी को दण्डित किया जाना आवश्यक है, किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से विचार किया जाए तो अपराधी एवं दोषी व्यक्ति के प्रति भी द्वेष नहीं होना चाहिए। वे सच में तो क्षमा एवं प्रेम के पात्र होते हैं। उनको क्षमा एवं प्रेम करने से अपने में निर्वैरता एवं निर्दोषता आती है। किन्तु सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए दण्ड-व्यवस्था भी आवश्यक है। इसलिए भीतर से द्वेष, क्रोध आदि न रखकर समाजहित में कदाचित् दण्ड प्रदान करना भी आवश्यक है। न्यायाधीश कई अपराधियों के लिए दण्ड की घोषणा करता है, किन्तु उनसे द्वेष नहीं करता। समाज में वैसे अपराध पुनः न हों, दण्ड-विधान के द्वारा यह संदेश जाता है। पूर्णतः सुन्दर समाज तो वह है जहाँ किसी को दण्ड देने की आवश्यकता ही न पड़े। वह समाज कितना सुन्दर हो सकता है, जहाँ पुलिस, न्यायालय एवं अस्पताल खाली पड़े रहें एवं उनकी संख्या न्यून होती रहे।

दण्डविधान ही न्याय नहीं है। दूसरे के अधिकारों की रक्षा एवं अपने कर्तव्य का पालन भी न्याय है। ऐसा न्याय परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के सभी स्तरों पर लागू होता है। हम हमारी इच्छाओं को जितना सीमित करेंगे, संग्रह एवं परिग्रह की बुद्धि में पारदर्शिता लायेंगे उतना ही हम दूसरे के साथ न्याय करने में समर्थ बनेंगे। इसके साथ ही हम इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि को आँख मूंदकर भोगों में नहीं लगायेंगे तथा विवेक का उपयोग करेंगे उतना ही हम संसार में न्याय कर सकेंगे। तब हम मनुष्य के अधिकारों की ही नहीं, प्राणिमात्र के जीने के अधिकार की रक्षा करने में सक्षम बन सकेंगे। बुद्धि को मोह से ग्रस्त न रखकर उसे विवेक सम्मत बनाने में ही न्याय की रक्षा है। मोह हमें किंकर्तव्यमूढ़ बनाता है तथा उसके कारण अन्याय एवं अत्याचार को बल मिलता है, अतः पूर्ण न्याय की ओर अग्रसर होने के लिए मोह पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न आवश्यक है।

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

विनय-समाधि

थंभा व कोहा व मयप्पमाया, गुरुस्सगासे विणयं न सिक्खे।
सो चेव उ तस्स अभूइभावो, फलं व कीयस्स वहाय होइ।।

जे यावि मंदित्ति गुरुं विइत्ता, डहरे इमे अप्पसुएत्ति णच्चा।
हीलंति मिच्छं पडिवज्जमाणा, करंति आसायणं ते गुरुणं।।

पगईए मंदा वि भवंति एगे, डहरा वि य जे सुयबुद्धोववेया।
आयारमंता गुणसुट्ठिअप्पा, जे हीलिया सिहिरिव भासकुज्जा।।

जे यावि नागं डहरं त्ति णच्चा, आसायए से अहियाय होइ।
एवायरियं पि हु हीलयंतो, णियच्छइ जाइपहं खु मंदो।।

आसीविसो वा वि परं सुरुट्ठो, किं जीवनासाउ परं नु कुज्जा।
आयरियपाया पुण अप्पसण्णा, अबोहि-आसायण णत्थि मुक्खो।।

पद्यानुवादः-

जो गर्व क्रोध माया प्रमाद वश, सीखे न विनय निज गुरुजन से।
हो उसका नष्ट ज्ञान वैभव, जैसे कीचक फल लगने से।।

जो निज गुरु को मंद बाल, एवं अल्पश्रुत जान उसे।
आशातना और अपमान करे, भव हेतु मिले मिथ्यात्व उसे।।

होते हैं प्रकृति मंद कोई, श्रुत बुद्ध कई बालक होते।
आचार निष्ठ गुण-दृढ हीलन, पा अग्नि समान गुण भस्म करते।।

जो जान नाग का शिशु है यह, करता अपमान अहित होता।
ऐसे गुरु के अपमान किये, नर मन्द विविध दुःख को पाता।।

हो परमक्रुद्ध अहि जीवन का, करता विनाश कुछ और नहीं।
पर रुष्ट गुरु के होने पर, आशातना अबोधि से मोक्ष नहीं।।

-दशवैकालिक सूत्र, नौवाँ अध्ययन, प्रथम उद्देशक, सूत्र-1-5

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

कषाय

- एक घर नहीं, एक ग्राम नहीं, एक नगर नहीं, घर-घर में क्रोध, मान, माया, लोभ और विषय-कषायों के दुष्परिणामों के दृश्य प्रतिदिन देखने को मिलते हैं। आप में से प्रायः प्रत्येक को इसका कटु अनुभव अवश्य होगा। जिस दिन आप क्रोध के अधीन रहे, उस दिन आपका चिन्तन ठीक तरह से नहीं चला, सामायिक समभाव से नहीं हुई, स्वाध्याय में मन लगा नहीं, किसी भी कार्य में ठीक तरह से चित्त लगा नहीं और बिना बीमारी के बीमार हो गये। इस प्रकार क्रोध, मान, माया, लोभ में आसक्ति का कटु फल न केवल एक-दो बार ही, अपितु अनेक बार भोग चुकने के उपरान्त भी पुनःपुनः उन्हीं विषय-कषायों से प्यार करते रहे तो निश्चित रूप से यही कहा जाएगा कि हमारा ज्ञान भ्रान्त है, मिथ्या है।
- आपने किसी पर क्रोध किया तो क्रोध करते ही आपने सर्वप्रथम अपने आत्मगुणों की हिंसा कर डाली। क्रोध करने पर क्या किसी के मन में, मस्तिष्क अथवा हृदय में शान्ति रहेगी? नहीं, क्रोध करते ही यह गुण नष्ट हो जाएगा। क्रोध करने से हो सकता है कि दूसरे की हिंसा न हो, पर स्वयं की हिंसा तो तत्क्षण असंदिग्ध रूप से हो ही जाती है।
- क्रोध, मान, माया, लोभ आदि में फंस कर प्राणी सर्वप्रथम स्वयं की, आत्मा की हिंसा करता है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि से हमारी स्वयं की हिंसा हो रही है, यह हमने सम्यक् रूप में जाना नहीं है, इसीलिए बार-बार इस रास्ते पर लग रहे हैं। यदि हम विषय-कषायों के आत्मघाती भयावह परिणामों को समीचीनतया समझ लें, तो फिर इस रास्ते पर कभी लगेंगे ही नहीं।
- पुलिस का आदमी 303 बोर राइफल से किसी के शरीर पर ही फायर करता है, किन्तु क्रोध, मान, माया, लोभ के सिपाही तो आत्मगुणों की अमूल्य निधि पर फायर कर उसे विनष्ट कर देते हैं। पुलिस के सन्तरी द्वारा किये गए फायर से किसी व्यक्ति के शरीर के किसी भाग में चोट लग सकती है। उसका हाथ टूट सकता है। पैर टूट सकता है और कदाचित् किसी भाई का इस जन्म का शरीर भी छूट सकता है। किन्तु विषय-कषायों, क्रोध, मान, माया, लोभ के संतरियों द्वारा किये गये फायरिंग से भले ही किसी का इस जन्म में हाथ, पैर अथवा गला न भी कटे, पर उसके अनेक जन्म-जन्मान्तरों तक के लिए, असंख्य काल और यहाँ तक कि अनन्तानंत काल तक के लिए भी हाथ, पैर, नाक, कान, मुख कट सकते हैं अर्थात् उसका निगोद में पतन हो सकता है, तिर्यंच, नारकादि गतियों में अधोगमन हो सकता है।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

जीवों के रक्षण में बनें सजग

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. द्वारा रविवार दिनाँक 24 जुलाई, 2011 को सामायिक-स्वाध्याय भवन, पावटा, जोधपुर (राज.) में फरमाए गए प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन मेहता, सह-सम्पादक, जिनवाणी ने किया है। **-सम्पादक**

आत्म-रमण करने वाले सिद्ध भगवन्त, अभयदाता, ज्ञानचक्षुप्रदाता अरिहन्त भगवन्त, अभय के इसी मार्ग पर तीन करण तीन योग से चलने वाले संत भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन!

तीर्थंकर भगवान महावीर की आदेय-अनमोल वाणी में धर्म के मूल सूत्र आचारांग के माध्यम से अज्ञान हटाने की प्रेरणा दी जा रही है। दुःखों का मूल अज्ञान, अविद्या या अविवेक बताया जा रहा है। अपने शरीर के रक्षण में अथवा दूसरे शब्दों में विनाशी जड़ के रक्षण में हम जितनी सावधानी बरत रहे हैं, जितने सचेष्ट हैं और विवेकवान बन रहे हैं, आत्मगुणों की हानि में उतनी ही बड़ी नादानी कर रहे हैं। अपने शरीर की थोड़ी-सी पीड़ा हमें सहन नहीं हो रही है। परिणामस्वरूप इस विनाशी की थोड़ी-सी सहूलियत के लिए थोड़े-से आराम के लिए, असंख्य-अनन्त जीवों की घात किए जा रहे हैं। कहने के लिए कहा जा रहा है-

धम्मो मंगलमुक्किट्ठमहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो।।

अहिंसा-संयम-तप रूप धर्म उत्कृष्ट है, मंगल है। कहा तो यही जा रहा है, पर न अपने जीव की रक्षा हो रही है, न दूसरे जीवों की घात बचाई जा रही है, धोखेबाज की रक्षा के लिए विश्वासी को घर से निकाला जा रहा है। दगा देने वाले दोस्त को घर में रखकर साथ निभाने वाले मित्र को घर से बाहर किया जा रहा है। आत्मा की उपेक्षा कर शरीर के सुख को प्रधानता दी जा रही है। यह मानते हुए कितना ही अच्छा खिलाया जाय, कितनी ही सावधानी रखी जाय, यह शरीर साथ रहा नहीं, रहेगा नहीं। क्या आप सब इस तथ्य को जानते

हैं? क्या आपको भरोसा है कि शरीर साथ रहेगा? यदि नहीं तो हमारी क्रिया में उसका प्रभाव क्यों नहीं? हम किस कारण नादानी कर रहे हैं? यह चिन्तन का विषय है।

सचित्त के त्याग को लेकर आपके सामने विषय का विवेचन रखा जा रहा है। यह मात्र धर्मस्थान के लिए नहीं, इस स्थानक में प्रवेश करने के लिए नहीं, अपितु जीवन के हर क्षेत्र में अपनाने के लिए है। यह बात विवेक जगाने के लिए कही जा रही है। हमारी जो कार्यप्रणाली है, हमारा जो व्यवहार है चाहे वह खाने का है, पहनने का है, रहने का है, शरीर की लज्जा निवारण के लिए किया जाने वाला वसन है, उन सबमें छः काय के जीवों को अपने समान मानना एवं समझना है- ''अप्पसमे मण्णेज्ज छप्पिकाए।''

मैं जीना चाहता हूँ, इसी तरह सब जीव जीना चाहते हैं। मुझे दुःख प्यारा नहीं, इसी तरह किसी को दुःख इष्ट नहीं। मैं अहंकार के मद में जानबूझकर अथवा अविवेक असावधानी से ऐसी कोई क्रिया नहीं करूँ जिससे एक, अनेक, असंख्य, अनन्त जीवों को पीड़ा का अनुभव होता हो। अपनी रक्षा का सूत्र जैसे अपने लिए ठीक है, उसी तरह अन्य-अन्य जीवों के प्रति अपनाया जाय, तो बहुत बड़े पाप से बचा जा सकता है, बहुत बड़े बन्धन से अपना बचाव किया जा सकता है।

हिंसा सबसे बड़ा पाप है। आप हँसी-हँसी में, खेल-खेल में, स्वाद के वशीभूत होकर जो भी हिंसा कर रहे हैं उससे बढ़कर कोई पाप नहीं है। व्यवहार दृष्टि में हिंसा से बड़ा कोई पाप नहीं, निश्चय दृष्टि में मिथ्यात्व सबसे बड़ा पाप है।

आचार्य भगवन्त (पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी महाराज) के भावों के अनुसार कहूँ- भगवन्त फरमाया करते थे अगर आपकी माँ आप पर दया नहीं करती, आपका रक्षण नहीं करती, स्वयं दुःख पाकर भी आपको कष्ट नहीं हो, ऐसा प्रयास नहीं करती तो यह सामायिक कौन करता? ध्यान कौन करता? प्रवचन कौन सुनता? उपवास-बेला-तेला-अठाई कौन करता? जन्मते ही माँ गला घोंट देती तो आज आप जो क्रियाएँ कर रहे हैं कौन करता? आप हैं तो माँ की दया के बल पर। जन्मने के पहले से माँ आप पर दया कर रही है। ध्यान रहे मैं जन्मने के पहले की बात कह रहा हूँ। अर्थात् आप जब माँ के पेट में थे तभी से दोस्त, साथी, मास्टर, सहयोग देने वाला कोई भी क्यों न हो,

सबसे पहले दया के संस्कार किसने दिए? क्या कह कर संस्कार दिए? क्या माँ ने कभी कहा कि मैं तेरे रक्षण के लिए कष्ट उठा रही हूँ?

आपको क्या समझ में आ रहा है? दूसरों की पीड़ा देखकर, दूसरों के कष्ट देखकर आपके मन में कष्ट या पीड़ा का अनुभव होता रहा है या नहीं? अगर आपको पीड़ा का अनुभव नहीं होता तो मानकर चलिये धर्म में अभी पहला चरण तक नहीं रखा है। आप नोट कर लें दुनियाँ के दूसरे-दूसरे पाप जीवन में रहते हुए समाप्त किए जा सकते हैं। अगर आपने किसी लोभ-लालच में झूठ बोल दिया तो भी बुरा है। झूठ बोलना पाप है। झूठ पाप तो है ही, विश्वास घटाने वाला है, सुख-चैन उड़ाने वाला है, भरोसा समाप्त करने वाला है। झूठ बोलकर किसी को पीड़ा पहुँचाई, समझ में आ जाने पर पश्चात्ताप कर लिया जाय तो शायद किए हुए झूठ के पाप की धुलाई हो सकती है। आप कह सकते हैं- मैंने परिस्थितिवश, नादानी से, लाचारी के कारण, विशेष आवश्यकता होने से किसी का धन लूट लिया, किसी का माल हड़प लिया, किसी की रकम निकाल ली। शास्त्र कहता है- अगर उसे ब्याज सहित वापस दे दिया जाय तो शायद चोरी का पाप भी धुल सकता है। कहने वाला कह सकता है- भाई! मेरे पर भूत सवार हो गया, मुझे ध्यान नहीं रहा और गुस्सा आ गया। क्रोध कई कारणों से आ सकता है, आपकी बात नहीं मानने पर, हानि हो जाने पर, किसी के द्वारा तिरस्कार कर दिए जाने पर, जिस पर आपका राग है उसे पीड़ा देने पर, आदि कई कारणों से गुस्सा आ सकता है। पर चिन्तन करने की बात यह है कि अमुक बात नहीं मानी तो गुस्सा आ गया, लेकिन आपने क्या भगवान की बात भी मानी? भगवान ने क्रोध की विनाशलीला दिखाते हुए कहा कि क्रोध वह भयंकर आग है जिसमें सारे गुण नष्ट हो सकते हैं। करोड़ वर्ष तक तप करके गुस्सा करने वाला तप के लाभ को गवां बैठता है। अमुक ने बात नहीं मानी तो गुस्सा आ गया, लेकिन आपने क्या गुरु की बात मानी, भगवान की बात मानी, शास्त्र की बात मानी? जब तुमने भगवान, गुरु, शास्त्र की बात जो तुम्हारे हित के लिए, सुख के लिए थी उसे भी नहीं माना तो आप ऐसे कौनसे छत्रपति हो, देव-देवेन्द्र हो, राजा-महाराजा हो जो आपकी हर बात मान ली जानी चाहिये। तूने गुरु की ही नहीं, भगवान की बात नहीं मानी। उन्हें उनकी बात न मानने पर गुस्सा नहीं आया तो तुम्हें कैसे गुस्सा आ गया? कदाचित् समझो गुस्सा आ भी गया, सामने वाला नाराज हो गया,

बोलना बंद हो गया, लेकिन इस क्रोध की आग को बढ़े हुए वैर को नाराजगी को भी समाप्त किया जा सकता है। आप हाथ जोड़कर, क्षमायाचना करके, माफी मांग सकते हैं और शायद माफी मांगने पर सामने वाला क्षमा भी कर सकता है। क्रोध का पाप साफ हो सकता है, धुल सकता है।

अहंकार में आकर आपने किसी का अपमान कर दिया, तिरस्कार कर दिया- लेकिन यह पाप भी धुल सकता है। इसी तरह कपट किया, षड्यंत्र, निंदा, चुगली आदि कितने ही पाप करके भी पश्चात्ताप की आग में विनम्रता से सही-सही बात बता देने के बाद उस पाप का कचरा यहीं जलाया जा सकता है, इसी जन्म में भोग कर समाप्त किया जा सकता है। परन्तु किसी जीव के प्राण हर लिये, उसे मार दिया तो क्या वह पाप धुल सकता है? प्राण रहित जीव के प्राण क्या भगवान से विनति करके भी लाए जा सकते हैं? हिंसा का पाप कैसे छूटेगा? याद रखें- इसी प्रभु महावीर की वाणी आचारांग सूत्र में स्पष्ट कहा है कि- मारने वाले को मरना पड़ेगा, काटने वाले को कटना पड़ेगा, दुःख देने वाले को दुःख भोगना पड़ेगा। जैसा करोगे, वैसा भरना होगा। प्राण ले लेने के बाद फिर से प्राण दिए नहीं जा सकते। आपमें चाहे जो मंत्र-तंत्र-शक्ति है, फिर भी प्राणरहित जीव में प्राण वापस नहीं लाये जा सकते।

हिंसा सबसे बड़ा पाप है। आप अपना चिन्तन करें कि हर दिन हमसे कितनी-कितनी हिंसा होती है? रोज एक नहीं अनेकानेक जीवों की हिंसा हो रही है। वह हिंसा का पाप नवकार मंत्र की माला फेरने से, पाँच सामायिक कर लेने से, महीने में दो-चार दया कर लेने से, उपवास, अठाई ही नहीं मासक्षपण तप से भी छूटने वाला नहीं है। वासुदेव के भव में शय्यापालक के कान में शीशा डलवाकर मारने का पाप भगवान महावीर के पूर्व राजा के भव में हजारों मासक्षपण करने पर भी समाप्त नहीं हुआ। साधु बनने के बाद भी कानों में कीलें ठुकाकर ही समाप्त हुआ, जबकि उनकी सेवा में असंख्यदेव रहते थे, परन्तु कर्म के उदय होने पर एक भी देव नहीं आया।

आज कितने जीवों की घात हो रही है, इसका हिसाब तो लगाओ। महाराज कभी एक दिन दया कर लेने वाले को दूसरे दिन दया करने की कहे तो जबाब मिलता है- बाबजी! काले तो करी, मने ही मने क्यूँ कहो। लेकिन पाप करते भी कभी मन में आता है कि कल इतनी हिंसा की, आज क्यों कर रहा हूँ?

आप अपना चिन्तन कीजिये, विवेक जगाइये। आपकी हर क्रिया में, आचरण में, पहनावे में, खाने में, पीने में न जाने कितनी-कितनी अनर्थ की हिंसा हो रही है, इसका भी कोई विचार नहीं। दीक्षा-प्रसंग पर आपने सुना होगा, गौतम मुनि जी ने एक बात कही थी- संसार में दुःख है इसलिये मैं दीक्षा नहीं ले रहा हूँ। मेरे कारण संसार में रहते हुए दूसरों का दुःख मिटाया जा सके, अर्थात् मेरे द्वारा दूसरों को दुःख नहीं हो, इसलिए दीक्षा ले रहा हूँ। आपको कोई मारे तो कैसा लगे? और आप किसी को मारो तो....? आपके तो सुई भी बिना विवेक के लग जाय तो गुस्सा आ जाय। डॉक्टर इंजेक्शन देता है, चीरफाड़ करता है, आपके हित के लिए, रोग मिटाने के लिए, पीड़ा कम करने पर वह भी अविवेक से सीधी सूई घुसेड़ दे तो डॉक्टर पर भी गुस्सा आ जाता है। दाढ़ी बनाने वाला केश उतारने के बजाय चमड़ी उतार दे तो क्या दूसरी बार उसके पास जाओगे?

झूठ, चोरी की तरह पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु वनस्पति के जाने कितने-कितने जीवों की घात हो रही है। जब तक जीव हिंसा नहीं छोड़ेंगे, आप आराम कैसे पायेंगे? बबूल का बीज बोकर आम कैसे मिलेंगे?

आचार्य भगवन्त (आचार्य हस्ती) फरमाते थे- खाने को पहले भी गृहस्थ खाते थे, पेट भरने को खाते थे, पर आज खाने के तरीके कुछ अलग हो गये। हरी शाक छीलने का तरीका पहले अलग था, आजकल तोरु हो या भिण्डी उसका पेट चीर कर मसाला भरकर खाया जाता है। यह खाना स्वाद के लिए है। वरना खाने के लिए कहा जाता है- उतरा घाटी, हुआ माटी। आज नौकरों से काम करवाया जाता है, नौकरों के काम करने का तरीका आपकी तरह विवेक वाला नहीं हो सकता। वनस्पति के जीवों की क्या हालत की जाती है। आपको कोई इसी तरह शल्य क्रिया करते समय डिजाइन करे, ऊपर की चमड़ी उतारकर नई चमड़ी लगावे, अंग को आलू की पपड़ी की तरह समान भाग से काटे, आपको कैसा लगेगा?

सचित्त का विवेक क्या? यह विवेक क्या स्थानक तक के लिए है? सचित्त का विवेक स्थानक के लिए तो है ही, आपके हर व्यवहार में होना चाहिये। पहले धर्मस्थान में बहिनों को कहा जाता था कि छोटे बच्चों के कारण व्याख्यान में बाधा न आए इसका उपयोग रखना। आज बहिनों के बच्चे कम हैं, लेकिन आपकी जेबों में जो खुनखुना (मोबाइल) हर दम रोने की आवाज

निकालता रहता है। कभी कोई भाई ऊपर आया हुआ है, नीचे मोबाइल की घंटी बज रही है तो तुरन्त भागकर जाता है।

तत्त्वचिन्तक प्रमोदमुनिजी आपको अभिगम के माध्यम से समझा रहे हैं। आपके मन में जब तक अपने समान दूसरे जीवों को समझने की बात नहीं आयेगी तब तक हिंसा से विरक्ति होगी नहीं। संसार में जो काम पहले दिमाग से चलता था, आज कम्प्यूटर से किया जा रहा है। जोड़-बाकी-गुणा-भाग सब कुछ कम्प्यूटर करता है।

लोग कहते हैं पर्यावरण दूषित हो रहा है। पर्यावरण दूषित किससे हो रहा है? ये बिजली के जितने भी संयंत्र हैं, पैट्रोल से चलने वाले जितने भी साधन हैं वे सब पर्यावरण को दूषित कर रहे हैं। पहले धर्मस्थान में पैदल चलकर आया करते थे, आज पास में से सब्जी लानी हो तो स्कूटर चाहिये। पाँव से चलना नहीं चाहते। क्या आपको कोई बीमारी है? क्या इतनी कमजोरी है कि आप 2-4 फर्लांग भी चल नहीं सकते? फिर होकर बीमारी को क्यों बुला रहे हो? क्यों घुटने जाम कर कुर्सी पकड़ रहे हो?

धर्म का स्वरूप अहिंसा-संयम-तप में कहा गया है। सभी प्राणियों पर दया करना सर्वश्रेष्ठ धर्म है। यह अहिंसा-दया जीवन के हर व्यवहार में आयेगी तो आप कम से कम अनर्थ के पाप से बचकर अल्पारम्भी भी बन सकेंगे। सचित्त का विवेक धर्मस्थान के लिए तो है ही, जीवन के हर क्षेत्र में इसका उपयोग हो, ऐसी मंगल भावना है। ■

एक ही समाधान

एक बार स्वामी विवेकानन्द जब विदेश में थे, एक करोड़पति ने अपनी तीन समस्याएँ बताते हुए कहा-"स्वामीजी! मेरी पहली समस्या यह है कि मुझे नींद नहीं आती, दूसरी यह है कि मेरे मित्रों से मेरे शत्रुओं की संख्या कहीं अधिक है और मेरी तीसरी व प्रमुख समस्या यह है कि मेरी इच्छाएँ पूर्ण नहीं हो रही हैं, जिसके कारण मैं अक्सर दुःखी रहता हूँ। स्वामी जी ने बड़ी विनम्रता से कहा-'महाशयजी! ये तीनों समस्याएँ केवल आपकी ही नहीं हैं, बल्कि अधिकांश लोग इन्हीं व्याधियों से पीड़ित हैं। भैया! यदि आप सुखी रहना चाहते हैं तो तीनों समस्याओं का एक ही उपाय बताता हूँ- 'आज से अपनी कामनाओं को कम करते जाओ।'

प्रवचन

सुपात्रदान की महत्ता

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. द्वारा 8 अगस्त, 2011 को नागौर में फरमाए गए प्रवचन से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के कार्याध्यक्ष श्री सम्पतराज जी चौधरी द्वारा संकलित अंश। -सम्पादक

संत-संगति और सेवा से अपूर्व लाभ मिलता है। कहा गया है कि मोक्ष के चार द्वार हैं- क्षमा, संतोष, सरलता और नम्रता। ये चारों मार्ग निर्ग्रन्थ गुरुओं की सेवा से ही प्राप्त होते हैं। संत कोई चमत्कार नहीं करते, परन्तु उनकी सेवा से अनायास ही लौकिक अनुकूलताएँ मिल जाती हैं, जिसे भक्तजन चमत्कार का नाम दे देते हैं। वस्तुतः लौकिक अनुकूलताओं का मिलना कोई चमत्कार नहीं है, परन्तु त्यागी गुरुओं की भक्ति का अद्‌भुत प्रभाव होता है। उनकी सेवा, व्यक्ति के विचारों को पवित्र बनाती है। गुरु के प्रति विनय से संबोधि मिलती है। भोगों के प्रति ग्लानि के भाव जाग्रत हो जाते हैं। पदार्थ के प्रति ममत्व कम हो जाता है, अतः मन में परिग्रह का बोझ भी नहीं रहता। फलस्वरूप, जीवन में संतोषवृत्ति आ जाती है। संतोषी सदा सुखी रहता है, क्योंकि उसे भौतिक पदार्थों की प्राप्ति या उनके खोने में कोई उद्‌विग्नता नहीं होती। साधु का समागम संताप को दूर करता है, विचारों में पवित्रता लाता है और चित्तवृत्ति को संतोष देता है। संत समागम के सुअवसर का जो लाभ लेता है और उसमें जो प्रमाद नहीं करता है, उसे अलाभ का कोई भय नहीं होता है- न द्रव्य दृष्टि से और न भाव दृष्टि से।

संत-सेवा से चित्त में संतोषवृत्ति कैसे आ जाती है, इस बारे में एक छोटी सी घटना बता रहा हूँ। पूज्य पंडितप्रवर बड़े लक्ष्मीचन्द जी म.सा. रतलाम विराज रहे थे। वहाँ एक भाई नित्य सुपात्रदान की भावना भाकर गोचरी के समय महाराज साहब से अपने घर पधारने की विनति करता था। एक दिन पंडित जी महाराज साहब उसके साथ उसके घर गोचरी हेतु निकल पड़े। महाराज साहब उसके घर के रास्ते को नहीं जानते थे, अतः वह साथ-साथ चल रहा था। उसके मन में रह-रह करके विचार आ रहे थे कि वह बड़ा सौभाग्यशाली है कि महाराज साहब उसके घर पधार रहे हैं। इसी खुशी में डूबा

वह महाराज साहब के साथ अपने घर की ओर बढ़ रहा था। रास्तें में उसके हाथ में पहनी हुई एक मूल्यावान घड़ी, जिसके सोने का पट्टा था, कहीं गिर गई, पर उस वक्त उसे इसका भान ही नहीं हुआ। थोड़ा आगे गया तो अचानक देखा कि हाथ में घड़ी नहीं है। निश्चित रूप से रास्ते में वह कहीं पर गिर गई थी। उसने सोचा कि-''महाराज साहब को घर ले जाना जरूरी है और मैं यदि घड़ी खोजने पीछे जाऊँगा तो महाराज साहब घर कैसे जायेंगे? मैं उनके पधारने के लाभ से वंचित हो जाऊँगा।'' तुरन्त अपने मन में संतोष धारण कर वह यथावत् महाराज साहब के साथ चलने लगा। मन में कोई उद्विग्नता नहीं थी। घड़ी खोने का भी कोई गम नहीं था। बड़ी श्रद्धा से महाराज साहब को आहार बहराया और बड़ी प्रसन्नता से अपने मौहल्ले में अन्य लोगों के घर भी आहार के लिये ले गया। गोचरी के पश्चात् वह महाराज के साथ स्थानक गया और उन्हें वन्दन करके घर के लिये चल दिया। वह उसी रास्ते से जा रहा था। जब रतलाम के व्यस्ततम इलाके चाँदनी चौक में पहुँचा तो उसी समय वहाँ बैठी एक गाय खड़ी हुई। उसे देखकर उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा, क्योंकि जो गाय उठी उसी के नीचे उसकी घड़ी सुरक्षित पड़ी थी।

उस भाई ने सुपात्रदान के लाभ को समझ लिया था। अतः उसके आगे उसकी मूल्यवान घड़ी खोने पर भी उसे तनिक भी दुःख नहीं हो रहा था। साधु-संगति से विचारों में शुद्धि आती है और दुःख के कारणों का नाश होता है। भौतिक पदार्थों का लोभ नहीं रहा हो तो उनके खोने में दुःख भी नहीं होता है। सुपात्रदान से असीम पुण्यों का संचय होता है, उसमें भौतिक अनुकूलताओं का मिलना भी सहज ही है और नहीं भी मिले तो कोई दुःख भी नहीं होता। ■

अभिमत

श्री के.एस. गलुण्डिया

जिनवाणी (मई 2011) में आपका सम्पादकीय 'सद्गुणों की पूजा' पढ़कर बहुत अच्छा लगा। हम अंधी मान्यताओं, मूढ़ परम्पराओं और रूढ़िवादी नकारात्मक सोच से ग्रसित होकर चोंतरे चबूतरे व अन्य देवी-देवताओं की पूजा करते हैं तथा गलत अवधारणाओं के शिकार बन जाते हैं। समाज के लिए एवं हमारे युवा वर्ग के लिए यह लेख सही दिशा प्रदान करेगा।

-53, लेन नं. 2, गोपाल बारी, जयपुर (राज.)

प्रवचन

चातुर्मास की सफलता

मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. द्वारा दिनाँक 14 जुलाई, 2011 को नागौर चातुर्मास के प्रथम दिन फरमाए गए प्रवचन का संपादन श्री सम्पतराज जी चौधरी, दिल्ली ने किया है। **-सम्पादक**

धर्मानुरागी बन्धुओं!

जैन धर्म का अर्थ है-जिन प्रवर्तित कल्याण मार्ग। 'जिन' वे होते हैं जिन्होंने बाहरी और आन्तरिक सभी तरह के विकारों पर विजय प्राप्त करली है। आत्मा के सबसे प्रबल शत्रु हैं- रागद्वेष, मोहादि विकार। इन विकारों को नष्ट करने से आत्मा के सही स्वरूप की उपलब्धि होती है। साधना के जिस पथ पर चलकर जिनेश्वरों ने आत्मोपलब्धि की है, उस पथ का जो अनुसरण करता है, वह जैन है। सभी तीर्थंकरों ने इसी मार्ग की देशना दी है इसलिए इस धर्म का मूल सिद्धान्त बीज रूप में वही रहा है जो आज है और वह है आत्मवाद या अध्यात्म। यही कारण है कि जैन धर्म प्रारम्भ से ही अध्यात्म प्रधान धर्म रहा है। तीर्थंकर के रूप में आज प्रभु महावीर का धर्म शासन चल रहा है, जो इसी सिद्धान्त से अनुप्राणित है। महावीर के पश्चात् भी सभी जैनाचार्यों के चिन्तन में अध्यात्म ही केन्द्र में रहा। अध्यात्म की उर्वर भूमि पर ही जैन धर्म-परम्परा का कल्पवृक्ष फलता-फूलता रहा है। जैनत्व की यही पहचान आज भी अपने आप में एक विशिष्ट और प्रेरणास्पद आदर्श रूप में देखी जाती है।

हम अपने इतिहास पर एक दृष्टि डालते हैं तो हमें पता चलता है कि किस तरह हमारे त्यागी निर्ग्रन्थ अणगार आत्मशुद्धि को लेकर प्रतिबद्ध और लक्ष्य के प्रति समर्पित रहे। सचमुच प्रभु महावीर का सिद्धान्त एक विलक्षण और विशुद्ध दृष्टि लिए हुए है जहाँ ज्ञान और क्रिया का सुन्दर समन्वय है, जहाँ प्रचार का मूल्य नहीं आचार का मूल्य है, जहाँ संग्रह में नहीं त्याग में विश्वास है, जहाँ परायेपन की नहीं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भव्य भावना है, जहाँ कदाग्रह या एकांगी दृष्टि नहीं, अपितु अनेकान्त की प्रतिष्ठा है और जहाँ

भोग नहीं आत्म-योग ही लक्ष्य है। प्रभु महावीर ने जो मार्ग बतलाया और उस पर निर्बाध चलने के लिये जिन विधि-निषेधों को बतलाया उनके पीछे साधक के आत्महित का ही लक्ष्य रहा है। मार्ग पर चलने के उन विधि-विधानों में एक है, चातुर्मास कल्प यानी वर्षाकाल के चार महीनों के लिये श्रमण चर्या का विधान।

आप शायद जानते होंगे कि प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के शासन को छोड़कर बीच के बाईस तीर्थंकरों के शासनवर्ती श्रमण व श्रमणियों के लिए चातुर्मास यानी वर्षाकाल के चार महीनों के लिये कोई निश्चित विधान नहीं था। वर्षावास का विधान केवल प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के शासनवर्ती श्रमण व श्रमणियों के लिये ही है। मैं यहाँ पर एक बात स्पष्ट कर दूँ कि प्रभु ने दस कल्प बताए हैं, जिनमें चार कल्प तो सभी तीर्थंकरों के शासन में समान हैं, परन्तु छः कल्प अस्थित हैं। उन छः में एक चातुर्मास का कल्प भी है। आप सोच रहे होंगे कि ये छः कल्प जब बीच के बाईस तीर्थंकरों के शासन में आवश्यक नहीं थे तो प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के शासन में क्यों आवश्यक हैं? इस विषय में मैं अधिक विस्तार में न जाकर केवल इतना ही बताना चाहता हूँ कि मध्य के बाईस तीर्थंकरों के शासनवर्ती श्रमण प्राज्ञ और ऋजु होते थे। वे सैद्धान्तिक आशय को सम्यक् रूप से समझकर उसी प्रकार से अपने आचार धर्म का पालन करते थे। अनेकान्त के प्रकाश में वे ज्ञान को समझते और फिर बिना किसी संशय या तर्क बुद्धि के आत्मशुद्धि की साधना में सजग रहते। प्रथम तीर्थंकर के शासनवर्ती श्रमण ऋजु और जड़ होते थे, परन्तु अंतिम तीर्थंकर के शासनवर्ती श्रमण वक्र और जड़ होते हैं। इस कारण दोनों ही तीर्थंकरों के शासन काल में आचार धर्म के सम्यक् पालन के लिए विधि-विधान का होना आवश्यक है। इन्हीं विधि-विधानों में एक है, चातुर्मास कल्प, जिसकी चर्चा आज के प्रवचन में की जा रही है।

वैसे मैं बता दूँ कि विहारचर्या में संतों का नवकल्पी विचरण होता है। चातुर्मास के चार महीनों के लिये एक कल्प होता है और शेषकाल के आठ महीनों के लिए एक-एक मास के आठ कल्प होते हैं। साधु के विषय में आपने एक बहुत ही सार गर्भित दोहा सुना होगा-

बहता पानी निर्मला, पड़ा गंदला होय।
साधु तो रमता भला, दाग न लागे कोय।।

इस दोहे में एक गहरी अनुभूति की अभिव्यक्ति है और मार्मिक प्रेरणा भी है। अध्यात्म के क्षेत्र में अनुभवी साधकों ने इस दोहे के माध्यम से संयम की निर्मलता बनाये रखने के लिए गहरी सीख का एक अमूल्य सूत्र दिया है कि साधक-जीवन में तो व्यक्ति रमता ही भला होता है, ताकि उसकी आसक्ति संसार में नहीं बढ़े और उसका संयम निर्दोष रहे। प्रभु का सिद्धान्त भी ऐसा ही है। प्रभु ने यहाँ तक कहा है कि जिस स्थान पर शेष काल में साधु एक मास तक ठहरे तो उसे आगे के दो मास तक उस स्थान पर जाना नहीं कल्पता है। इसी तरह जिस स्थान पर चार महीने के लिये वर्षावास किया हो तो अगले दो चातुर्मास किन्हीं दूसरी जगहों पर करने होंगे। इन नियमों के पीछे साधक के निर्दोष संयम पालना का ही उद्देश्य है।

बात चल रही थी कि जिस तरह से बहता पानी निर्मल रहता है उसी तरह से विचरण करते हुए साधु का संयम भी निर्मल रहता है, तब प्रभु ने वर्षाकाल में एक ही जगह चार महीने रहने का विधान क्यों किया? भगवान् के विधि-निषेध के सिद्धान्त बड़े ही गहरे, सूक्ष्म और आत्महित की दृष्टि से बनाये गये हैं। साधु के आचार का मूल अहिंसा है। अहिंसा उसका पहला और मुख्य महाव्रत है और बाकी के चार महाव्रत भी उसी महाव्रत की रक्षा और पोषण के लिये हैं। अतः प्रभु के हर विधान के पीछे अहिंसा धर्म की पालना का उद्देश्य अनिवार्य रूप में होता है। अहिंसा सभी शास्त्रों का उत्पत्ति स्थान है। जैसे सभी नदियाँ समुद्र में आकर मिल जाती है वैसे ही सब धर्म अहिंसा में समा जाते हैं। अतः अहिंसा सभी धर्मों का धर्म है। बिना इसकी पालना के संयम निर्दोष रह ही नहीं सकता। प्राणिमात्र के लिये जब तक मन में करुणा और मैत्री की भावना नहीं जगेगी तब तक धर्म की शुरुआत ही नहीं हो सकती। साधु का लक्ष्य आत्मोपलब्धि होता है। इसको प्राप्त करने के लिये कैसी भी कठोर साधना करलें, अनुष्ठान करलें, आप अपने परमात्म-स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकते जब तक कि आपके मन में सभी प्राणियों के लिये आत्मभाव नहीं होगा। हमने सुना है कि जब बारात जाती है तो दूल्हे के अलावा भी सभी बारातियों का स्वागत और खातिरदारी घरातियों को दिल खोलकर करनी होती है जबकि घरातियों का मुख्यरूप से सम्बन्ध दूल्हे से ही होता है। बारातियों का स्वागत करना दूल्हे के साथ शादी करने के लिये आवश्यक है अन्यथा बिना शादी के बारात लौट भी जाती है। इसी तरह साधक का मुख्य

लक्ष्य तो अपना आत्मस्वरूप प्राप्त करने का होता है, परन्तु यदि उसके मन में प्राणिमात्र के प्रति प्रेम, अपनत्व या आत्मभाव नहीं रहा तो वह अपने आत्मस्वरूप की प्राप्ति से भी वंचित ही रहेगा।

आज प्राणियों के प्रति हमारी संवेदना शून्य होती जा रही है। राह चलते किसी घायल व्यक्ति या अन्य प्राणी को देखकर लोग अनजान बनकर निकल जाते हैं। हमें उसकी पीड़ा की कोई अनुभूति नहीं होती है। सुनामी, बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाओं के समय भी संकटग्रस्त लोगों की सहायता करने में टीका टिप्पणी तो खूब करेंगे, परन्तु उनके दुःखों को कम कर राहत पहुँचाने में निष्क्रिय रह कर सरकार पर अकर्मण्यता का दोष मढ़ते रहेंगे। दूसरों की पीडा देखकर भी अनुकम्पा की चेतना जागृत नहीं होती है। सम्यग्दृष्टि तो पानी की एक बूंद का उपयोग करता है, तो भी उसकी अन्तरात्मा काँपती है। वह सोचता है कि "हे प्रभो! वह दिन कब आयेगा जिस दिन मैं अणगार धर्म को प्राप्त कर छः काया के जीवों की रक्षा करता हुआ अभयदाता बनूँगा।" एक मुमुक्षु आत्मा ने दीक्षा लेते समय एक मार्मिक बात कह दी जो हृदय को झकजोर देने वाली है। उसने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि मैं संसार इसलिए नहीं छोड़ रही हूँ कि संसार में दुःख है, अपितु इसलिए छोड़ रही हूँ, क्योंकि जीवों को दुःख दिये बिना संसार में रह नहीं सकती। इसे कहते हैं अनुकम्पा की चेतना जिसमें पर पीड़ा को देखकर हृदय प्रकंपित हो जाता है और उसकी पीड़ा दूर करने के भाव आते हैं। भगवान् ने कहा है कि सारे दुःख हिंसा से ही प्रारम्भ होते हैं। पर-पीड़ा में रत जीव अन्धकार से अन्धकार की ओर ही जाते हैं। भगवान् ने कहा है कि ज्ञानी होने का सार है किसी की हिंसा न करो। जो हिंसा से उपरत है वही प्रज्ञावान है।

बात स्पष्ट है कि छः कायों की रक्षा एक मात्र अणगार धर्म में ही होती है। इसी संदर्भ में मैं आपसे पूछता हूँ कि जब कोई व्यक्ति श्रमण दीक्षा लेता है तो सबसे ज्यादा खुशी किसको होती है? आप सोच रहे होंगे कि स्वयं को या गुरु को या उस धर्म संघ को जिसमें वह दीक्षित हो रहा है। पर ऐसा सोचना सही नहीं है। दीक्षा के समय सबसे ज्यादा खुशी छः काया के जीवों को होती है, क्योंकि दीक्षा लेने वाला सब प्राणियों की रक्षा करने का संकल्प लेता है। प्रभु ने कहा है- अभयदान सर्वश्रेष्ठ दान है। परन्तु मुझे बड़े अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि उन्हीं दीक्षित त्यागी निर्ग्रन्थ गुरुओं के अनुयायी आज

प्राणिरक्षा में संवेदनहीन ही नहीं, दिशाहीन हैं तथा हिंसा के कार्यों से परहेज नहीं करते हैं। एक जमाना था जब अहिंसा जैनियों की पहचान थी। उस समय लोग कहते थे कि यकीन (विश्वास) देखना हो तो मुसलमानों को देखो, भक्ति देखनी हो तो वैष्णवों की देखो और दया देखनी हो तो जैनियों की देखो। पर आज वह जैनत्व की पहचान खण्ड-खण्ड होती जा रही है। एक समय था जब श्रावक कोई हरी सब्जी खरीद कर लाता था तो उसे ढ़ककर लाता था, ताकि उसे देखकर दूसरों को हरी सब्जी लाने की प्रेरणा न मिले। जीव रक्षा में वे इतना विवेक रखते थे। यह तो विवेक की एक छोटी सी बानगी है। इतिहास उठाकर देखेंगे तो ऐसे अनगिनत उदाहरण मिल जायेंगे।

जैनियों की वर्तमान जीवन शैली को देखते हैं तो बड़ा दुःख होता है। उनके घरों में पानी का बड़ा दुरुपयोग हो रहा है। हमको एक गाँव में ठहरने का मौका मिला। मैं जब रास्ते से गुजर रहा था तो मार्ग में खूब पानी नाली में बह रहा था जिससे रास्ते में बहुत कीचड़ हो गया और वहाँ से निकलना भी कठिन हो गया। मेरे मुँह से निकल पड़ा कि लोग व्यर्थ में ही कितना पानी बहाकर उसका दुरुपयोग करते हैं। पास में खड़े किसी जैनेतर व्यक्ति ने सुन लिया और तुरन्त बोल पड़ा-"महाराज साहब, सबसे ज्यादा पानी का अपव्यय तो आपके ये जैन लोग ही करते हैं। इनको कुछ समझाओ तो सही।" मैं निरुत्तर हो गया, क्या जवाब देता? यह एक सच्चाई है। दूसरी ओर प्राणिमात्र की रक्षा के लिये श्रीमती मेनका गाँधी जो जैन कुल की नहीं है, इतने काम कर रही है कि हजारों जैन मिलकर भी इतने काम नहीं कर सकते। हाल ही में चौधरी सा. ने समाचार पत्रों में प्रकाशित एक समाचार के हवाले से बताया कि भारत सरकार के रक्षा विभाग ने सैनिकों के लिए एक विशेष किस्म के छः लाख जोड़ी जूतों के आर्डर दिये हैं जो केवल गायों को काटकर उनके चमड़े से बनाये जायेंगे क्योंकि मृत जानवर के चमड़ों से वैसे जूते नहीं बन सकते। पता चलते ही श्रीमती मेनका गाँधी ने रक्षा मंत्री श्री ए.के.अन्थोनी को पत्र लिखकर उस पर अपना तीव्र विरोध जताया और उस आर्डर को निरस्त करने का दबाव डाला। उसने अनेक तर्कों और कानून के हवाले से कहा कि गायों को मारना कानूनन अपराध है, अतः यह खरीद बंद नहीं की तो न्यायालय में मामला ले जाया जायेगा। रक्षामंत्री ने उसकी बातों से सहमत होकर उस आर्डर को रद्द कर दिया। श्रीमती मेनका गांधी के इन कार्यों से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है।

भगवान् ने आगम शास्त्रों में जगह-जगह अहिंसा और करुणा की मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए करुणा प्रधान जीवन जीने की प्रेरणा दी है।

भगवान् ने पानी की एक बूंद में असंख्यात जीव बताये हैं। इसी बात को कवि ने कहा है-

पाणी एकण बूंद में, जीव कह्या जिनराय।
सरसों सम काया करै, जम्बूद्वीप न समाय।।

अर्थात् पानी की एक बूंद में इतने जीव हैं कि यदि प्रत्येक जीव अपने शरीर का आकार सरसों के दाने के बराबर बनालें तो वे सब जम्बूद्वीप में भी नहीं समा सकते हैं। अतः एक बूँद पानी व्यर्थ करने में कितने जीवों की विराधना होती है, सोचिये तो सही! हर प्राणी जीना चाहता है, मरना कोई नहीं चाहता। हर प्राणी सुख चाहता है, दुःख कोई नहीं चाहता। जो अपने सुख-दुःख को अनुभव करता है उसे दूसरों के भी सुख-दुःख को अनुभव करना चाहिए। अपने समान ही दूसरों को भी समझना चाहिए। हम किसी को प्राण दे नहीं सकते तो हमें प्राण हरण करने का क्या अधिकार है। कुछ लोग तो प्रयोजन से हिंसा करते हैं, और कुछ लोग बिना प्रयोजन भी हिंसा करते रहते हैं। पानी के अपव्यय की बात हो, चाहे हरी वनस्पति या जमीकन्द की बात हो, जीव दया के विषय में जैनत्व का गौरव क्षीण हो रहा है, क्योंकि पदार्थों के उपयोग में विवेक की कमी हो गई है। पहले के जमाने में जिस दिन घरों में हरी सब्जी नहीं बनती उस दिन सहज ही में परिजनों को पता चल जाता कि आज अष्टमी है या चतुर्दशी। मगर आज उन तिथियों में ऐसी पालना नहीं होने से अष्टमी, चतुर्दशी का भान ही नहीं होता। रेल की यात्रा में कोई सूर्यास्त के पहले भोजन करने लगता था तो पास में बैठा यात्री पूछ बैठता कि क्या आप जैनी हैं? पर वैसी बात अब कम ही देखने में आती है। अब तो शादी समारोहों में भी रात्रि भोजन और जमीकन्द का उपयोग धड़ल्ले से हो रहा है। हाँ, हमने सुना है कि शादी के निमन्त्रण पत्रों में भोजन के लिये यह लिखा जाता है- "सूर्यास्त के पहले भोजन की व्यवस्था है।" देखना यह है कि सूर्यास्त के पहले कितने व्यक्ति भोजन के लिये आते हैं। मुझे कहने की कोई आवश्यकता नहीं है, आप मेरे से ज्यादा जानते हैं। जैनत्व की यह पहचान धीरे-धीरे समाप्त हो रही है। कारण स्पष्ट है- अहिंसा के बारे में हमारा विवेक शून्य जीवन।

मैं आपको एक प्रश्न पूछूँ? (सभा में उपस्थित एक श्रोता से प्रश्न) ''आपके परिवार में कितने सदस्य हैं?'' उत्तर मिला-'सात' व्यावहारिक दृष्टि से आप ठीक हैं, पर साथ ही मुझे यह कहना पड़ेगा कि ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की अवधारणा वाले देश और धर्म में हमने अपना परिवार केवल सात सदस्यों तक ही सीमित कर रखा है। भावना तो यह होनी चाहिए कि प्रत्येक जीव मेरे कुटुम्ब का सदस्य है, कोई पराया नहीं। जब तक प्राणिमात्र के लिये अपनत्व की यह भावना मन में नहीं आयेगी, तब तक जीव रक्षा की भावना भी कैसे पनपेगी? हृदय की संकीर्णता से व्यक्ति संवेदनहीन और करुणा विहीन हो गया है।

प्रभु ने जो चातुर्मास का विधान किया है, उसमें जीव रक्षा और उससे मुनि धर्म की पालना का लक्ष्य ही प्रमुख है। चातुर्मास अहिंसा महाव्रत की पालना के लिए ही है। अहिंसा की पालना केवल मुनिजनों के लिए ही नहीं, प्रत्येक व्यक्ति के लिये भी जरूरी है, क्योंकि धर्म की शुरुआत अहिंसा से ही होती है। चातुर्मास में सहज ही लम्बे समय तक संतों का एक जगह ठहरना होता है। संत सान्निध्य का यह अवसर व्यक्ति और समाज दोनों के लिये वरदान स्वरूप है। जिस गति से जीवन शैली बदल रही हैं, खान-पान बदल रहा है, पहनावा बदल रहा है, व्यसन और अन्य विकृतियाँ बढ़ रही हैं, पूर्वजों के संस्कारों का अंतिम संस्कार हो रहा है, संस्कृति में घुन लंग रहा है, ऐसे में अपने संयमित ज़ीवन से उन विकृतियों से मुक्ति दिलाने में एक मात्र आशा की किरण संत ही हैं। आज तो माँ-बाप भी अपनी संतान को उनके दोष बताकर उनसे दूर रहने के लिये या तो कहने में डरते हैं या वे स्वयं इसके शिकार हो गये हैं। ऐसे में संत ही बिना किसी भय या लाग-लपेट के विकारों को दूर करने की बात कह सकते हैं। उनका आदर्श जीवन भी एक अद्‌भुत प्रभाव डालता है। धर्म-संघों का भी पूरा प्रयास होना चाहिए कि संत-सान्निध्य समाज के लिये वरदान बने। ऐसे ठोस कार्यक्रम होने चाहिए कि धार्मिक गतिविधियाँ अबाधगति से चलती रहें और संत-समागम का अमिट प्रभाव समाज पर पड़े। इस काल में सामायिक, स्वाध्याय, धार्मिक पाठशाला, धार्मिक संगोष्ठियाँ आदि के कार्यक्रम शुरु करने चाहिए और उन्हें आगे भी दृढ़ इच्छा-शक्ति के साथ निरन्तर चलाना चाहिए। इससे समाज में एक धार्मिक वातावरण बनता है और व्यक्ति कुपथ पर जाने से बचता है।

मुझे बड़े खेद के साथ कहना पड़ता है कि जिन करणीय कार्यों से चातुर्मास की सौरभ चहुँ ओर फैले, वैसा नहीं हो रहा है। अक्सर देखा जाता है कि समय और शक्ति का नियोजन आडम्बर, प्रदर्शन और फिजूल खर्ची में ज्यादा हो रहा है। इससे प्रदर्शन की प्रतिस्पर्धा भी बढ़ती है और धन का अपव्यय होता है। सुनकर आश्चर्य होता है कि चातुर्मास में दर्शनार्थियों की व्यवस्था में तीनों समय अनेक मिठाइयाँ बनती हैं, शाही अन्दाज में आवागमन की और ठहरने की व्यवस्था होती है। त्यागी निर्ग्रन्थ मुनियों के चरणों में अगर त्याग और वैराग्य का पाठ पढ़ना है तो इन सबके चलते संयम-पोषण, व्रत-प्रत्याखान और विकारों से मुक्ति का लक्ष्य कैसे सधेगा? व्यवस्था में सादगी बरतनी चाहिए। गुरुदेव फरमाते थे कि चातुर्मास में दर्शनार्थियों के प्रवाह को रोका तो नहीं जा सकता, पर उस प्रवाह का उपयोग संयम-पथ में मोड़ने में किया जा सकता है ताकि संत दर्शन और साधना का उपहार वे अपने साथ लेकर जा सकें। गुरुदेव ने इन्दौर चातुर्मास के दौरान अपने एक प्रवचन में, जिसे आप 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ में पढ़ सकते हैं, चातुर्मास में करणीय कार्यों के लिये उचित एवं सारगर्भित मार्ग-दर्शन दिया है। आप उसे अवश्य पढ़ें।

चातुर्मास की सफलता इससे नहीं होती कि कितने दर्शनार्थी आये, बल्कि इस बात से होती है कि इस काल में कितने व्रती बने, कितनों ने शीलव्रत ग्रहण किया, कितनों ने प्रतिक्रमण सीखा, कितनी तपस्याएँ हुईं, संवर हुए, पौषध हुए। एक जमाना था जब अष्टमी और चतुर्दशी के दिन स्थानक दयाव्रत और संवर करने वालों से भरे रहते थे। परन्तु आज तो दयाव्रत केवल दस्तूर बनकर रह गया है। सात या आठ प्रहर का दयाव्रत कम ही देखने को मिलता है। कुछ लोग तो ऐसी प्रेरणा भी दे देते हैं कि दया जितने समय की रहे उतनी ही अच्छी। ऐसी सोच व्रत का विकृत रूप प्रस्तुत करती है। ऐसा कहने वालों से मेरा एक प्रश्न है कि सामायिक अड़तालीस मिनट की होती है तो क्या बीस मिनट सामायिक करके भी कह सकते हैं कि जितनी देर की हुई, यानी बीस मिनट की हुई तो वह भी अच्छी? संयम यावत् जीवन के लिये लिया तो क्या उसमें भी कह देंगे कि जितने दिन तक पाला उतना ही अच्छा? जब सामायिक अड़तालीस मिनट की ही हो सकती है तो दयाव्रत भी सात या

आठ प्रहर का ही हो सकता है, उससे कम का नहीं। हाँ, जिनको शारीरिक या गृहस्थ जीवन की अनुकूलता सात या आठ प्रहर की न हो तो वे संवर कर सकते हैं, जिसके लिये कोई समय सीमा निश्चित नहीं है।

दया और संवर का जो माहौल पहले देखने को मिलता था, वह अब बहुत कम हो गया है। अब तो बस प्रवचन में भीड़ हो गई तो चातुर्मास को सफल मान लिया जाता है।

अतः चातुर्मास की सफलता न भीड़ से आँकनी है और न ही वहाँ की व्यवस्था से। अक्सर दर्शनार्थियों की टिप्पणियाँ सुनने को मिलती हैं कि अमुक जगह टोप व्यवस्था थी और खूब लोग आते थे। मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि चातुर्मास एक अमूल्य अवसर है और उसका उपयोग ऐसा होना चाहिए कि वह जीवन सुधार का यादगार अवसर बन जाये। चातुर्मास में अहिंसा धर्म की रक्षा तो मुख्य होती ही है, पर साथ ही यह ज्ञान-प्राप्ति, तपस्या, प्रवचन-प्रभावना और संघ-संवृद्धि का भी सुन्दर अवसर बने, इसका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। अहिंसा धर्म की परिपालना केवल धार्मिक स्थान में ही नहीं, जीवन व्यवहार के नित्यप्रति के कार्यों में भी होनी आवश्यक है। अहिंसा पालन का विवेक न केवल खान-पान में ही रखना चाहिए, अपने पहनावे में, सौन्दर्य प्रसाधन का उपयोग करने में, चलने में, उठने में, बैठने में सभी जगह रखना चाहिए। अभी मैं इसकी चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। यथा समय आपके बीच इस विषय में चर्चा करने के भाव रखता हूँ। परन्तु मोटेरूप में हम वस्तुओं के उपयोग में पूर्ण विवेक रखने का प्रयास करें तो हमारे जीवन में अहिंसा के सुन्दर कुसुम खिलेंगे जिनकी सुवास आपको ही नहीं, आसपास के लोगों को भी सुवासित करेगी। मैं मानता हूँ कि गृहस्थ जीवन में पूर्ण अहिंसा का पालन सभव नहीं है, लेकिन आप अनर्थदण्ड से तो बच ही सकते हैं। यदि अहिंसा में हमारा विश्वास होगा तो फैशन आदि की हिंसा से तो बच ही सकते हैं।

चातुर्मास जीवरक्षा के साथ रत्नत्रय की साधना का एक अनमोल अवसर है। दुर्गुणों को दूर कर सद्गुणों की स्थापना कर जीवन की दशा और दिशा बदलने का अवसर है। इसका आप सदुपयोग करेंगे तो हमारा यह चातुर्मास भी आपके लिए सार्थक हो जायेगा। ■

प्रवचन

कर लें भजन

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. द्वारा आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी शनिवार दिनाँक 16 जुलाई, 2011 को सामायिक-स्वाध्याय भवन, धर्मनारायण जी का हत्था, पावटा, जोधपुर (राज.) में फरमाए गए प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन मेहता, सह-सम्पादक, जिनवाणी ने किया है। -सम्पादक

भक्ति के रहस्य को हृदयंगम कर, भक्ति कं रंग में रंगकर, भक्त से भगवान बनने वाले अनन्त-अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और वीतराग भगवन्तों द्वारा प्ररूपित इस वीतराग वाणी के अवलम्बन से उसी भक्ति में- उसी भजन में लवलीन बनने वाले संघ के नायक आचार्य भगवन्तों के चरणों में वन्दन के पश्चात्.....।

भजन क्या है? वह कैसे बने? अनुभवियों की भाषा में सेवा, त्याग और प्रेम का नाम है- भजन। हम तो रोज भजन बोलते हैं, सुबह प्रार्थना करते हैं उनमें ये शब्द सेवा, त्याग, प्रेम तो हमारे ध्यान में नहीं आये। कौनसी सेवा, कौनसा त्याग, किनसे प्रेम। कर्म से सेवा करें, अचाह होकर ममता रहित बन जायें, प्रभु से अपनेपन की अनुभूति करें, तब सिद्ध होता है- भजन।

हम कल गुरुपूर्णिमा के प्रसंग से भक्त के विषय में जान रहे थे। जो विभक्त न हो वह भक्त कहलाता है। वह तो भजन करता ही रहता है। 67 बोल में आया- हृदय की कोमल वृति को विनय कहते हैं। अरिहन्तों का विनय, सिद्धों का विनय, आचार्यों का विनय। चौथे बोल में शुद्धि तीन में आया- विकृत श्रद्धा के निराकरण से शुद्धि होती है। उसके भी 3 भेद बताये- मन से वीतराग देव का, सुगुरु का ध्यान करें, विनय से गुणगान करें और काया से वन्दन करें, नमस्कार करें। उत्तराध्ययन 30.32 में भक्ति को भी विनय के अन्तर्गत कहा। 20.58, 29.4 में भी यह शब्द आया है।

हम जिस अध्यात्म की चर्चा कर रहे हैं, उसमें वीतराग वाणी का प्रत्येक विधान आध्यात्मिकता को पुष्ट करने वाला है। आप यहाँ निस्सिही ...निस्सिही बोलकर आते हैं तब बाहरी चीजों को गौण करते हैं तथा आत्म-

साधना करने के लिये उपाश्रय में प्रवेश करते हैं। बाहर से भीतर में आना अर्थात् भजन करना। बाहर का कितना भी क्यों न मिले, जीव की इच्छाएं पूरी हुई नहीं, होगी नहीं। वह चाहे चक्रवर्ती सम्राट बने, इन्द्र बने अहमिन्द्र बने इससे इच्छाएं पूर्ण नहीं होगी। नौ ग्रेवेयक तक जीव अनन्त बार, 5 अनुत्तरविमान के 10 भेदों को छोड़कर जीव के 563 भेदों में से 553 भेदों में कोई भेद बचा नहीं जहाँ पर इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया है।

रंगभूमिर्न सा काचित् शुद्धा जगति विद्यते।
विचित्रैर्कर्मनैपथ्यैर्यत्र जीवैर्न नाटितम्।।

संसार की रंगभूमि में ऐसी कोई जगह नहीं, जहां कर्मों के कारण जीव ने नाटक न किया हो। भगवती सूत्र शतक 12 उद्देशक 7-दृष्टान्त रूप से बता रहा है। कोई बकरियों के बाड़े में बकरियों को ठूंस-ठूंसकर भरे। बाड़े में क्षमता से ज्यादा बकरे भर दिये जायें, छः महीने तक बकरे वहाँ रह गये, उस बकराशाला में वहाँ काम करने वाले से पूँछे- क्या इस बकराशाला में कोई ऐसी जगह है जहाँ बकरों की मींगणी नहीं पड़ी हो।

इस जग के प्रदेशों में नहीं एक भी बच पाया,
मृत्यु जिनपे हैं अनन्त, यह जीव न कर आया,
और कालचक्र का भी, नहीं वक्त एक खाली,
आत्म का हितकारी, संयम है सुखकारी,
पथ मुक्ति श्रेयकारी, दीक्षा है दुःखहारी।।

पुनर्जन्म को लेकर कई मान्यताओं में अन्तर है। ईसाई पुनर्जन्म नहीं मानते। मुस्लिम मान्यता में पुनर्जन्म नहीं होता। पर ईसाई और मुसलमान भी अप्रत्यक्ष रूप से पुनर्जन्म का समर्थन कर बैठते हैं। बचपन में सांसारिक पिताश्री के साथ रेलगाड़ी में यात्रा का एक प्रसंग। वे पुनर्जन्म को नहीं स्वीकारते, पर फिर भी सांसारिक पिताश्री की ईसाई पादरी से चर्चा हुई तो ज्ञात हुआ कि वे हैल एण्ड हैवन की बात करते हैं। Day of Judgement की चर्चा करते हैं। क्रबों में से रूहों को निकालकर उनके कर्मों (Deeds) के अनुरूप स्वर्ग-नरक में भेजने का विवेचन प्रस्तुत करते हैं- यह पुर्नजन्म नहीं तो और क्या है? मुसलमान भी बोलते हैं कयामत का दिन। वे जन्नत और दोजख को मानते हैं। कान को सीधा नहीं पकड़कर घुमा कर पकड़ते हैं।

भगवती सूत्र स्पष्ट कर रहा है- णत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे

जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा ण मए वावि....। परमाणु पुद्गलमात्र भी कोई ऐसा प्रदेश नहीं है जहां यह जीव उत्पन्न न हुआ हो अथवा मृत्यु को प्राप्त न हुआ हो।

आचारांग सूत्र कह रहा है- सबसे पहले यह जब तक भरोसा नहीं जगेगा कि मैं कहाँ से आया हुआ हूँ, तब तक अन्तर की चेतना, चिन्मयता प्रतीत नहीं होगी। आदमी सोचता है- खाओ, पीओ, मौज करो। Eat, Drink & be Marry यह बात बचपन में सुनी थी। आज Drink, Dance & Dinner नामकरण हो गया है।

दुनियाँ में एक छत्र राज्य चलता है तो चलता है चार्वाक दर्शन का। बैंक से लोन लो, फैक्ट्री में मशीन के फर्जी बिल लो, फिर कुछ दिनों में सारा चौपट कर भाग जाना। 1996 में एक घोटाले का पर्दाफाश हुआ जिसमें लोगों से प्रभावशाली ब्याज दर पर धन एकत्र किया गया। जमा करने में 100 रुपये पर 30 रुपये का खर्चा। एजेन्टों को, बिचोलियों को कमीशन आदि दिए गए। 100 रुपये जमा पर ऊँचे ब्याज का प्रलोभन होने से खूब रुपये जमा हुए। परिणाम क्या होना था, दिख ही रहा था- सब कुछ लेकर, रफूचक्कर। यह वीतराग दर्शन तो नहीं। नाम से वह भले ही जैन हो, पर यह तो चार्वाक दर्शन का ही अनुसरण है।

यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

भोगी और दुराचारी हृदयहीन होते हैं, वे निर्दय और हिंसक बन जाते हैं। ऐसे व्यक्ति भजन के अधिकारी नहीं। क्या हो रहा है शादियों में? शादी की वर्षगांठ पर प्रदर्शन, दिखावा, आडम्बर कितना हो रहा है। पाँच-पाँच लाख रुपये बिसलरी पानी पर खर्च हो जाते है। हरी लॉन, लाइटिंग, 100-125 तरह की खाद्य सामग्री। यह वीतराग दर्शन है या चार्वाक दर्शन? अनेक लोगों ने जो रेलवे से रिटायर हो गये थे, अपने जीवन भर की पूँजी लगाई, वे सब कंगाल हो गये। पुलिस विभाग में हत्या, डकैती, लूटमार, मारकाट के जितने भी केस आते हैं उनमें गुप्तचर प्रायः जैन को दोषी नहीं मानते, दूसरे-दूसरे लोगों पर शक जाता है। बड़े शर्म के साथ कहना पड़ता है कि पुलिस विभाग के बड़े अधिकारी कहते हैं हत्या, डकैती, लूटमार में जैन पर कभी हमारी दृष्टि नहीं जाती, पर जहाँ भी आर्थिक क्राइम होता है सबसे पहले हमारी नज़र जैन पर पड़ती है।

क्यों? यह जैन की बुद्धि का दुरुपयोग नहीं है क्या? वह वीतराग है उपासक या चार्वाक उपासक?

बुद्धि ताहि सराहिये, जो सेवे जिन धर्म।
वा बुद्धि किण काम की, बैठा बांधे कर्म।।

यह जैन समाज पर लांछन है। प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक साधक अपने जीवन में तय कर ले कि हम जिस भजन या आचारांग सूत्र की बात कर रहे हैं वह आस्तिकता की परिचायक है। कहीं से मैं आया हूँ। शरीर तो यहीं बना है। वह शरीर से अतीत है और सच्चा भजन आस्था, श्रद्धा, विश्वास होने पर ही हो सकता है। बाहर में जो भी हमारे साथ हो रहा है, वह हमारे साथ घटित हो रहा है।

पहला उद्घोष है आस्था, श्रद्धा, विश्वास। आत्मा है 'अटति पर्यायात् पर्यायान्तरं गच्छति इति आत्मा' एक पर्याय से दूसरी पर्याय को प्राप्त होती है आत्मा। वह तो सिद्ध भगवन्त की भी होगी, पर वह द्रव्यात्मा उपयोगात्मा, दर्शनात्मा और ज्ञानात्मा स्वरूप है। उसके लिये ही हम भजन की बात से चर्चा को प्रारम्भ कर चुके हैं। उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन 2 गाथा 44-45 में परमात्मा के सम्बन्ध में कहा है-

अभू जिणा अत्थि जिणा अदुवा वि भविस्सइ।
मुसं ते एवमाहंसु इइ भिक्खू ण चिंतए।।

परमात्मा पर शंका, आत्मा पर शंका उचित नहीं। किसने देखा जिनेश्वर थे, जिनेश्वर हैं अथवा जिनेश्वर होंगे? इस तरह भिक्षु शंका न करे। कौन जानता है? ये शंकाएं व्यर्थ हैं, क्योंकि कर्म का फल सबको मिलता है। कोई बोलता है कयामत का दिन, इन्साफ का दिन, Day of Judgement, नरक-स्वर्ग में भेजने की बारी-

करम प्रधान विश्व करी राखा।
जो जस करही सो तस फल चाखा।।

भजन कब बनेगा? आस्था श्रद्धा विश्वास होगा तब। आचारांग क्या कह रहा? कहां से आया? पूर्व से, दक्षिण से, पश्चिम से या उत्तर से- क्यों आया कषाय आत्मा, योग आत्मा है इसलिये आया। 'कर्मविज्ञान' पुस्तक में एक दृष्टान्त है-

साबरमती, अहमदाबाद में डिस्ट्रिक्ट एण्ड सैशन जज थे। रोज प्रातः

सूर्योदय से पूर्व नदी किनारे भ्रमण करने, आवश्यक क्रिया करने जाते। उन्होंने प्रातः काल के धुंधले-धुंधले प्रकाश में एक दिन एक आदमी की हत्या कर भागते हुए हत्यारे को अपनी आँखों से देखा। उस हत्या के आरोप में गिरफ्तार किये गये व्यक्ति पर केस संयोग से उन्हीं की अदालत में चला। जिस व्यक्ति पर हत्या का आरोप था, उसने बिल्कुल हत्या नहीं की। जनता ने भी अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखा था। न्यायाधीश गवाह नहीं बन सकता। साक्ष्य, गवाह आदि से पूरी तरह साबित कर दिया गया कि हत्या इसी व्यक्ति ने की है। जज साहब के पास कोई तीसरा विकल्प नहीं। फाँसी या आजीवन कैद। दो में से कोई भी सजा। जजसाहब आस्तिक थे, कर्मसिद्धान्त में विश्वास रखते थे।

जज साहब ने उस आदमी को अकेले में अपने कमरे में बुलाया। कहा- भाई, मैं कानून से बंधा हूँ। तेरा अपराध सिद्ध हो गया। क्या तूने यह हत्या की? वह मुलजिम बोला- नहीं माई-बाप, मैंने बिल्कुल भी हत्या नहीं की। जज साहब जानते ही थे इस बात को। पुनः पूछा उन्होंने- तू ईमानदारी से बता कि इस हत्या के पहले तूने कोई हत्या की या नहीं? वह व्यक्ति बोला- जज साहब! मैंने पहले दो हत्याएं की, लेकिन चैक और जैक से दोनों बार ही बच गया।

जज साहब को पक्का विश्वास हो गया कि कर्म सिद्धान्त सही है। जज साहब जान रहे हैं मैंने अपनी आँखों से देखा है कि इसने हत्या नहीं की। परन्तु पहले पाप किया है, इसलिए आज इसे फांसी की सजा प्राप्त हो रही है। उस व्यक्ति ने ईमानदारी से कह दिया कि पहले मैं पैसे देकर बच गया। कर्म सिद्धान्त रसिक जज साहब की आस्था और दृढ़ हो गई। हम आस्तिक, भजन करने वाले क्या मान रहे हैं? वर्तमान में जो कुछ भी क्रियाकलाप हो रहा है उसमें मेरा कही-न-कहीं कोई पाप हुआ, अन्यथा मेरे जीवन में ऐसी घटना घट नहीं सकती।

जोधपुर में आने के साथ अनेक भक्तों की भावना रही कि यहाँ हर रविवार को ध्यान शिविर चलना चाहिये। हम ध्यान में इस चीज को लेने की कोशिश करेंगे। हम आत्मा में पहुँचे। नैतिक व्यक्ति आध्यात्मिक भी हो सकता है और नहीं भी हो सकता। पर आध्यात्मिक व्यक्ति कभी अनैतिक नहीं हो सकता। अध्यात्म अर्थात् आत्मा में, अन्तर में, अपने में साधक बनना है।

साधक बनने के लिए पहला सूत्र है- सबसे पहले भरोसा होना चाहिये कि मेरा जीवन इतना-सा नहीं है जो सामने दीख रहा है। मैं किसी भी स्थिति में रोना नहीं रोऊँगा। धन्धे में नुकसान हो, परिवार में प्रतिकूलता हो, शरीर में बीमारी हो, रोना नहीं रोऊँगा। मुझे इतना सा मिला- रोना नहीं रोऊँगा। मैं तो अस्वस्थ हूँ, ऐसा रोना नहीं रोऊँगा।

तीन व्यक्ति दुकान में आये। तीनों मित्र थे। बाहर निकलकर एक-दूसरे ने एक-दूसरे से पूछा- दुकान से क्या लेकर आए? पहला मित्र बोला- मैं एक लाख रुपये का सेट लेकर आया। दूसरे ने कहा- मेरी जेब में मात्र दस हजार थे, मैं सोने का आभूषण लाया। तीसरे ने कहा- मेरी जेब में मात्र पाँच सौ रुपये ही थे, मैं चांदी के जेवर लाया। अब अगर पाँच सौ रुपये वाला यह रोना रोए कि मैं रत्नों का आभूषण नहीं लाया तो उससे क्या होगा? जिसके पास जितनी पूंजी है, वह उतने का ही माल ला सकता है। पूंजी जितनी ही उतना ही तो सामान मिलेगा। मेरे पुण्य की पूंजी इतनी ही थी, यह सोंचें।

मुझे पहले मिला था, पर मैंने मिले का सदुपयोग नहीं किया। मुझे मनुष्य जन्म मिला, लेकिन मैंने उसे विषय-भोगों में पूरा कर दिया। मेरे पास एक करोड़ की पूँजी थी, पर मैंने किसी के आंसू नहीं पौंछे। मैंने घूमने-फिरने में, मौज-शौक में, बाल-बच्चों में खर्च कर दिये, पर मैंने यह कभी नहीं सोचा कि पड़ौसी के घर रोटी नहीं बन रही है, कभी अनुकम्पा का भाव तक नहीं आया, इसलिये मैं दुर्दशा में पड़ा हूँ। सेवा, त्याग और प्रेम का नाम है भजन। भजन में सेवा भी है, त्याग भी है, प्रेम भी है।

वीतराग दर्शन कह रहा है- प्रभु हैं, प्रभु सर्वश्रेष्ठ हैं, प्रभु अनन्त सुख के भण्डार हैं। प्रभु मेरे हैं। सबसे पहले यह आस्था होनी चाहिए। श्रद्धा और विश्वास होना चाहिये। जिससे आत्मीयता होती है उससे प्रीति लगती है जिससे प्रीति होती है, उसकी स्मृति होती है। प्रभु की सहज स्मृति होना भजन है। आस्था से ही भक्ति प्रस्फुटित होती है, भजन होता है। इससे सन्दर्भित शब्दों पर गौर करें। स्तुति, उपासना, प्रार्थना-पूजा आदि भजन के सूचक हैं। प्रभु की महिमा को स्वीकार करना स्तुति है। हम देख ही चुके प्रभु हैं, प्रभु सर्वश्रेष्ठ हैं, प्रभु अमित तृप्ति, अखण्ड, अनन्त, अक्षय रस वाले एवं निरबाध सुख वाले हैं- बस इसी का नाम है स्तुति। आस्था, श्रद्धा, विश्वास से होती है स्तुति।

आस्था, श्रद्धा, विश्वास से होता है भजन। उपासना – उप उपसर्ग पूर्वक आस् धातु से निष्पन्न शब्द है 'उपासना'। प्रभु से सम्बन्ध स्थापित करना। 'अरिहंतो मह देवो' अरिहन्त मेरे देव हैं। इन्द्रभूति गौतम फरमाते हैं, शकडालपुत्र श्रमणोपासक गोशालक को कहते हैं– मेरे धर्मोपदेशक धर्माचार्य। प्रभु से सम्बन्ध स्थापित करना। प्रभु मेरे हैं। हो गई आत्मीयता, हो गया भजन। तीसरा शब्द आया प्रार्थना। प्रभु प्रेम की आवश्यकता अनुभव करना प्रार्थना है। आनन्दघन जी अपनी चौबीसी के पहले ही भजन में ऋषभ प्रभु से प्रीतड़ी (प्रीति) की चर्चा कर रहे हैं। दशवैकालिक 8/38 में 'कोहो पीइं पणासेइ' वाक्य क्रोध को आत्म शत्रु मानकर प्रीति विनाशक कह रहा है। अर्थात् प्रीति आत्मा का नैसर्गिक गुण है। उसे ही प्रेम के नाम से भी कह दिया गया। जैनेतर बाने में भी जैन मत के अनुसार संथारा स्वीकार करने वाले आगमयुग के अम्बड़ संन्यासी की स्मृति को तरोताजा करने वाले भूदान नेता आचार्य विनोबा भावे जी ने भी कहा– "हे प्रभो! मैं आपका अतीत काल हूँ, आप मेरे भविष्य काल हो, वर्तमान में आपकी अनुभूति करूँ।" इसी का नाम है भक्ति।

शुद्ध वीतराग सिद्धान्त, शुद्ध जिन धर्म के प्रतिपादक भगवान का जीव भी अनादि काल से 4 गति 24 दंडक 84 लाख जीवयोनि में ही भटक रहा था। उनकी गणना भी मुक्तिमार्ग में समकित आने से ही तो होती है।

हम चौबीस तीर्थंकरों के इतिहास को पढ़ते हैं। नयसार के भव से महावीर का, धन्ना सार्थवाह के भव से ऋषभ देव का अधिकार चलता है। समकित आने के पहले कोई प्रमाण नहीं, कोई गिनती नहीं। जैन दिवाकर चौथमल जी महाराज ने कहा–

जब लग होती समकित आन।
तब से होता भव का प्रमाण।
बिन श्रद्धा शून्य समान।
पधारे पद्म प्रभु भगवान।।
करने जीवों का कल्याण।

एक तीर्थंकर प्रभु की स्तुति में महाराज ने सारे समकित का सार भर दिया। एक बच्चा दौड़ा–दौड़ा आया। मेरे सौ में से सौ में एक नम्बर कम आया। सौ में से सौ में एक कम, मतलब 99 नम्बर आये, मम्मी को भरोसा नहीं। 3 बार फेल हो चुका इस बार गणित में सप्लीमेंटरी परीक्षा दी थी, उसकी

अंकतालिका हाथ में थी। 100/100 थे जो एक कम कह रहा। वास्तव में 00/100 थे जो 1 कम सौ ही थे। एक नहीं तो.....? सारा जीवन जीरो में जा रहा है। आप चाहे जितनी सामायिक कर लें, प्रतिक्रमण कर लें, तपस्याएँ कर लें, पर धर्म रूपी वृक्ष की जड़ समकित है, धर्म रूपी प्रासाद की नींव समकित है, समकित नहीं तो ज्ञान नहीं। ज्ञान नहीं तो चारित्र गुण भी नहीं। चार्वाकवादी कह रहे हैं- परलोक किसने देखा है। खाओ, पीओ, मौज करो। यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्- गायली खा जाओ। साझेदार का माल दबा लो। सुना आपने स्मैक के शिकंजे में कॉलेज के छात्र फंस रहे हैं। यह दुर्दशा वीतराग के भक्तों की नहीं हो सकती।

आज से जीवन की तैयारी की शुरुआत करें। अपने लिए हाय-तौबा न करें। दूसरों के अधिकार का हनन हो रहा है। अनाप-शनाप इकट्ठा किया जा रहा है। धन की तीन ही गति बताई गई हैं- दान, भोग और नाश। जो देकर सदुपयोग नहीं करता, बैंक बैलेन्स बढ़ाता जा रहा है वह अपनी संस्कृति का विनाश कर रहा है, घर का नाश कर रहा है। बच्चे पॅब में, बॉर में एक हजार रुपये की एक ग्राम स्मैक में, जिसकी तीन खुराक उसे गुलाम बना देती है। घर में चोरी करता है। छुप-छुप कर सेवन करता है। मथुरादास माथुर अस्पताल पहुँचता है। टूट जाता है अन्दर से, नहीं ले तो शरीर टूटा। मौत का स्पष्ट वारन्ट।

आप सब के सब अच्छा करके आए हैं। जब तक आत्मभाव में जीव स्थित नहीं होता सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं करता, तब तक परिभ्रमण चलता रहता है। जो कुछ भी मिला है, जिम्मेदारी मेरी अपनी है। किसी का परिवार अनुकूल नहीं, घर में कोई बात नहीं सुनता। मैं जिसे भी कहता हूँ मेरी कोई नहीं मानता। आपको सोचना है- मैंने भगवान की बात नहीं मानी, अब अपेक्षा रखें कि दुनियाँ उसकी बात माने तो कैसे संभव है?

किसी का दोष नहीं, किसी पर द्वेष नहीं। हमारा सूत्र होगा- **किसी से अपेक्षा नहीं, किसी की उपेक्षा नहीं।** हमारा जीवन ऐसी भावना से शुरु होगा तो सामायिक होगी, साधना होगी। सम्यक्त्व रूपी एका आ जायेगा तो फिर जैसे एक पर बिन्दी लगने से दस, दो बिन्दी लगने से सौ, तीन बिन्दी लगने पर हजार होता है, ऐसे ही सम्यक्त्व आने पर साधना का फल बढ़ता रहता है। भजन के शीर्षक में आस्था, श्रद्धा, विश्वास, स्तुति, उपासना, प्रार्थना के साथ

हमारी बात समकित को लेकर चल रही थी। गुरु की सन्निधि परम आवश्यक है। आप यहाँ आए तब निस्सिही.....निस्सिही बोलकर आए फिर भी मन कितना टिकता है? कभी कोई व्रत-नियम लिया, दो-चार दिन बाद वासना का शिकार हो गया तो? जीव ग्यारहवें गुणस्थान पर पहुँच जाने की स्थिति होने पर भी मोहनीय कर्म के कारण दसवें तक नहीं पहले गुणस्थान तक नीचे आ सकता है।

भगवान श्रेष्ठ हैं, सर्व श्रेष्ठ हैं, मेरे अपने हैं। भगवान से आत्मीयता होगी तो प्रीति जगेगी। प्रीति होगी तो स्मृति रहेगी। प्रभु की सहज स्मृति आना भजन है। इसमें रुकावट है- ममता, आसक्ति, कामना। ममता, आसक्ति, कामना छोड़कर उपाश्रय में प्रवेश करने कि लिए निस्सिही के साथ अंदर आना पड़ेगा। ममता, आसक्ति, कामना को तोड़ने के लिए कहते हैं- तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं। मन, वचन, काया के योगों को नियन्त्रण में लेने के लिए प्रदक्षिणा करता है। मैं तीनों योगों को सही दिशा में लगाऊँगा। मेरे मुँह से गुणगान हो। मैं जब बोलूँ मीठे शब्दों में बोलूँ।

कल गुरुपूर्णिमा को गुरु की भक्ति करते हुए तिक्खुत्तो के अर्थ को भी देख रहे थे। वह भी तो यही सूचना दे रहा है- बाहर भटकने वाले मन, वचन, और काया को वश में करने की तैयारी है। भजन करने की तैयारी है, गुणगान गाता हूँ, समर्पित होता है, रोम-रोम पुलकित है, श्रद्धा से अवनत हूँ, सम्मान देता हूँ, सत्कार देता हूँ, बहुमान करता हूँ।

सन्दर्भ कई जुड़ गए- मूल में भजन की चर्चा, मुनिराज द्वारा बाँचे गए आचारांग के जीव के कहीं से आने की वार्ता। तिक्खुतो के वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि शब्द हैं, परन्तु भावों में, सार में समग्रता है, एकरूपता है। बाहर के भटकाव से रुकूँ। बाहर के बहाव से रुकूँ। आत्मा पर परमात्मा पर आस्था जगाने वाले महात्मा की स्तुति, उपासना, प्रार्थना के साथ पूजा करूँ। जगत् की सेवा में, निष्काम भाव से मिले हुए को समर्पित करूँ। प्रभु की, गुरु की भाव पूजा हो जाएगी। सदाचारी और सद्व्रती ही भजन के सच्चे अधिकारी हो सकते हैं।

मिले हुए की ममता त्याग कर सेवा में समर्पित करूँ, व्यसन-फैशन से स्वयं बचूँ। सन्तानों को बिगड़ने से बचाऊँ। बस यही है सच्चा भजन, यही है सच्ची भक्ति। अवशिष्ट चर्चा समय के साथ मेरे प्रभु.....। ■

शोधालेख

जैन साहित्य में नियतिवाद-विमर्श

डॉ. श्वेता जैन

वर्तमान में नियतिवाद पर कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है तथा पूर्व में भी इसका कोई प्ररूपक ग्रन्थ होने का उल्लेख जैन एवं बौद्ध ग्रन्थों में प्राप्त नहीं होता। आगमकाल में प्रचलित नियतिवाद का स्वरूप विशेषतः जैनागम साहित्य तथा बौद्ध त्रिपिटकों में ही सम्प्राप्त होता है। दोनों दर्शनों में मंखलि गोशालक को नियतिवाद का प्रणेता बताया गया है। गोशालक इस सिद्धान्त की भूमिका पर आजीवक सम्प्रदाय का प्रचार करता था। सम्प्रति आजीवक मत के अनुयायी तो नहीं रहे, किन्तु उसका नियतिवाद का सिद्धान्त त्रिपिटक, आगम एवं साहित्यिक ग्रन्थों में यत्र-तत्र बिखरा मिलता है, जिसको समेटकर यहाँ संक्षेप में आलिखित करने का प्रयास किया गया है।

दीघनिकाय में मंखलिगोशालक भगवान बुद्ध के प्रश्न के उत्तर में कहते हैं- **'सव्वे सत्ता सव्वे पाणा सव्वे भूता सव्वे जीवा अवसा अबला अवीरिया नियतिसङ्गतिभावपरिणता छस्वेवाभिजातीसु सुखदुक्खं पटिसंवेदेन्ति'** अर्थात् सभी सत्त्व, सभी प्राण, सभी भूत और सभी जीव अवश हैं, अबल हैं, अवीर्य हैं। नियति के संग के भाव से परिणत होकर 6 प्रकार की अभिजातियों में सुख-दुःख का संवेदन करते हैं।

जैनागम-साहित्य के अन्तर्गत भगवती सूत्र में नियतिवादी गोशालक का परिचय और सूत्रकृतांग में नियतिवाद का स्वरूप उपलब्ध है। प्रश्नव्याकरण में भी नियतिवाद की चर्चा तथा इसकी टीकाओं में व्याख्या हुई है। इसके अतिरिक्त आचारांग सूत्र की शीलांक टीका में, नन्दी सूत्र की अवचूरि में तथा स्थानांग में प्रसंगवश नियति की चर्चा सम्प्राप्त होती है। उपासकदशाङ्ग में भगवान महावीर द्वारा किया गया नियतिवाद का निरसन कारण की ऐकान्तिकता को सदोष बतलाता है।

दार्शनिक जगत् के देदीप्यमान आचार्यों ने भी नियतिवाद के विषय को अछूता नहीं रखा। सिद्धसेन सूरि (तीसरी-चौथी शती) कृत 'नियति-द्वात्रिंशिका' नियतिवाद का निरूपण करती है। नियतिवादी नहीं होते हुए भी

उन्होंने निष्पक्ष भाव से नियतिवाद के यथार्थ स्वरूप को अंकित करने का श्लाघनीय प्रयास किया है। 'सन्मतितर्क' में एकाङ्गी नियति को अस्वीकार कर आपेक्षिक नियति को सम्यक् ठहराया है। आचार्य हरिभद्रसूरि (700-770 ई.) ने 'शास्त्रवार्त्ता समुच्चय' और 'लोकतत्त्वनिर्णय' में नियतिवाद को पूर्वपक्ष में अंकित किया है तथा इसकी ऐकान्तिकता का सबल खण्डन भी किया है। मल्लवादी क्षमाश्रमण (पाचवीं शती) द्वारा रचित 'द्वादशारनयचक्र' में नियतिवाद को सबल तर्कों से निराधार कहा गया है। उपाध्याय यशोविजय (17 वीं शती) कृत नयोपदेश तथा तिलोक ऋषि के काव्य में भी नियतिवाद का निरूपण दृग्गोचर होता है। समन्तभद्रकृत स्वयम्भूस्तोत्र (छठी शती), नेमिचन्द्र रचित गोम्मटसार कर्मकाण्ड (10 वीं शती), स्वामिकार्त्तिकेयानुप्रेक्षा आदि दिगम्बर ग्रन्थों में भी नियतिवाद का संक्षेप में उल्लेख मिलता है और जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश में नियति को काललब्धि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आचार्य महाप्रज्ञ ने भी नियति की वैज्ञानिक व्याख्या संप्रस्तुत की है। नियतिवाद को एक क्रमबद्ध रूपरेखा में यहाँ लिपिबद्ध किया जा रहा है-

नियतिवाद-प्रणेता मंखलिगोशालक का परिचय

गोशालक के पिता मंखलि और माता भद्रा थी। वह मंखवृत्ति (भिक्षा वृत्ति) से अपना जीवन यापन करता था। विचरण करते-करते गोशालक का भगवान महावीर से प्रथम समागम राजगृह नगर की तन्तुवायशाला में हुआ। वहाँ उसने भगवान को अपना गुरु मान लिया। कूर्मग्राम नगर में भगवान ने गोशालक को वैश्यायन की तेजोलेश्या से बचाया तथा उसे तेजोलेश्या की विधि बताई। किसी दिन प्रथम शरत्काल के समय, जब वृष्टि का अभाव था, उस समय सिद्धार्थग्राम नगर से कूर्मग्राम नगर की ओर विहार करते समय गोशालक ने दृष्टिपथ में आए तिल के पौधे के सम्बन्ध में पृच्छा की कि भगवन्! यह तिल का पौधा विकसित होगा या नहीं? भगवान महावीर ने कहा कि सात तिल पुष्प के ये जीव मरकर इसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में पुनः उत्पन्न होंगे। गोशालक ने भगवान की इस बात को मिथ्या करने के लिए तिल के पौधे को मिट्टी सहित समूल उखाड़ फैंक दिया, फिर वह भगवान् के साथ आगे प्रस्थान कर गया। कुछ देर बाद आकाश में बादल आए और बरस गए। जिससे तिल का पौधा पुनः वहीं स्थापित हो गया और वे सात तिल-पुष्प के जीव मरकर पुनः उसी तिल के पौधे की एक फली में सात तिल के रूप में उत्पन्न हुए।

कुछ दिनों पश्चात् कूर्मग्राम से पुनः सिद्धार्थग्राम की ओर जाते हुए उस स्थान के निकट आए, जहाँ वह तिल का पौधा था। उस स्थान पर तिल का पौधा न देखकर मंखलि ने भगवान् से कहा कि आपकी बात मिथ्या सिद्ध हुई। तब भगवान् ने कुछ दूरी पर विकसित तिल के पौधे को दिखाकर बताया कि यह वही तिल का पौधा है जिसको उखाड़कर तूने फैंका था और बरसात से वह पुनः पनप गया। इस प्रकार यह तिल का पौधा निष्पन्न हुआ तथा वे सात फूल के जीव इसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में उत्पन्न हुए। इस बात पर अश्रद्धा होने से वह गोशालक उस तिल के पौधे के पास पहुँचा और उसकी तिलफली को तोड़कर उसमें से तिल बाहर निकाले। उन्हें संख्या में सात देखकर उसे यह निश्चय हो गया कि जीव मरकर पुनः उसी शरीर में उत्पन्न हुए हैं। तिल के पादप के सम्बन्ध में की गई भगवान की इस भविष्यवाणी के सत्य होने पर मंखलि गोशालक के मन में नियत व्यवस्था का बीज वपन हो गया। सम्भवतः इसी घटना-प्रसंग को आधार मानकर गोशालक ने सभी वस्तुओं को नियतिकृत मान लिया तथा भगवान से अलग विचरण कर नियतिवाद के सिद्धान्त को आजीवक सम्प्रदाय के रूप में प्रचारित प्रसारित करने लगा। मंखलिपुत्र गोशालक के पास 6 दिशाचर शिष्य भाव से दीक्षित हुए। इन्होंने आजीवक मत का खूब प्रचार-प्रसार किया। धीरे-धीरे गोशालक स्वयं को जिन मानने लगा तथा उसके जिनत्व को जो अस्वीकार करता, वह उसको नष्ट कर देता था। मरणासन्न होने पर उसे अपने इस कृत्य का पश्चात्ताप हुआ और वह इन ग्लान भावों में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। यह विवरण जैनागम व्याख्याप्रज्ञप्ति में मिलता है।[1]

2. नियतिवाद का स्वरूप

नन्दीसूत्र की वृत्ति में आचार्य मलयगिरि कहते हैं- **'यद् यदा यतो तत्तदा तत एव नियतेन एव रूपेण भवदुपलभ्यते'**[2] अर्थात् जो जब जिससे होना होता है, वह तब उससे ही नियत रूप से होता हुआ प्राप्त होता है। नियतिवाद का यह स्वरूप सभी जैन टीकाकारों, दार्शनिकों, आचार्यों एवं ग्रन्थकारों को मान्य है। सर्वमान्य यह विचार सभी ग्रन्थों में समान रूप से उद्धृत एक श्लोक में प्रमाणित होता है, यथा-

''प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयेण योऽर्थः,
सोऽवश्यं भवति नृणां शुभोऽशुभो वा।

भूतानां महति कृतेऽपि हि प्रयत्ने,
नाभाव्यं भवति न भाविनोऽस्ति नाशः''[3]

जो पदार्थ नियति-बल के आश्रय से प्राप्तव्य होता है, वह शुभ या अशुभ पदार्थ मनुष्यों (जीव मात्र) को अवश्य प्राप्त होता है। प्राणियों के द्वारा महान् प्रयत्न करने पर भी अभाव्य कभी नहीं होता है तथा भावी का नाश नहीं होता है।

सिद्धसेन दिवाकर ने अपनी रचना 'नियति द्वात्रिंशिका' में नियति के लिए 'अकस्मात्' शब्द का प्रयोग किया, जिसे टीकाकार विजयलावण्यसूरि ने **''अकस्मादिति नियतिव्यतिरिक्तनियामकाभावादित्यर्थः''**[4] शब्दों में परिभाषित किया। इस सम्बन्ध में यशोविजय का मत है-**''सर्वभावानां नियतत्वेनाकस्मादेव भावादिति''**[5] अर्थात् सभी भावों के नियत होने से सब कुछ अकस्मात् ही होता है। स्वामिकार्त्तिकेयानुप्रेक्षा के अनुसार नियति द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, निमित्त व पुरुषार्थ सब पर लागू होती है। युवाचार्य महाप्रज्ञ जागतिक नियम, यूनिवर्सल लॉ को नियति स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार मृत्यु की निश्चितता, अग्नि की उष्णता, जल की शीतलता आदि नियमों में अपवाद नहीं होना नियति है। नियति अकृत होने से शाश्वत है। अतः उसके नियम स्वाभाविक एवं सार्वभौमिक होते हैं।

अकलंक देव (आठवीं शती) ने अष्टशती में भवितव्यता के सम्बन्ध में एक श्लोक उद्धृत किया है-**'तादृशी जायते बुद्धिर्व्यवसायश्च तादृशः, सहायास्तादृशाः सन्ति यादृशी भवितव्यता'** जैसी भवितव्यता होती है वैसी ही बुद्धि हो जाती है, व्यवसाय (प्रयत्न) भी वैसा ही होता है और सहायक भी वैसे ही मिल जाते हैं। इन्हीं भावों का प्रतिरूप श्लोक ज्ञानविमलसूरि रचित प्रश्नव्याकरण की टीका में भी प्राप्त होता है। इस प्रसंग में आचार्य हरिभद्रसूरि का यह कथन **'दैवं यतो नयति तेन पथा व्रजामि''**[6] अर्थात् दैव जिस ओर ले जाता है, जीव उसी मार्ग का अनुसरण करता है; उचित ही प्रतीत होता है।

'नियतेनैव रूपेण सर्वे भावा भवन्ति''[7] **'नियतितः एवात्मनः स्वरूपमवधारयन्ति''**[8] नियति से ही सभी भाव या पदार्थ होते हैं और वे पदार्थ नियति से ही अपने स्वरूप का निर्धारण कर पाते हैं। आचार्य हरभिद्र और शीलांक के ये कथन नियतिवाद को अधिक स्पष्ट करते हैं। प्रश्नव्याकरण सूत्र

में भी कहा है कि इस लोक में कुछ भी ऐसा नहीं है, जो कृतक हो, सबकी कर्त्री नियति है।[9] अतः कहा है- **'नाभाविभावो न भाविनाशः'**[10] जो अभावी है वह नहीं होता और जो भावी है उसका नाश नहीं होता।

इस जगत् में बाल्यावस्था से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक की अवस्थाएँ सांगतिक[11] अर्थात् नियतिकृत हैं। इस परिप्रेक्ष्य में आगमकार सूत्रकृतांग में कहते हैं- **''तसथावरा पाणा ते एवं संघायमावज्जंति, ते एवं परियायमावज्जंति, ते एवं विवेगमावज्जंति, ते एवं विहाणमागच्छंति, ते एवं संगइयंति''**[12] अर्थात् त्रस एवं स्थावर सभी प्राणी नियति के प्रभाव से औदारिक शरीर, बाल्यावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था तथा अन्त में मृत्यु को प्राप्त होते हैं। मृत्यु के विषय में 'तत्त्वबोधविधायनी' टीका के वाक्य महत्त्वपूर्ण हैं- **''तीक्ष्णशस्त्राद्युपहता अपि तथामरणनियतताऽभावे जीवन्त एव दृश्यन्ते नियते च मरणकाले शस्त्रादिघातमन्तरेणापि मृत्युभाज उपलभ्यन्ते''** अर्थात् तीक्ष्ण शस्त्रादि से उपहत होकर भी जीव उस प्रकार से मरण की नियतता के अभाव में जीवित ही दिखाई पड़ते हैं और मरणकाल के नियत होने पर शस्त्रादि के घात के बिना भी मृत्यु के भाजन बन जाते हैं। जन्म और मृत्यु के मध्य की सुख-दुःख की अवस्थाएँ भी न स्वकृत हैं और न परकृत हैं, वे भी नियतिजन्य हैं।[13]

नियतिवाद के अनुसार सभी कार्य नियति से ही सम्पन्न होते हैं। जगत् में नियति ही सबका कारण है और समस्त कर्मों का साधन है। सूर्य का उदय-अस्त होना और उसके साथ कमल का खिलना-मुर्झाना, अग्नि का उष्ण होना और ऊर्ध्वगमन करना, जल का शीतल होना, क्रमशः दिन-रात का होना, मिट्टी से ही घड़ा बनना, बबूल के बीज से बबूल और आम के बीज से आम उगना, सर्दी के बाद गर्मी और गर्मी के बाद वर्षा ऋतु का आना, जन्म के साथ मृत्यु का निश्चित होना, मानव से मानव का पैदा होना, आँख से ही देखना, कान से ही सुनना, नक्षत्रों का एक क्रम से बदलना, सूरज का गरम होना, और चाँद का शीतल होना, चन्द्रमा का क्रम से घटना-बढ़ना, प्रत्येक द्रव्य का पर्याय परिणमन होना आदि दृश्यमान घटनाओं और कार्यों में नियमितता, क्रमिकता व निश्चितता के पीछे नियति ही कारण है। नियतिवाद में पुरुष के कर्तृत्व को स्वीकार नहीं किया जाता। उनके अनुसार पुरुष न स्वतन्त्र है और न ज्ञाता। बन्धन एवं मोक्ष की प्रक्रिया को भी नियति से ही स्वीकार किया जाता है। इस

प्रकार नियति मात्र की कारणता का कथन करना नियतिवाद है।

एकान्त नियतिवाद का खण्डन

नियति के अतिरिक्त अन्य कारणों को नहीं स्वीकार करना 'एकान्त नियति' कहलाती है। एकान्त नियति की कारणता की आलोचना जैन साहित्य में दृग्गोचर होती है, वह निम्न प्रकार से है-

1. अव्यावहारिक सिद्धान्त

जब कोई भी मत सैद्धान्तिक पक्ष के साथ व्यावहारिक पक्ष से भी उतना ही ठोस एवं पुष्ट होता है तब अनुकरणीय एवं लक्ष्यवरणीय बनता है। इसी बात को समझाते हुए भगवान उपासकदशाङ्ग में आजीवन मतावलम्बी शकडाल को कहते हैं- **''तो जं वदसि नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, तं ते मिच्छा''**[14] अर्थात् प्रयत्न पुरुषार्थ के नहीं होने की तथा सब कार्यों के नियतिकृत होने की तुम्हारी बात असत्य है। क्योंकि तुम स्वयं इस सिद्धान्त को व्यवहार में नहीं स्वीकार करते हो, तभी तो किसी के द्वारा भाण्डों के चुरा लेने पर या तोड़ देने पर उसे नियतिकृत न समझकर मारने का प्रयत्न करते हो। अतः नियतिवाद का सिद्धान्त व्यावहारिक धरातल पर स्थापित नहीं होता।

2. बुद्धिहीन नियतिवादियों का नैतिक पतन

नियतिवादी सुख-दुःख आदि को नियत तथा अनियत दोनों ही प्रकार का नहीं जानते हैं, अतः वे बुद्धिहीन हैं।[15] ऐसा आगमकार का मन्तव्य है। शीलांकाचार्य इस मन्तव्य के मर्म को समझाते हुए कहते हैं कि बुद्धिहीन नियतिवादी सद् अनुष्ठान रूप क्रिया एवं असद् अनुष्ठान रूप क्रिया के पुरुषार्थ को व्यर्थ मानते हैं, जिस कारण वे विरूप काम-भोगों में संलग्न हो जाते हैं और पतन के गर्त में डूब जाते हैं।

3. शास्त्र की व्यर्थता का प्रसङ्ग

मल्लवादी क्षमाश्रमण तर्क देते हैं कि नियति को स्वीकार करने पर तो हित की प्राप्ति और अहित के परिहार के लिए दिया गया शास्त्रोक्त आचार का उपदेश निरर्थक हो जाएगा। क्योंकि चक्षु से जिस प्रकार रूप का ग्रहण नियत होता है उसी प्रकार नियतता से बिना प्रयत्न के ही लक्ष्य की सिद्धि हो जाएगी। इसी क्रम में अभयदेवसूरि तत्त्वबोधविधायनी टीका में हेतु उपस्थित करते हैं- **''शास्त्रोपदेशवैयर्थ्यप्रसक्तेः तदुपदेशमन्तरेणापि अर्थेषु नियतिकृत-तत्त्वबुद्धे-र्नियत्येव भावाद्''** नियतिकृत बुद्धिवाले व्यक्ति को शास्त्रादि के

उपदेश के बिना नियति से ही अर्थज्ञान हो जाएगा। अतः शास्त्रों को व्यर्थ सिद्ध करने वाले नियतिवादियों का मत आगमविरुद्ध है।

4. ज्ञान-अज्ञान, सुख-दुःख, उत्पाद-विनाश, जन्म-मरण, अतिवृष्टि-अनावृष्टि का एक ही कारण असंभव-

नियतिवादी सुख-दुःख, ज्ञान-अज्ञान, जन्म-मरण सभी के पीछे मात्र नियति को ही कारण मानते हैं। अतः खण्डन में तर्क उपस्थित होता है- **''नियतेरेकस्वभावत्वाऽभ्युपगमे विसंवादऽविसंवादादिभेदाभाव-प्रसक्तेः''**[16] नियति से ही ज्ञान और अज्ञान दोनों का होना संभव नहीं है, क्योंकि दो विरोधी कार्यों में एक ही कारणता अशक्य है। ठीक ऐसे ही सुख-दुःख, उत्पाद-विनाश, जन्म-मरण, अतिवृष्टि-अनावृष्टि आदि दो विपरीत कार्यों का एक ही कारण मानना दोष युक्त है। इस दोष-निवारण के लिए नियतिवादी कहते हैं-**'अनियमेन नियतेः कारणत्वाद् अयमदोष इति'** अर्थात् अनियम से नियति को कारण मानने के कारण यह दोष नहीं आता है। प्रत्युत्तर में अभयदेव सूरि कहते हैं-**'न, अनियमे कारणाभावात्'**- यह भी उचित नहीं है, क्योंकि अनियम में कारण का अभाव है।

5. एकरूपा नियति से कार्यों में विभिन्नता अशक्य

धर्मसंग्रहणि टीका में मलयगिरि कहते हैं कि एकरूपा नियति से जन्य सभी कार्य एकरूप होंगे, क्योंकि कारणभेद से ही कार्यभेद उत्पन्न होता है। अतः कार्य-विचित्रता के लिए अन्य कारण को भी स्वीकार करना चाहिए। नियतिवादियों द्वारा अन्य कारण स्वीकार नहीं करने पर हरिभद्रसूरि का मत है कि नियति में अन्य कोई भेदक मानकर समाधान नहीं किया जा सकता। कारण कि तदन्य भेदक मान लेने पर नियति की एकरूपता खण्डित होगी तथा नियति में विचित्रता मान लेने पर तदन्यभेदक और नियति के मध्य अन्योन्याश्रय दोष की आपत्ति आएगी। आत्माराम जी महाराज ने भी नियति की अनेकता के प्रसङ्ग में प्रश्न किया कि अनेक रूप नियति मूर्त है या अमूर्त? मूर्त होने पर नामान्तर से कर्म ही स्वीकृत हुआ है, क्योंकि कर्म पुद्गल रूप होने मूर्त भी है और अनेक रूप भी है। यदि अमूर्त मानते हो तो नियति आकाश के समान अमूर्त होने से सुख-दुःख का हेतु नहीं बन सकती।[17]

6. नियतिभिन्न कारणों की आवश्यकता

नियति से भिन्न कारणों की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए

यशोविजय हेतु देते हैं-''**घटो यदि पटजननाऽन्यूनाऽनतिरिक्तहेतुजन्यः स्यात् पटः स्यात्**''[18] घट यदि पट के कारणों से अन्यून (एक भी कम नहीं) और अनतिरिक्त (एक भी अधिक नहीं) कारणों से उत्पन्न होगा तो घट भी पट हो जाएगा। अतः घट और पट को नियतिजन्य स्वीकार करने के अनन्तर घट के कारणों में पट के किसी कारण का अभाव अथवा पट के कारणों से अतिरिक्त किसी नये कारण का सन्निवेश नहीं होगा, तो घट भी पट हो जाएगा, पट से भिन्न नहीं हो सकेगा। इस प्रकार नियति भिन्न कारणों की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

जैन दर्शन में मान्य निकाचित कर्म की अवधारणा नियति का प्रतिफलन है। किन्तु निकाचित कर्मों के उदयकाल में व्यक्ति का व्यथित होना नियत नहीं है। इसका नियत न होना पुरुष की स्वतन्त्रता या पुरुषार्थ की प्रबलता का परिचायक है। अतः जैन दर्शन में नियति की आंशिक कारणता तो स्वीकार्य है, किन्तु सर्वांश में नहीं। इस प्रकार जैन दर्शन नियति की कथञ्चित् कारणता को स्वीकार करता है।

सन्दर्भ-

1. व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक 15, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर
2. नन्दीसूत्र, मलयगिरि अवचूरि, पृ. 179
3. द्रष्टव्य
   (1) सूत्रकृतांग 1.1.2.3 की शीलांक टीका
   (2) प्रश्नव्याकरण सूत्र 1.2.7 की अभयदेव वृत्ति
   (3) शास्त्रवार्त्ता समुच्चय, स्तबक 2, श्लोक 62 की यशोविजयकृत टीका
   (4) सन्मति तर्क 3.53 की अभयदेव की टीका
   (5) उपदेशपद महाग्रन्थ, पृ. 140, श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट, मुम्बई
   (6) लोक तत्त्व निर्णय, श्लोक 27, पृ. 25, श्री जैन धर्म प्रसारक सभा, भावनगर
4. द्वात्रिंशत्-द्वात्रिंशिका, नियति द्वात्रिंशिका, श्लोक 20 पर आचार्य विजयलावण्य सूरि की टीका, श्री विजयलावण्यसूरीश्वर ज्ञान मंदिर, बोटाद (सोराष्ट्र)
5. नयोपदेश, श्लोक 123 की वृत्ति, श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट, मुम्बई
6. लोक तत्त्व निर्णय, श्लोक 15 (पृ. 22)
7. शास्त्रावार्त्तासमुच्चय, स्तबक 2, श्लोक 6, दिव्य दर्शन ट्रस्ट, मुम्बई
8. आचारांग सूत्र 1.1.3 की शीलांक टीका

9. 'णत्थेत्थ किंचि कयगं तत्तं लक्खणविहाणणियत्तीए कारियं'-प्रश्नव्याकरण 1.2.50, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर
10. द्वादशारनयचक्र, प्रथम विभाग, पृ.196, आनन्द सभा भवन, भावनगर (गुजरात)
11. 'संगइयं' ति नियतिमाश्रित्य-शीलांक टीका में सांगतिक शब्द नियति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।
12. सूत्रकृतांग 2.1.12, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर
13. सूत्रकृतांग, प्रथम श्रुतस्कन्ध, प्रथम अध्ययन, द्वितीय उद्देशक, गाथा 3
14. उपासकदशाङ्ग, अध्ययन 7, सूत्र 200, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर
15. सूत्रकृतांग 1.1.2.4, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर
16. सन्मतितर्क, 3.53 की अभयदेव टीका, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
17. जैन तत्त्वादर्श (पूर्वार्द्ध), चतुर्थ परिच्छेद, पृ. 252-253, श्री आत्मानन्द जैन महासभा, पंजाब
18. शास्त्रवार्त्तासमुच्चय, श्लोक 69 की टीका, दिव्य दर्शन ट्रस्ट, मुम्बई

-समता कुंज, प्लॉट नं. 12/7 ए, जालमविलास स्कीम, पावटा बी रोड़, जोधपुर (राज.)

व्यक्तित्व-विकास

श्री अभय कुमार जैन

अपने व्यवहार में दो-तीन शब्द हमेशा ही साथ रखें- जी हाँ, सॉरी और थैंक्यू, जो आपकी हर जगह मदद करेंगे।

विनम्रता को अपने जीवन रूपी शृंगार का अत्यावश्यक हिस्सा बनाएँ, जिससे आपका व्यक्तित्व और भी निखरेगा।

अपने से बड़ों का सम्मान और छोटे लोगों को स्नेह करें तो पायेंगे कि यह क्रम निरन्तर चलता रहेगा। समाज में सम्मान ओर स्नेह की एक शृंखला स्वतः ही बन जाएगी।

अपने घर-परिवार, रिश्तेदारों एवं मित्रों में और आसपास के वातावरण को शांति और सौहार्दपूर्ण बनाने के लिए वाणी माधुर्य का गुण अपनाएँ।

अपनी गलती स्वीकारना सीखें, इससे आपका आत्म-विश्लेषण होगा और अपनी गलतियों से कुछ नया सीखने को मिलेगा।

-भवानी मण्डी (राज.)

शोधालेख

श्रीवत्स प्रतीक का उद्भव और विकास

प्रोफेसर भागचन्द्र जैन 'भास्कर'

श्रीवत्स भारतीय संस्कृति की प्रतीक परम्परा का अभिन्न अंग है। वह जैन, बौद्ध और वैदिक इन तीनों संस्कृतियों में लोकप्रिय रहा है। विशेष रूप से कलात्मक क्षेत्र में उसका उपयोग हुआ है। प्रारम्भ में वह मांगलिक चिह्न के रूप में प्रयुक्त होता रहा और बाद में उसे महापुरुष-लक्षण के रूप में मान्यता मिली।

अष्ट मांगलिक चिह्न

अष्ट मांगलिक चिह्नों के सन्दर्भ में दिगम्बर-श्वेताम्बर परम्पराओं में मतभेद हैं। दिगम्बर परम्परा के प्राचीन ग्रन्थ तिलोयपण्णत्ति गाथा 1880 में अष्ट मंगल द्रव्य हैं- भृंगार, कलश, दर्पण, चँवर, ध्वजा, बीजना, छत्र और सुप्रतिष्ठ। श्वेताम्बर परम्परा के औपपातिक सूत्र (31 वां सूत्र) में इन नामों में कुछ अन्तर है। ये नाम हैं- स्वस्तिक, नन्द्यावर्त, वर्धमानक, भद्रासन, कलश, दर्पण, मत्स्य-युग्म तथा श्री वत्स। तीर्थंकरों के चिह्नों में दिगम्बर परम्परा में शीतलनाथ को स्वस्तिक का चिह्न दिया गया है जबकि श्वेताम्बर परम्परा में उसका स्थान श्रीवत्स ने लिया है। इसके बावजूद उत्तरकाल में श्रीवत्स जिन-मूर्तियों के वक्षस्थल में अनिवार्य रूप से उत्कीर्ण होने लगा। आचार दिनकर में श्री वत्स को केवलज्ञान का प्रतीक माना गया है।

बौद्ध परम्परा में भी मांगलिक चिह्नों को स्वीकारा गया है, पर वहाँ संख्या आठ नहीं है। ललित विस्तर (पृ.75) में उनका उल्लेख इस प्रकार है- श्रीवत्स, स्वस्तिक, नंद्यावर्त, पद्म, वर्धमान आदि। बृहत्संहिता (9.2/94.3) में श्रीवत्स के साथ वर्धमान, छत्र, चामर, ध्वज, प्रहरण, नन्द्यावर्त तथा लोष्ठ की गणना अष्ट मांगलिक द्रव्यों में की गई है। कालान्तर में इस संख्या में वृद्धि हुई और यह संख्या नौ, दस, ग्यारह, तेरह, अठारह तक पहुँच गई। इन द्रव्यों में श्रीवत्स, स्वस्तिक, पुष्प, दर्पण, परशु, अंकुश, भद्रासन, कलश, माला, पुस्तक, कमण्डलु, मीन-मिथुन, वर्धमान, नन्द्यावर्त, छत्र, चामर, ध्वज आदि मुख्य हैं।

श्री वत्स प्रतीक का मूल रूप

श्रीवत्स के प्राचीनतम रूप को देखकर ऐसा लगता है कि उसका यह रूप मानव की आकृति का ही छायांकन है। गंगा घाटी से प्राप्त द्वितीय-तृतीय सहस्राब्दी पूर्व की ताम्र मानवाकृतियों से उसकी तुलना की जा सकती है।

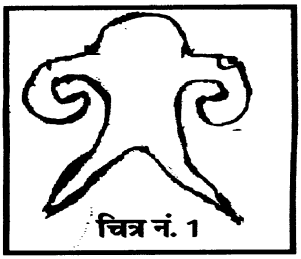
चित्र नं. 1

जैन परम्परा में ऐसा रूप त्रिलोकाकृति का माना जाता है। संभव है, उसका मूल रूप जैन रूप रहा है। इस प्रतीक मूर्ति का चित्र देखिए- (चित्र-1) मोहनजोदडो की मृण्मूर्तियाँ भी लगभग इसी आकार-प्रकार की हैं। (चित्र-2) श्रीवत्स का यह प्राचीनतम रूप रहा होगा। मातृदेवी की कल्पना के साथ भी वहाँ कुछ ऐसी मूर्तियाँ हैं जिनके वक्ष पर बालक जैसी आकृति चिपकी हुई है। (चित्र-3) यह अपने वत्स के प्रति मां की ममता है। इसे श्री लक्ष्मी भी कहा जा सकता है। श्री अर्थात् लक्ष्मी के लिए यह मानव वत्स (सन्तान) के समान है। सैन्धव सभ्यता में लक्ष्मी पूजन किया जाता होगा।

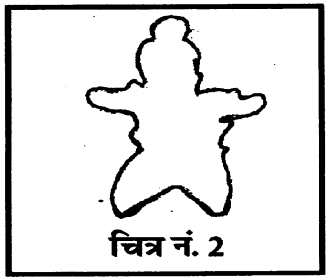
चित्र नं. 2

चित्र नं. 3

शिल्प में श्री वत्स का उत्कीर्णन

भरहुत, सांची, सारनाथ, मथुरा, उदयगिरि, खण्डगिरि आदि स्थानों के शिल्प में श्रीवत्स का उत्कीर्णन विविधरूप से हुआ है। यहाँ चक्रों और अर्धचक्रों में उत्पल के साथ श्री वत्स का अंकन है। धार्मिकता के साथ उसका अलंकरण हुआ है। धर्मचक्र, त्रिरत्न और स्तूप का भी वहीं चित्रांकन किया गया है। सांची के एक स्तूप के चित्रांकन में उसके निम्न भाग में तीन पंक्तियों में प्रतीकों का चित्रण किया गया है। मध्य में चार श्री वत्स हैं और अगल-बगल में चार-चार पद्म का अंकन है।

मथुरा में कंकाली टीले से प्राप्त जैन स्तूप के वेदिका-स्तम्भों तथा

आयागपट्टों पर श्रीवत्स का चित्रांकन हुआ है। एक वेदिका स्तम्भ के चक्रफलक में श्रीवत्स का चित्रांकन फण उठाये दो सर्पों की आकृति जैसा है। (चित्र-4) यहाँ श्रीवत्स का स्वरूप शुंग युगीन सांची शिल्प जैसा ही जान पड़ता है। श्री वत्स का यह अलंकरण आन्ध्रप्रदेश के गुंटूर जिले के कृष्णापल्ली स्थान पर प्राप्त बौद्ध स्तूप पर भी मिलता है जो द्वितीय-प्रथम शताब्दी ई. पूर्व का है।

चित्र नं. 4

यह श्रीवत्स का अलंकरण मात्र मूर्तियों या स्तूप पर ही नहीं मिलता, बल्कि मृण्मूर्तियों पर लगी रत्नमालाओं, केश-गुच्छों पर उपलब्ध होता है। ये मृण्मूर्तियां मथुरा, कौशाम्बी, अहिच्छत्रा आदि प्राचीन नगरों में मिली हैं। इसी तरह मृण्मुद्राओं पर भी शंख, चक्र और स्वस्तिक के साथ श्रीवत्स का अंकन हुआ है। यह अंकन वैविध्य लिये हुए है। मृद्भाण्डों पर भी यह अंकन मिलता है।

मथुरा से प्राप्त आयागपट्टों पर भी श्रीवत्स अन्य मांगलिक प्रतीकों के साथ अलंकृत रूप में द्रष्टव्य है। एक आयागपट्ट के केन्द्र में छत्र और मालाओं से आवेष्टित तीर्थंकर की प्रतिमा पद्मासनस्थ है। ऊपर मीन-मिथुन, भद्रासन, श्रीवत्स और नन्द्यावर्त तथा नीचे नन्दिपद, पुष्पमाला, पवित्र पुस्तक और मंगलकलश हैं। दूसरे आयागपट्ट पर केन्द्र में त्रिरत्न से सज्जित तीर्थंकर मूर्ति विराजमान है। ऊपर श्रीवत्स, स्वस्तिक तथा पद्म और नीचे स्वस्तिक, पुष्पपात्र, मीन-मीथुन, कमण्डलु, रत्नपात्र तथा पवित्र पुस्तक उत्कीर्ण है। बौद्ध परम्परा में भी श्रीवत्स का अंकन मथुरा से प्राप्त चक्र-फलक पर प्राप्त होता है।

अभिलेखों में भी श्रीवत्स का अंकन होता रहा है। भाजा, जुन्नार तथा कार्ले के गुहाभिलेखों का प्रारम्भ श्रीवत्स प्रतीक के अंकन से होता है। खारवेल के हाथी गुम्फा शिलालेख के प्रारम्भ में बायीं ओर प्रथम से पंचम पंक्तियों की सीध में ऊपर श्रीवत्स तथा उसके नीचे स्वस्तिक का एक-एक प्रतीक उत्कीर्ण है। श्रीवत्स

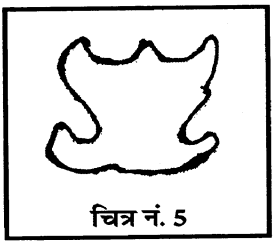
चित्र नं. 5

प्रतीक देखिए (चित्र-5) तमिलनाडु की जैन गुफाओं में उत्कीर्ण तृतीय शती ई.पू. के जैन शिलालेखों में भी श्रीवत्स और स्वस्तिक का अंकन हुआ है। मथुरा के एक कुषाण कालीन जैन आयागपट्ट पर उत्कीर्ण स्तूप की बडेरियों के उपशीर्ष पर भी श्रीवत्स का प्रतीक उत्कीर्ण है।(चित्र-6) यह अलंकरण विहीन था।

चित्र नं. 6

महापुरुष लक्षण के रूप में श्रीवत्स का अंकन

कालान्तर में श्रीवत्स महापुरुष के लक्षण के रूप में प्रयुक्त होने लगा। आचार्य हेमचन्द्र ने अभिधान चिन्तामणि (2.136) में इसे रोमावर्त कहकर वक्षस्थल को श्रीवत्स से युक्त माना है- श्रिया युक्तो वत्सो वक्षोऽनेन श्रीवत्सः रोमावर्तविशेषः। जैन तीर्थंकरों के अनेक लक्षणों में श्रीवत्स भी एक लक्षण माना जाने लगा। मानसार में भी तीर्थंकर के वक्षस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न आवश्यक माना गया है-

निराभरणसर्वाङ्गं निर्वस्त्रांगं मनोहरम्।
सर्ववक्षस्थले हेमवर्णश्रीवत्सलांछनम्।। 55.46

कुषाण काल में श्रीवत्स का अंकन तीर्थंकर के वक्षस्थल पर किया जाने लगा। उसके पूर्व श्रीवत्स मांगलिक चिह्न के रूप में प्रयुक्त होता था और उसे अगल-बगल में कहीं भी अंकित कर देते थे। कुषाणकालीन मथुरा की जैन मूर्तियों की पहचान का आधार यही रहा है। वहाँ मूर्ति के वक्षस्थल पर पाया जाने वाला श्रीवत्स लांछन शुंगकालीन श्रीवत्स का ही अलंकृत रूप है। लखनऊ संग्रहालय में संगृहीत मूर्तियों और विदिशा क्षेत्र में प्राप्त मूर्तियों के वक्षस्थल पर उत्कीर्ण श्रीवत्स प्रतीक के विविध रूपों के अध्ययन करने पर कुषाणकाल और गुप्तकाल में हुए उसके अलंकृत विकास का दृश्य सामने आ जाता है। यह विकास कहीं कमल जैसा दिखता है (चित्र-7) तो कहीं ताश के ईंट जैसा (चित्र-8) और कहीं वह चतुर्दल पुष्प के समान लगता है (चित्र-9) कहीं षट्दल रूप दिखाई

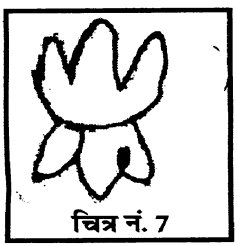
चित्र नं. 7

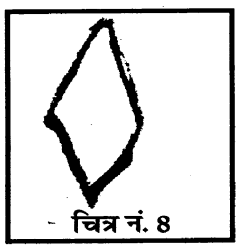
चित्र नं. 8

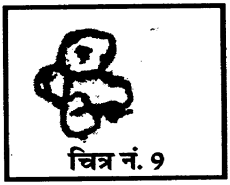
चित्र नं. 9

देता है।

बैंगलोर संग्रहालय में लगभग छठी शती की ऐसी कांस्य जैन प्रतिमा संगृहीत है जिसमें श्रीवत्स मूर्ति के दांये वक्ष के ऊपरी भाग में अंकित है (चित्र-10) जिनभाषित के अप्रेल-मई 2011 के अंक के मुख पृष्ठ पर लगभग आठवीं शती की मेलाचित्तामूर (पांडिचेरी) से प्राप्त तीर्थंकर पार्श्वनाथ की ऐसी प्रतिमा का चित्र मुख पृष्ठ पर दिया गया है, जिसमें प्रतिमा के दायें कन्धे के नीचे त्रिकोणाकार (▽) श्रीवत्स चित्रित है। मथुरा से प्राप्त एक अन्य प्राचीन मूर्ति पर यह श्रीवत्स सीधे तीन नुकीली छुरियों जैसा दिखता है। (चित्र-11)

चित्र नं. 10

चित्र नं. 11

बौद्ध प्रतिमाओं पर उत्कीर्ण श्री वत्स

श्रीवत्स लांछन जैन प्रतिमाओं के समान बौद्ध प्रतिमाओं पर भी मिलता है, पर वह कुछ दूसरे रूप में ही है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि बौद्ध साहित्य में सिद्धार्थ के केशों को श्रीवत्स जैसा विन्यस्त कहा गया है। इसलिए साधारणतः बुद्ध प्रतिमाओं पर श्रीवत्स का चिह्न नहीं मिलता। परन्तु इलाहाबाद संग्रहालय में द्वितीय शती की एक ऐसी बुद्ध मूर्ति है जिसके वक्षस्थल पर जैन प्रतीक अंकित है। मध्य एशिया से कुषाणकालीन (3-4 थी शती) ऐसी बुद्ध प्रतिमा प्राप्त हुई है, जिसके वक्ष पर संघाटी की जगह अलंकृत श्रीवत्स, नीचे अश्व और चौकोरवेदिका मंगल कलश और सहस्रदल कमल अंकित है (चित्र-12) ऐसी और भी अनेक बुद्ध मूर्तियाँ मिली हैं। कहीं-कहीं बुद्ध मूर्ति के अंगूठे के तल पर नन्दिपद या त्रिरत्न और स्वस्तिक के साथ श्रीवत्स का भी अंकन हुआ है। बौद्ध आयागपट्टों पर भी उसका अंकन हुआ है।

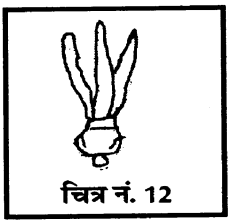
चित्र नं. 12

वैष्णव प्रतिमाओं में श्रीवत्स का अंकन

श्रीवत्स का अंकन सर्वप्रथम जैन प्रतिमाओं में प्रारम्भ हुआ। उसके बाद

वैष्णव प्रतिमा

यह परम्परा बौद्धों ने ग्रहण की। तत्पश्चात् वैष्णवों ने भी उसे स्वीकार किया। मथुरा से प्राप्त वराह और बलराम की मूर्तियों में श्रीवत्स का यह अंकन हुआ है। गुप्तयुगीन प्रतिमाओं में यह प्रवृत्ति अधिक दिखी और फिर उत्तरकाल में भी। इलाहाबाद संग्रहालय 11 वीं शती की गरुडासीन विष्णु की मूर्तियों के वक्षस्थल पर श्रीवत्स का चतुर्दल रूप द्रष्टव्य है। विष्णु के अतिरिक्त वराह, कृष्ण, वासुदेव, नृसिंह, बलराम, सूर्य, ब्रह्मा, योगनारायण, कार्तिकेय, शिव, भैरव वायु, हनुमान, इन्द्र आदि की मूर्तियों में भी श्रीवत्स का अंकन हुआ है।

बुद्ध प्रतिमा

उपसंहार

इस प्रकार श्रीवत्स का प्रारम्भिक रूप मानवाकृति रहा है, जो जैन धर्म की त्रिलोक परम्परा से मिलता-जुलता है। बाद में वह मांगलिक चिह्न के रूप में स्वीकृत हुआ। भारतीय कला में शुंगयुग से लेकर कुषाण काल तक (लगभग 2-3 शती ई.) श्री वत्स का अंकन उसी रूप में होता रहा। उत्तरकाल में महापुरुष लक्षण के रूप में उसका उपयोग होने लगा। इस रूप में उसका प्रारम्भ जैन परम्परा में मथुरा की मूर्तिकला से हुआ। बौद्ध और वैष्णव मूर्तिकला में श्रीवत्स का प्रयोग जैन परंम्परा के अनुकरण से हुआ। मांगलिक चिह्न के रूप में उसका प्रयोग गुप्त काल के बाद नहीं हुआ। इसका सुन्दर विवेचन डॉ. श्रीवास्तव ने किया है। श्रीवत्स के कतिपय प्रकार देखिए-

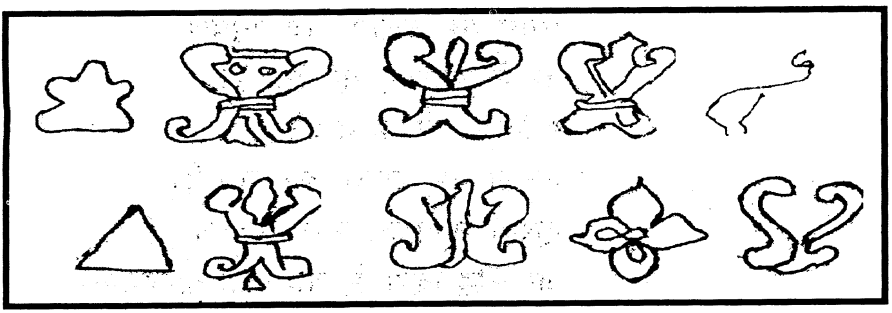

-कस्तूर बा पुस्तकालय के पास, सदर, नागपुर (महाराष्ट्र)

गीत

क्षमा मांगता हूँ, क्षमा कीजियेगा

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

क्षमा मांगता हूँ, क्षमा कीजियेगा,
जो स्नेह दिया है, वह स्नेह दीजियेगा।
क्षमा मांगता हूँ.....।।टेर।।

भूलों की बातें, क्या मैं बताऊँ,
पग-पग पे गलती, होती है मुझसे।
कई बार सोचा, मन समझाया,
मगर फिर भी गलती, होती है मुझसे।
खता मेरी बंधु, माफ कीजियेगा,
जो स्नेह दिया है, वह स्नेह दीजियेगा।
क्षमा मांगता हूँ.....।।1।।

चार दिन का जीवन, क्या साथ जाना,
फिर क्यों किसी से, कटु बोल बोलें।
बोलें सभी से, मीठी वाणी,
वाणी में अपने, मधुररस घोलें।
कटुता हुई जो, भूल जाइयेगा,
जो स्नेह दिया है, वह स्नेह दीजियेगा।
क्षमा मांगता हूँ.....।।2।।

प्यारा यह उत्सव, पर्व पर्युषण,
डर में उजाला, भर देता है।
रूठे हुए जो, हैं बेगाने,
उनको यह अपना, कर देता है।
दूरियां मिटाकर, पास आइयेगा,
जो स्नेह दिया है, वह स्नेह दीजियेगा।
क्षमा मांगता हूँ.....।।3।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

चिन्तन

उपादान के साथ निमित्त भी आवश्यक

श्री जशकरण डागा

संसार के सामान्य प्राणी प्रायः सुख-दुःख, जन्म-मरण, भव-भ्रमण एवं आत्म-कल्याण का कारण निमित्तों को मानते हैं, अतः अनुकूल निमित्तों की प्राप्ति के लिए प्रतिकूल निमित्तों को बदलने में ही पुरुषार्थ करते रहते हैं। वे समझते हैं कि उपादान नहीं बदला जा सकता, किन्तु निमित्तों को बदलकर अपना भाग्य बदला जा सकता है। परन्तु उनकी यह मान्यता भ्रामक है। वस्तुतः निमित्तो को नहीं उपादान को बदलना आवश्यक है। हम कर्म परिणाम (फल) को नहीं, किन्तु निज परिणामों (निज भावों) को बदलें। नियति को (होनहार को) नहीं, किन्तु नीयत (विचार) को बदलें, जिससे आश्रव के स्थान संवर का और संवर के साथ निर्जरा का अर्जन भी कर सकते हैं। यहाँ निमित्त और उपादान को समझने हेतु संक्षेप में विचार किया जा रहा है।

व्याख्या– प्रत्येक कार्य की सिद्धि के लिए मुख्यतः दो प्रकार के कारण होते हैं:-

1. **उपादान कारण**– जो कारण स्वयं कार्य रूप में परिणत होता है वह उपादान कारण है, जैसे मिट्टी, घड़े का उपादान कारण है क्योंकि मिट्टी ही घड़ा बन जाती है। दूध, दही का उपादान कारण है क्योंकि दूध ही दही के रूप में परिणत होता है। इस प्रकार जो कारण कार्य रूप में परिणत होता है, उसे उपादान कहते हैं। इसे वस्तु पदार्थ की स्वशक्ति जानें।
2. **निमित्त कारण**– जो कारण कार्य के उत्पन्न होने में सहायक हो और कार्य के उत्पन्न हो जाने पर अलग हो जाय, उसे निमित्त कारण कहते हैं। जैसे घड़े के निमित्त कारण, चक्र (चाक), दण्ड आदि हैं। (विशेषावश्यक भाष्य, गाथा 2099 एवं जैन सिद्धान्त बोल संग्रह, भाग 1, बोल 35) निमित्त कार्य में सहयोग देकर निवृत्त हो जाता है, किन्तु निमित्त में, उपादान के प्रयास से भी उपादानवत् बदलाव नहीं आता है।

कार्य सिद्धि के पाँच कारण–

उपादान एवं निमित्त को समझने हेतु पाँच समवाय कारणों को समझना

उपयोगी है। इनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है-

1. **काल**- बिना काललब्धि के कार्य-सिद्धि नहीं होती है। जैसे भव्य जीव अनुकूल काल प्राप्त करके ही सिद्ध होते हैं। अतः काल का अपना महत्त्व है।
2. **स्वभाव**- कार्य-सिद्धि में दूसरा कारण स्वभाव है। बिना स्वभाव की अनुकूलता के भी कार्य नहीं होता है। जैसे अभव्य जीवों में मोक्ष प्राप्ति का स्वभाव नहीं है, जिससे वे कभी भी मोक्ष नहीं जा सकते। भव्य जीवों में मोक्ष गमन का स्वभाव होने से वे ही मोक्ष जाते हैं।
3. **नियति**- यह होनहारिता या भाग्यवाद है। यदि काल और स्वभाव दोनों से ही कार्य सिद्धि मान ली जाय, तो सभी भव्य जीव एक साथ मोक्ष चले जाएं। किन्तु भवितव्यता-नियति (होनहार) का योग सबका भिन्न होने से जीव तदनुसार ही मोक्ष जाते हैं।
4. **पुरुषकार (उद्योग)**- कार्य सिद्धि में यह भी एक कारण है। यदि काल, स्वभाव और नियति इन तीनों को ही कार्य सिद्धि के कारण मान लें तो श्रेणिक महाराज भी मोक्ष प्राप्त कर लेते। किन्तु मोक्ष-प्राप्ति के अनुकूल उद्योग (पुरुषार्थ) कर, पूर्वकृत कर्मक्षय नहीं करने से वे मोक्ष प्राप्त नहीं कर सके।
5. **कर्म**- कार्य सिद्धि में उपर्युक्त चार कारणों के अतिरिक्त कर्म की अनुकूलता भी पाँचवा कारण है। इसके बिना भी कार्य सिद्धि नहीं होती है। जैसे काल, स्वभाव, नियति और पुरुषार्थ की अनुकूलता होने पर भी पूर्वकृत कर्म भोगना शेष रहने से शालिभद्र मुक्त न हो सके। (श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह, भाग 1 बोल 279)।

पंच समवाय में पुरुषार्थ की प्रधानता-

उपर्युक्त पाँचों समवाय में वैसे तो सभी का अपना-अपना महत्त्व है, तथा कार्य सिद्धि में पाँचों का सहयोग एवं समन्वय आवश्यक है। कहा भी है-

''काल कर्म स्वभाव अरू नियति उद्यम धार।
दुनियां में सब होत है, इन पाँचो अनुसार।।''

फिर भी इन सबमें पुरुषार्थ प्रधान है। अन्य चार समवाय (काल, कर्म, स्वभाव, नियति) में बदलाव करने में हम, चक्रवर्ती या इन्द्र भी समर्थ नहीं है। पुरुषार्थ आत्मा (उपादान) की स्वशक्ति है। यह भी दो प्रकार का है- एक

बाह्य एवं दूसरा अन्तरंग (आभ्यन्तर भाव)। ज्ञानियों ने बाह्य पुरुषार्थ को मिथ्या तथा आभ्यन्तर स्वपुरुषार्थ को सम्यक् कहा है। इस अन्तरंग पुरुषार्थ से हम आत्मा (उपादान) के भावों में बदलाव लाने में स्वतंत्र हैं। जैसे क्रोध, मान, माया, लोभ आदि में बदलाव करने में हम स्वाधीन हैं। अतः हमारा प्रयास निमित्त को नहीं उपादान को बदलने का होना चाहिए।

पाँचों समवाय साथ रहने वाले अनादि मित्र–

उपादान (आत्मा) और निमित्त (काल, स्वभाव आदि) को सदा एक-दूसरे की अपेक्षा रहती है। आत्मा द्वारा जो समय-समय पर पर्याय परिणमन होते हैं, उसमें भी निमित्त (पर द्रव्य, काल, कर्म आदि) सहचर होते हैं। उपादान (द्रव्य) की अनुकूलता के अभाव में निमित्त भी कार्यकारी नहीं होते हैं। बिना निमित्त के उपादान में कोई कार्य घटित नहीं होता है। अतः निश्चय में उपादान की मुख्यता है, और व्यवहार में निमित्त की मुख्यता है। इसलिए कहा है–

निश्चय राखो लक्ष्य में जी, जो पाले व्यवहार।
पुण्यवंत ते पावसी जी, भव समुद्रनो पार।।

यहाँ उपादान-निमित्त के परिप्रेक्ष्य में निश्चय से अभिप्राय उपादान (आत्मा) से, तथा व्यवहार से अभिप्राय द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि निमित्तों से समझना चाहिए। यद्यपि जो स्व से भिन्न हैं, ऐसे निमित्तों में इच्छानुसार बदलाव संभव नहीं है। फिर भी जो निमित्त हमारी प्रगति में अनुकूल हों, उनका सहयोग तथा जो प्रतिकूल हों उनकी उपेक्षा करने की व्यावहारिक प्रवृति होनी चाहिए। व्यवहार में प्रगति के लिए यह आवश्यक है। साधना में उपादान प्रमुख है, फिर भी निमित्त की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। कहा है–

उपादान का नाम ले, जो तजि देय निमित्त।
पाते नहीं सिद्धत्व को, रहे भ्रान्ति अनुरक्त।।

अतः जब तक 'सिद्धत्व' को उपलब्ध न हो, निमित्त को गौण करना या उपेक्षा करना उचित नहीं है। किन्तु अनुकूल निमित्त मिलने पर ही साधना करेंगे, यह विचार कतई उचित नहीं है। आत्मार्थी साधक को बिना प्रमाद किए सदा साधना में रत रहना चाहिए। कहा है–

''उपादान और निमित्त तो सब जीवों में वीर।
जे निज शक्ति सम्हालते, ते उतरे भव तीर।।''

-डागा सदन, संघपुरा, जिला-टोंक-304001 (राज.)

नारी-स्तम्भ

अष्ट प्रवचन माता का उपयोग गृहस्थ जीवन में भी

श्रीमती सुशीला बोहरा

उत्तराध्ययन सूत्र के 24 वें अध्ययन में पाँच समिति और तीन गुप्ति का वर्णन आता है, जिसमें साधु-साध्वियों के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को विवेकयुक्त जीवन जीने का सन्देश दिया गया है। इन्हें अष्ट प्रवचन माता भी कहते हैं, क्योंकि जैसे माता अपने बच्चे की सुरक्षा करते हुए उसके कल्याण की कामना करती है वैसे ही अष्ट प्रवचन माता साधु-साध्वियों के चारित्र की सुरक्षा कर उनको 18 पापों से बचाते हुए मोक्षमार्ग में प्रवृत्त करती है।

प्रतिक्रमण के अन्तर्गत 'इच्छामि ठामि' के पाठ में 'तिण्हं गुत्तीणं' शब्द आता है, जो श्रावक को मन, वचन, काया के अशुभ व्यापार को तिलाञ्जलि देने की प्रेरणा करता है। हालांकि श्रावक के लिये समिति का सीधा कथन नहीं हुआ है, तथापि दशाश्रुत स्कन्ध एवं उपासक दशांग में श्रावक की ग्यारहवीं श्रमणभूत प्रतिमा में इसका संकेत उपलब्ध है। सर्वविरति संयमी के लिये किया गया विधान स्थूलरूप से देशविरति में भी संभव है। श्रावकों का पहला स्थूल - 'थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं' के अन्तर्गत स्थूल हिंसा के त्याग तथा 'थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं' में स्थूल मृषा के त्याग आदि अणुव्रतों के परिप्रेक्ष्य में समिति-गुप्ति का चिन्तन अत्यन्त उपयोगी है।

भगवान महावीर ने मुनिराजों के लिए पाँच महाव्रतों का पालन आवश्यक बताया है, वहीं श्रावकों के लिये 5 अणुव्रतों का उल्लेख किया गया है। फिर अष्ट प्रवचन माता (समिति -गुप्ति) का श्रावक-श्राविका के द्वारा का व्यवहार में पालन कैसे किया जा सकता है, इस पर चिन्तन प्रस्तुत है-

समिति-

समिति का तात्पर्य है संयमी-जीवन की रक्षा के लिये उपयोगपूर्वक की जाने वाली प्रवृत्ति, जिसके प्रभु ने 5 प्रकार बताये हैं, यथा-

1. ईर्या समिति:- संयम की रक्षा हेतु चलने फिरने की सम्यक् (निर्दोष) प्रवृत्ति को ईर्यासमिति कहते हैं। साधु-साध्वी 6 काया के जीवों के प्रतिपालक होते हैं। अतः वे अपने चलने-फिरने की प्रवृत्ति से, छह काया के जीवों की हिंसा न हो,

इसका उपयोग रखते हैं। लेकिन श्रावक-श्राविका को अपने परिवार के पालन-पोषण हेतु धनोपार्जन तथा आरम्भ-परिग्रह आदि करने पड़ते हैं, ऐसी स्थिति में वे स्थूल हिंसा के त्यागी हो सकते हैं। वे स्थावर जीवों की हिंसा से तो पूर्णत:बच नहीं सकते, परन्तु विवेक रखकर स्थावर जीवों की अनावश्यक हिंसा से बच सकते हैं। पौषध, संवर, दया, सामायिक आदि के समय तो वे त्रस एवं स्थावर दोनों ही प्रकार के जीवों की विराधना से बच सकते हैं।

भगवान ने ईर्या समिति के रक्षण के लिये आलम्बन, काल, मार्ग और यतना ये चार उपाय बताये हैं:-

(1) **आलम्बन**- ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की रक्षा के लिये एवं वृद्धि के लिये ही चलें। एक से 12 व्रतधारी श्रावक ज्ञान-दर्शन की आराधना, संत-मुनिराजों के दर्शन-वंदन, जिनवाणी-श्रवण के लिये तो चले ही, लेकिन गृहस्थ की गाड़ी चलाने के लिये अपने द्वारा 12 व्रतों की रक्षा करते हुए तथा 14 नियमों का पालन करते हुए धनोपार्जन यानी नौकरी या व्यवसाय करे, परन्तु पच्चक्खाणों की लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन न करे। उपासक दशांग में आनन्द आदि श्रावकों का वर्णन आता है, जिनके 40000 हजार गायें एवं उनकी रक्षा से सम्बन्धित सामग्री की सीमा रखी हुई थी। हम भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार लाखों-करोड़ों की सम्पत्ति रख कर मर्यादा कर सकते हैं, किन्तु सम्पूर्ण दुनिया के धन की तुलना में वह सिन्धु में बिन्दु के समान होगी। इस प्रकार अनावश्यक क्रिया तथा इच्छाओं पर ब्रेक लगा सकते हैं। ब्रेक युक्त कार जैसे हमें सुरक्षित गन्तव्य तक पहुँचा देती है वैसे ही इच्छाओं पर नियंत्रण जीवन को मोक्षमार्ग की ओर ले जा सकता है। श्रावक को चाहिए कि वह व्यर्थ के खेल-तमाशों, घूमना-फिरना, सप्त कुव्यसनों आदि की पूर्ति के लिये न चले। इससे अनावश्यक पापों से बच सकेगा और अपने जन्म-मरण की शृंखला को भी सीमित कर लेगा।

(2) **काल**- श्रावक-श्राविका को पौषध, दया, संवर, प्रतिक्रमण आदि करते समय तो दिन-रात में पूँजकर एवं देखकर चलना ही है, पर सांसारिक कार्यों को करते समय भी देखकर चलना जीव-रक्षा और जीवन-रक्षा की दृष्टि से उपयोगी है।

(3) **मार्ग**- कुपथ को छोड़कर सुपथ पर चलना। इससे वह सुरक्षित रहेगा तथा अनावश्यक रूप से भटकेगा भी नहीं।

(4) **यतना**– यतना के भी चार भेद हैं। **द्रव्य से**– छः काया के जीवों को तथा काँटे आदि को देखकर चलना। **क्षेत्र से**– चार हाथ आगे देख कर चलने से ठोकर आदि नहीं लगेगी, कार, टैक्सी आदि से होने वाली दुर्घटना से बच सकेंगे। वाहन के उपयोग के समय भी विवेक रखना लाभदायक ही है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है–

नीचे देखिया गुण घणा, पड़ी वस्तु मिल जाय।
ठोकर की लागे नहीं, जीव हिंसा बच जाय।।

काल से– दया, संवर, पौषध करते समय श्रावक-श्राविका को यतना से चलना है तथा सामान्य तौर पर भी दिन-रात में देखकर चलना लाभदायक ही है। **भाव से**– पाँच इन्द्रियों के विषय और पाँच स्वाध्याय इन दस बोलों को टालकर उपयोग सहित चलना व्रतों के समय तो आवश्यक है ही अन्य कार्यों को करते समय भी यतना या विवेक रखना बुद्धिमत्ता ही है।

2. भाषा समितिः– निरवद्य वचन बोलने की सम्यक् प्रवृत्ति को भाषा समिति कहते हैं। अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, मौखर्य (वाचालता) और विकथा इन आठ दोषों को टालकर बोलना चाहिए। इन्हीं के कारण झगड़े-फसाद, मार-पीट तथा गलत कार्य होते हैं। इस समिति के भी चार भेद हैं–

द्रव्य से– सावद्य (पापयुक्त) कठोर, कर्कश, छेदक, भेदक, निश्चयात्मक, क्लेशकारी, सावद्य तथा मिश्र भाषा का त्याग करके बोले। श्रावक इन बातों का त्याग करके बोलता है तो परिवार में प्रेम तथा समाज में प्रतिष्ठा मिलती है, रिश्तों में मिठास आती है तथा वह सबका प्रियभाजन बन सकता है। **क्षेत्र से**– मार्ग में चलते समय बात न करना व्यावहारिक है। **काल से**– व्रतों में (पौषध, सामायिक, संवर, दया में) रात्रि को प्रहर के बाद बोलना निषिद्ध ही है। सरकार द्वारा भी रात्रि को दस बजे के बाद लाउडस्पीकर का उपयोग करने पर पाबन्दी है। **भाव से**– राग-द्वेष रहित उपयोगपूर्वक बोलने से अनर्थदण्ड के पापों से बच सकेंगे, क्योंकि 'भावना भवनाशिनी'। भावना ही नरक निगोद में ले जाती है और भावना से ही मुक्ति मिलती है। प्रसन्नचन्द्र राजर्षि का उदाहरण हमारे सन्मुख है। मारने की भावना से कुछ क्षण पहले जो नरक गति (नामकर्म की प्रकृति) का बंध कर रहा था कुछ क्षण बाद ही भावों ने पलटा खाया और चिन्तन करते केवलज्ञान हो गया।

3. एषणा समितिः– साधु द्वारा 42 दोष टालकर भिक्षा आदि लेने की सम्यक्

(निर्दोष) प्रवृत्ति को एषणा समिति कहते हैं, जिसके तीन भेद हैं:-

1. गवेषणैषणा- आहार आदि ग्रहण करने से पहले शुद्धि-अशुद्धि की खोज करना गवेषणैषणा है। साधु तो इसका पालन करता ही है तथा दया के समय श्रावक-श्राविका भी भोजन की शुद्धि-अशुद्धि एवं सचित्त-अचित्त का अन्वेषण करते हैं। व्यवहार में आज की इस होटल संस्कृति में प्रतिदिन यह अन्वेषण बहुत उपयोगी है। होटल तथा बाजार में निर्मित खाने-पीने की वस्तुएं भक्ष्य हैं या अभक्ष्य, सामिष हैं या निरामिष, इसकी खोज करना बहुत आवश्यक हो गया है। बिस्कुट, केक यहाँ तक कि टॉफी तक सामिष होती है। जिनके रेपर पर कई बार हरे, लाल और गहरे लाल निशान भी होते हैं। हरा का आशय वेजीटेरियन यानी निरामिष (शाकाहार), लाल रंग का आशय सामिष (Non-veg), गहरे लाल या कत्थई रंग का आशय प्रत्यक्ष रूप से जीवों के अंग-प्रत्यंगों से बना पदार्थ है। आजकल ये निशान सभी प्रकार की दवाइयों के रेपर पर भी, डिब्बे पर भी, कोल्ड ड्रिंक्स आदि पर भी लगे रहते हैं। इनकी जानकारी करने से, गवेषणा करने से, स्वास्थ्य की रक्षा के साथ हमारे व्रतों के पालन में भी सहायता मिलती है, जो हमें हिंसा की भागीदारी से होने वाले कर्मबन्धन से भी बचाती है। विदेशों में सरकार इसके प्रति काफी सजग है तथा इन निशानों का इस्तेमाल न करने पर कम्पनियों पर हजारों का जुर्माना लगाती है।

खाना बनाने से पूर्व भी गवेषणा बहुत उपयोगी है। मुझे एक दृष्टान्त स्मरण में आ रहा है - एक सेठानी अपने पति को जबरदस्ती सन्त-मुनिराज के दर्शनार्थ ले गई। महाराजजी ने कुछ नियम लेने की प्रेरणा की तो उनका मखौल उड़ाने के लिये उसने भाटा (पत्थर) न खाने का पच्चक्खाण ले लिया। महाराजजी ने पच्चक्खाण की शुरुआत समझकर तथा इसे भी उपयोगी समझकर पच्चक्खाण करवा दिये तथा सेठानी को भी इसका पालन करवाने में सहयोग करने को कहा। सेठानी घर आकर खाना बनाने से पहले दाल-चावल, गेहूँ आदि को थाल में डालकर देखने लगी कि इनमें कोई कंकर-पत्थर न रह जाय। नौकर आदि तो यह विवेक रखते नहीं, अत: आज उसने इसकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। उसे कंकर, पत्थर तो मिले ही, साथ में लट, इली आदि जीव भी मिले। उसने दो कटोरियाँ ली एक में कंकर, दूसरे में त्रस जीव डालने प्रारंभ किये तथा सेठ जब खाना खाने बैठे तो सब्जी के अलावा वे दोनों कटोरियां भी साथ रख दी। सेठ ने कहा- यह क्या मजाक है? उसका उत्तर था- यह खाना बनाने से पूर्व की गई गवेषणा तथा आपके पच्चक्खाण की सुरक्षा के लिये किये गये कार्य का परिणाम है।

2. ग्रहणैषणा– आहार आदि ग्रहण करने से पहले शुद्धि-अशुद्धि का ध्यान रखना ग्रहणैषणा है। हम भी अपनी थाली में भोजन लेते समय ध्यान रखते ही हैं कि जमीन अथवा हमारे कपड़ों पर भोजन की सामग्री गिर न जाय, अधिक भोजन थाली में नहीं परोसा जाय।

3. परिभोगैषणा– आहार करते समय या भोजन करते समय शुद्धि-अशुद्धि का उपयोग रखना।

श्रावक इन बातों का ध्यान रखकर मुनिराज के महाव्रतों के पालन में भी सहयोगी बन सकता है। **द्रव्य से-** साधु को आहार देने से पूर्व श्रावक साधु को प्रासुक वस्तु की गवेषणैषणा करे, **क्षेत्र से–** घर से स्थानक आदि में लाकर साधु को आहार नहीं दे, **काल से–** दिन में अनाज आदि की संभाल करे, बिजली के साधु को प्रकाश में रात्रि में अच्छी तरह से गवेषणा नहीं हो सकती। **भाव से–** साधु को आहार देते (बहराते) समय 42 दोष टालकर आहार देवे। 16 दोष आहार दाता के निमित्त से लगते हैं, जिन्हें उद्गम के दोष कहते हैं।

गाथा – आहाकम्मुद्देसिय, पूईकम्मे य मीसजाए य।
ठवणा, पाहुडियाए पाओअर कीय पामिच्चे।।1।।
परियट्टिए अभिहडे, उब्भिन्ने मालोहडे इय।
अच्छिज्जे अणिसिट्ठे, अज्झोयरए य सोलसमे।।2।।

साधु के लिये आरम्भ कर बनाया हुआ आहार आधाकर्मी दोषयुक्त होता है। साधु इसे लेवे तो औद्देशिक दोष युक्त आहार कहलाता है। इसी प्रकार सूझते आहार में अंशमात्र भी आधा कर्मी आहार मिला हुआ, अथवा दोनों को मिश्रित करके बनावे, साधु के निमित्त करके रखना, मेहमानों को आगे पीछे बुलाना यानी उस दिन मेहमानों को बुलाऊँ जिस दिन महाराज जी के आने की संभावना हो, इससे मैं उनको अच्छा आहार दे सकूँगा, अंधेरे में प्रकाश करके या बिजली जलाकर उजाला करके आहार लाकर देना, उनके लिए खरीद कर देना, उधार लाकर देना, साधु के निमित्त वस्तु परिवर्तित करके, साधु के निमित्त सामने लाकर देना, लेपनादि - ढक्कन आदि अयतना से खोलकर देना, सीढ़ी, निसरणी आदि लगाकर ऊपर रखा हुआ आहार लाकर देना, बच्चों आदि निर्बलों से छीनकर अथवा किसी के निमित्त से बनी वस्तुओं में से बिना उनसे पूछे आहार देना, अथवा साधु को आया जानकर उसकी मात्रा में बढ़ोतरी करना आदि, इससे साधु व श्रावक दोनों ही पाप के भागीदार बनते हैं।

उत्पादना के 16 दोष :-

गाथा- धाई दूई निमित्ते य, आजीव वणीमगे तिगिच्छा य।
कोहे माणे माया लोहे, य हवंति दस भए ।।3।।
पुव्विपच्छासंथवं, विज्जा मंते य चुण्ण जोगे य।
उप्पायणाई दोसा, सोलसमे मूलकम्मे य।।4।।

ये दोष जीभ की लोलुपतावश लगते हैं जैसे - धाय माता की तरह बच्चे को खिलाकर, दूती की तरह संदेश पहुँचाकर, निमित्त ज्ञान - भूत, भविष्य, वर्तमान काल के लाभ-अलाभ आदि बताकर, अपनी जाति कुल आदि बताकर, भिखारी की तरह दीनता से मांगकर, वैद्य की तरह चिकित्सा करके, क्रोध करके - गृहस्थ को शाप आदि का भय दिखाकर, मान करके, कपटाई (माया) करके, लोभ करके अथवा लोभ बताकर, पहले या पीछे दाता की प्रशंसा करके, अधिष्ठात्री देवी की साधना करके, प्राप्त विद्या का प्रयोग करके अथवा अधिष्ठाता देव की साधना से मंत्र का प्रयोग करके, चूर्ण आदि को मिलाकर सिद्धि का प्रयोग कर, लेपनादि सिद्धि यानी जिसके लेप से आकाश में उड़ना, जल पर चलना आदि बतलाकर, गर्भस्तंभन, गर्भाधान, गर्भपातादि के योग्य जड़ी-बूँटी दिखलाकर अथवा औषध बतलाकर आहारादि लेवे। श्रावक भी अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने, अपना वर्चस्व दिखाने के लिए इनका उपयोग कर सकता है।

ग्रहणैषणा के चार भेद - **द्रव्य से-** दया-संवर के समय श्रावक कल्पनीय-प्रासुक वस्तु को ग्रहण करे। **क्षेत्र से-** श्रावक भी भिक्षुदया के समय अधिक दूरी से आहार नहीं लावे। **काल से-** श्रावक भी पौषध, दया-संवर में दिन में देखकर, पाट - पाटलादि ग्रहण करे । **भाव से-** शंकादि 10 दोष रहित आहार लेवे और श्रावक देवे।

इस प्रकार 10 दोष हैं - ये गृहस्थ तथा साधु दोनों को लगते हैं, क्योंकि साधु आहार लेने वाला है तथा गृहस्थ आहार देने वाला है।

गाथा - संकियमक्खिय निक्खित्त, पिहिय साहरिय दायगुम्मीसे।
अपरिणय लित्त छंडुय, एसणा दोसा दस हवंति।

गृहस्थ एवं साधु प्रासुक आहार की शंका हो जाने पर भी आहार लेवे या देवे, सचित्त पानी से हाथ की रेखा एवं बाल भीगें हो उसके हाथ से आहारादि लेवे या देवे, सचित्त वस्तु पर रखा निर्दोष आहार लेवे या देवे, निर्दोष वस्तु

सचित्त से ढकी हुई हो ऐसा आहार लेवे या देवे, सचित्त वस्तु जिस बर्तन में पड़ी हो उसे निकाल कर उसी में प्रासुक आहार आदि लेवे या देवे, अंधा, लूला, लंगडा आदि अपंग से वस्तु लेवे या देवे, मिश्रित वस्तु लेवे या देवे, बिना शस्त्र परिणत (अचित्त न बना हुआ) आहार लेवे अथवा देवे, तुरन्त लीपी हुई भूमि पर से जाकर आहार लेवे या देवे, अशनादि की बूंदे जमीन पर गिरते हुए आहार लेवे या देवे, तो यह त्याज्य है।

परिभोगैषणा के चार भेद –

द्रव्य से– दया, संवर करते समय आहार, वस्त्र आदि लेना, **क्षेत्र से–** सभी क्षेत्रों में यतना रख कर, **काल से–** श्रावक साधु को आहार-पानी प्रासुक बहरावे। **भाव से–** मांडला के 5 दोष टालकर उपयोग सहित (राग, द्वेषादि रहित) ग्रहण करे। ये पाँच दोष साधु व श्रावक को सामान्यत: अथवा दया-संवर के समय आहार करते समय लगते हैं। अच्छा स्वाद या गन्ध उत्पन्न करने के लिये नमक, मिर्च, केसर, इलायची आदि पदार्थ मिलाना संजोयणा दोष है। तृष्णा अथवा जिह्वा के स्वाद के लिये खुराक (प्रमाण) से अधिक आहार करना अप्रमाण दोष है। इससे पेट में शूलादि रोग, आलस्य, असमय में निद्रा आदि की सम्भावना रहती है, तथा रसनेन्द्रिय की तुष्टि की लालसा बढ़ती है एवं ज्ञानादि में अवरोध उत्पन्न होता है। भोजन में स्वाद की प्रशंसा करना दोष है। साधु तो इसका विवेक रखता ही है, श्रावक-श्राविकाओं को बहुओं-बच्चों को प्रोत्साहित करने के लिए कभी कभार प्रशंसा करनी पड़े, यह अलग बात है। लेकिन आन्तरिक दृष्टि से उसे निस्पृही ही रहना चाहिये।

मांडला के 5 दोष– साधु को ही नहीं, गृहस्थ को भी आहार करते समय इन दोषों को वर्जित कर चलना चाहिये- भोजन करते समय ऊपर से नमक आदि लेना, दूसरी सुगन्ध वाली चीजों को मिलाना, खुराक से अधिक खाना, अच्छे भोजन की प्रशंसा तथा अरुचिकर भोजन की निंदा करते हुए खाना, बिना कारण आहार करना। ऐसा करने से बनाने वाले के मन में भी अधिकाधिक आरम्भी भोजन बनाने की वृत्ति बढ़ेगी, अधिक मिर्च मसाले खटाई का प्रयोग करने से पेट की बीमारियाँ होंगी, ऊपर से नमक लेने पर बी.पी. बढने की संभावना रहती है। श्रावक के 14 नियमों के पालन में कच्चापन आयेगा। अतएव गृहस्थ एवं साधु दोनों के लिये इसका ध्यान रखना कर्मबन्धन से बचाव की दृष्टि से तो उपयोगी है ही, स्वास्थ्य की दृष्टि से भी लाभदायक है। पुरानी कहावत है- 'उतरिया घाटी

और हुयो माटी।' अर्थात् जीभ का स्वाद 4 अंगुल तक है। ज्योंही गले से नीचे उतरा, सब मिश्रित बन जाता है। साधु 6 कारणों से आहार करता है। श्रावक-श्राविकाओं को भी इसका ध्यान रखना चाहिये। वे कारण हैं-

यथा-

वेयणं वेयावच्चे, इरियट्ठाए य संजमट्ठाए।
तह पाण वत्तियाए, छट्ठं पुण धम्मचिंताए।।

(1) भूख मिटाने के लिये, (2) गुरु, माता-पिता, बीमार आदि की सेवा के लिये,(3) ईर्या समिति की रक्षा के लिए, (4) संयम की रक्षा के लिये, (5) प्राणों की रक्षा के लिये तथा (6) धर्म-साधना, चिन्तन-मनन, ध्यान आदि करने के लिये आहार करना चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा वाले तो स्वस्थ शरीर के लिये इन सबको आवश्यक मानते हैं और हम भी सात्त्विक आहार करेंगे तो विचार भी सात्त्विक आयेंगे, क्योंकि जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन। आहार छोड़ने के भी 6 कारण बताये गए हैं-

आयंके उवसग्गे, तितिक्खया बम्भचेरगुत्तीसु।
पाणिदया तवहेउं, सरीर वोच्छेयणट्ठाए।।

(1) शूलादि रोग उत्पन्न होने पर, (2) देवता, मनुष्य, तिर्यंच संबंधी उपसर्ग आने पर जैसा कि सुदर्शन सेठ को अर्जुनमाली यक्ष द्वारा उपसर्ग देने पर, (3) ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये, (4) प्राणियों की रक्षा के लिये, (5) तपश्चर्या करने के लिए तथा (6) संलेखना-संथारा करने के लिये आहार का त्याग करना चाहिए। इन कारणों का उपयोग कई श्रावक-श्राविकाएँ व्यवहार में करते भी हैं।

4. आदान-भाण्ड-मात्र निक्षेपणा समिति:- भंडोपकरण लेने और रखने में प्रतिलेखन और प्रमार्जन की सम्यक् (निर्दोष) प्रवृत्ति।

विवेकशील श्रावक-श्राविका भी पौषध, संवर, सामायिक आदि करते समय इन सबका विवेक रखते हैं, घर-गृहस्थी के कार्यों को करते समय भी इनका ध्यान रखने का प्रयास करते हैं। इससे जीवों की अनावश्यक हिंसा तथा दैनिक व्यवहार में भी बर्तनों की टूट-फूट आदि नहीं होती। उपधि (सामग्री) दो प्रकार की होती है-

1. **औधिक-** रजोहरण, वस्त्र, पात्र आदि सामग्री साधु-साध्वियों के पास हमेशा रहती है। श्रावक-श्राविका भी पौषध, संवर, सामायिक आदि के समय पूंजनी, साहित्य आदि का विवेक रखते हैं तथा घर-गृहस्थी में भी

उपभोग की वस्तुओं को इस भावना से पूंजकर रख सकते हैं।

2. **औपग्रहिक–** साधु कारण होने पर पाट–पाटलादि लेता है और लौटा देता है। श्रावक पौषध तथा दया, संवर के समय भी इसका पालन करता है। हम घर–गृहस्थी में भी आवश्यकता पड़ने पर मित्रों, पड़ौसियों से, अथवा किराये पर सामान लाते हैं, तो उनका उपयोग विवेकपूर्वक करेंगे जिससे न तो अनावश्यक तोड़–फोड़ होगी और न ही किसी से कहा–सुनी होगी।

5. **उच्चार–प्रस्रवण–खेल–जल्ल–सिंघाण परिष्ठापनिका समिति:–** पौषध, संवर, सामायिक के समय द्रव्य से उच्चार–मल, मूत्र, बलगम, नाक का मैल, शरीर का मैल, आहार–पानी, वस्त्रादि प्रासुक क्षेत्र में ही परठना चाहिए। दिन में देखकर, रात्रि में पूँजकर जहाँ जीव की उत्पत्ति न हो, पड़ौसी आदि को असुविधा न हो, चूहे आदि का बिल न हो, अचित्त भूमि हो, संमभूमि हो, छः काया के जीवों की रक्षा हो, ऐसे स्थंडिल के दस दोषों को टालकर परठना चाहिए। गृहस्थ जीवन में भी कचरा आदि डालते समय, मल–मूत्र, पान–गुटखे का पीक थूकते समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिए, अन्यथा पड़ौसियों से लड़ाई, शासन की हीलना तथा हमारी लापरवाही का मखौल होता ही है।

गुप्ति–

मन, वचन और काया की अशुभ प्रवृत्ति को रोककर आत्म–गुणों की सम्यक् रक्षा करने की प्रवृत्ति गुप्ति कहलाती है।

1. **मनोगुप्ति–** मन से अशुभ चिन्तन करना, जैसे– दूसरों की हानि पहुँचाने का विचार करना कि ऐसा ध्यान करुँगा कि वह मर जाय, यह संरंभ है। दूसरों को हानि पहुँचाने की मानसिक योजना बनाना समारंभ तथा दूसरों को मन के तीव्र अशुभ भावों से हानि पहुँचाना आरंभ है। इन सबका द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से जीवन पर्यन्त तथा भाव से उपयोग सहित त्याग न केवल साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका के लिये अत्यावश्यक है वरन् सामान्य जन–जीवन के लिये भी उपयोगी रहता है। क्योंकि भगवान ने कहा है– 'परिणामे बंधो परिणामे मोक्खो' अर्थात् भावों से ही कर्मबंध का संबंध है। मुनिराज को आहार बहराते समय नागश्री की गलत भावना उसे नरक में ले गई और शुद्ध भावना वाले ग्वाले को शालिभद्र के जैसा महान समृद्धिशाली जीवन मिला।

2. **वचन गुप्ति–** वचन की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना वचन गुप्ति है। दूसरों को

मारने में समर्थ ऐसे संकल्प को सूचित करने वाला शब्द बोलना संरंभ है। दूसरों को पीड़ा उत्पन्न करने वाला मंत्रादि गुनना समारंभ तथा प्राणियों का अत्यन्त क्लेशपूर्वक नाश करने में समर्थ मंत्रादि गुनना आरंभ कहलाता है। व्रत के समय श्रावक-श्राविका इसका ध्यान रखते ही हैं, व्यवहार में भी प्रत्येक व्यक्ति सभी व्यक्तियों के साथ बातचीत करते समय मीठा बोले, व्यावहारिक भाषा बोले, स्नेहयुक्त बोले, सकारात्मक बोले तो समाज में प्रतिष्ठा, घर में शांति तथा मित्रों के साथ आत्मीयता बढ़ती है।

3. **कायगुप्ति-** काया की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना यानी चलने, खड़े रहने, बैठने, सोने में विवेक रखना। यष्टि-मुष्टि आदि से डांटने के लिये तैयार होना संरंभ, दूसरों को पीड़ा पहुँचाने हेतु थप्पड़-लात आदि से प्रहार करना समारंभ तथा वध करने, जीवन रहित क्रिया करना आरंभ है। द्रव्य से सभी के साथ, क्षेत्र से सभी क्षेत्रों में, काल से जीवन-पर्यन्त और भाव से उपयोग सहित प्रवृत्ति करना साधु-साध्वियों के लिये भगवान ने आवश्यक बताया है। श्रावक-श्राविका के लिये व्रत के समय ही नहीं, जीवन-पर्यन्त इसका विवेक रखना शोभा ही नहीं देता, अपितु आपसी झगड़ों से बचने, शान्ति से रहने, अनावश्यक हिंसादि पाप लगाने से भी बचाता है।

अतएव समिति-गुप्ति को समझकर विवेकयुक्त जीवन जीने से श्रावक-श्राविका हो अथवा सामान्य व्यक्ति, सभी का जीवन सुखमय होगा, समाज में शांति तथा विश्व-प्रेम की भावना का विस्तार होगा, कर्मबन्ध कम होंगे, पाप कार्यों में अधिक प्रवृत्ति नहीं बढ़ेगी तथा सम्यग्ज्ञान - दर्शन - चारित्र रूप त्रिरत्न की साधना करते हुए मोक्षगामी बन सकेंगे।

-संयोजक, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राज.)
जी-21, शास्त्रीनगर, जोधपुर (राज.)

क्षमा-याचना

'जिनवाणी' पत्रिका के समस्त पाठकों एवं लेखकों से हमारा नियमित सम्बन्ध रहता है। हमारी ओर से रही भूल के कारण आपके हृदय को ठेस पहुँचना स्वाभाविक है। हम अपनी भूल का परिमार्जन करते हुए आपसे पर्वाधिराज पयुर्षण पर्व की आराधना करते हुए निर्मल हृदय से क्षमा याचना करते हैं। आशा है आप क्षमा करेंगे।

-सम्पादक, सह सम्पादक एवं जिनवाणी परिवार

English-Section

GURU : A Light in Life

Ku. Deepti Jain

In these testing times the value system of our life style is undergoing a rampant change. The wavering virtue, the wounded truth, the disturbed divinity and the disgusting breach of morality have landed us all more or less in an incessant spell of violence, vulgarity, conflict, disharmony, distrust and dishonesty. There has been felt a necessity to combat such deviation from the moral plane and to counter the progressive pollution in human mind. The experience of our living civilization in the past points out that our country had remained the spiritual leader in matters of men of religion and realization.

Among all the great personalities of the world, Acharya guru Hasti is remembered with great respect and reverence. He realised his true self and attained true knowledge. He was an embodiment of non-violence and compassion.

In my voyage of discovery I had the opportunity once to meet the great Jain Guru Sri Hastimal ji. In the very first encounter he appeared to be a man of word and wisdom. I found him a saint par excellence. He was multifaceted personality having command over a vast range of spiritual subjects. His observations during discourses were aimed generally to make the lives of listeners free from illusions and vices. According to him any person can attain supreme heights and glory in life by following the righteous path of conduct free from violence, greed, selfishness, dishonesty and disobedience.

Lord Mahavira gave great importance to an Acharya in imparting of knowledge. An Acharya should lead a life of austerity and penance. He said, "Just as a lamp lights hundreds of other lamps and yet remains lighted, so are the Acharyas who enlighten others and remain enlightened themselves." In

this view Acharya shree Hasti had a record of long Sadhna for 70 years. Such examples of glorious success in the field of spiritual attainment are very rare. Pujya Gurudev was a source of spiritual rays to millions of his followers all over the country. He had not only preached ideology of Bhagwan Mahaveer but also practised them without any exception.

He remained Acharya for 60 Years and given long lasting solutions to the problems faced by the entire society in general and jain community in particular. His stress on Samayik and swadhyay is unparallel example in the recent history of Jain religion which has proved most effective philosophy for achieving the ultimate supreme aim of the life. Acharya Shri was a connoisseur who could read the depth of contents in one's mind. He believed in maximum good of maximum number of people, which made him a rare combination of highest achievements on the spiritual horizon. He used to stress the undisturbing quality of mind which could help one to sail smoothly on the ocean of life full with trouble, turmoil and turbulence.

He was a Guru free from the notion of attachment in what ever form. He was not interested in gaining name and fame. He was also having the rarest quality of penetrating in the unknown secrets of time and could see through the veils of fluctuating wheel of fortune and misery. Acharya Shri used to give blessings to each individual who used to visit him.

It would be a real tribute to such a great Guru, if we are able to take his message further to our country & international society for ultimate good of human kind. I offer my "PRANAMS" to him. I offer 'PRANAMAS' to his disciple Acharya Shri Heera Chandra ji also for his great value oriented life and sermons. He is a real saint, who is enlightening the people with real knowledge and conduct.

"Lives of great men all reminds us, we can make our lives sublime and departing leave behind us, foot prints on the sands of time."

-H.No. 7, Suraj Sadan, Near Suman Bharti School,
Gulab Bari, Ladpura, Kota-324006 (Raj.)

पत्र-स्तम्भ

दीवार जब टूट जाती है (7)

आचार्य विजयरत्नसुंदरसूरि जी

दो भाइयों में परस्पर किसी भी बात को लेकर अनबन हो सकती है एवं वे एक-दूसरे के प्रति घृणा तथा द्वेष से आविष्ट होकर कलह कर सकते हैं। ऐसे भाइयों में सुलह होना कितना कठिन है, यह तथ्य जानें यहाँ भाई यश एवं महाराज के पारस्परिक पत्रों के संवाद से।-**सम्पादक**

यश,

यह बात करते-करते उस युवक की आँखों से बह रहे
आँसुओं को देखकर मेरी आँख भी अश्रुओं से छलक गई।
मैं तुमसे यही पूछता हूँ-
उस युवक के पक्ष में सत्य था या नहीं?
बड़े-भैया के विरुद्ध उस युवक का किया हुआ मुकदमा जायज़ था या नहीं?
तुम्हें कहना ही पड़ेगा कि 'हाँ।'
परंतु उस सत्य के लिए युवक द्वारा किए गए संघर्ष ने
उसे उपहार में क्या दिया था?
क्लेश,
तनाव और
दुश्मनी।
दोनों भाई एक ही घर में रहते थे
और इसके बावजूद एक-दूसरे से बात नहीं करते थे।
कोर्ट में आमने-सामने हो गए थे।
शायद वर्षों तक दोनों झगड़ते ही रहते
यदि छोटे भाई ने सत्य अपने पक्ष में होने पर भी
उसे छोड़ देने की उदारता नहीं दिखाई होती।
वंशपरंपरा विरासत में दुश्मनी मिली होती
यदि बड़े भैया के कठोर शब्द सुनने के बाद भी

छोटे भाई ने बड़े भैया से माफी माँगने के मामले में समझौता कर लिया होता।
किन्तु नहीं,
छोटे भाई ने व्यावहारिक सत्य को गौण करने की तथा
उसे छोड़ देने की हिम्मत दिखाई
और उसके कल्पनातीत परिणाम का अनुभव
केवल छोटे भाई को ही नहीं, बड़े भाई को भी हुआ।
कोर्ट में जो भी फैसला होता
उससे एक भाई को आनंद होता और दूसरे को दुःख।
पर यहाँ तो दोनों भाई आनंदित हो गए।
दोनों के संबंध में आत्मीयता पैदा हो गई।
मकान के बँटवारे के लिए झगड़ा शुरु हुआ था
वह बात महत्त्वहीन बन गई
और समस्त परिवार में प्रसन्नता का वातावरण फैल गया।
वंशानुगत चलने वाली दुश्मनी की वृत्ति पर
पूर्णविराम लग गया और
मैत्रीभाव का मंगल प्रारंभ हो गया।
यश,
अब तो तुम मानोगे ना कि
पारमार्थिक सत्य को सम्हालने के सिवाय इस जीवन में
और कुछ भी करने जैसा नहीं है।
ठीक है, मैं और तुम, संसार में बैठे हैं।
कुछ व्यवहार तुम्हें सम्हालने पड़ते हैं
और मुझे भी साधुजीवन में कुछ व्यवहार सम्हालने पड़ते हैं।
और इसीलिए
व्यावहारिक सत्य को भी महत्त्व देना पड़ता है।
परंतु जिस क्षण ऐसा महसूस हो कि
पारमार्थिक सत्य का बलिदान लिया जा रहा है,
शरीर एवं मन के सुख को प्रधानता देने में
आत्मा के हित की उपेक्षा करनी पड़े ऐसी स्थिति बन रही है,

इस लोक को सम्हालने में
डरावने परलोक का रिजर्वेशन हो रहा है
उसी क्षण व्यावहारिक सत्य को छोड़ देने के लिए
मुझे और तुम्हें तत्पर रहना होगा।
वैसे भी,
प्रातिभासिक सत्य को छोड़ने में कोई परेशानी नहीं होती,
क्योंकि उसमें अहं तोड़ना नहीं पड़ता,
पदार्थ के क्षेत्र में नुकसान झेलना नहीं पड़ता।
जबकि व्यावहारिक सत्य को छोड़ने में तो कैसा पराक्रम
करना पड़ता है वह तुम्हें समझाने की कोई आवश्यकता नहीं है,
क्योंकि मुझे भी उसका अनुभव है और तुम्हें भी।
महाराज साहब,
आपके पिछले तीन पत्र मैंने चार बार पढ़े।
मुलुंडवाले युवक के सत्य प्रसंग की बात पढ़ते हुए मैं अपने
हृदय पर काबू न रख सका, आँखों को रोक न सका।
मैं सुबक-सुबककर रो पड़ा।
उस युवक ने जो छोड़ा
उसमें से कुछ भी छोड़ने की मुझे आवश्यकता नहीं है और
फिर भी छोटी-छोटी बातों को अनावश्यक महत्त्व देकर
बड़े भैया के प्रति मेरे सम्बन्धों में मैंने किस हद तक कटुता पैदा कर दी है
उसका विचार करते-करते मैं गमगीन हो गया।
''बड़े भैया बाहर गाड़ी में गये
और मैं टेक्सी में जाऊँ?
व्यापार में बड़े भैया अपनी मरजी के मुताबिक माल लाए
और मुझे उनसे पूछकर ही माल लाना?
श्रेय लेना हो तब बड़े भैया आगे आये और सारा काम मैं ही करूँ?
भाभी के लिए बड़े भैया को जब इच्छा हो तब गहने लाने की छूट
और मेरी पत्नी के लिए कुछ भी लाने से पहले
मुझे बड़े भैया के कानों में बात डालना?

मुझे पूछे बिना बड़े भैया घूमने जा सकते हैं
और मुझे तीर्थ-यात्रा पर जाना हो तो भी बड़े भैया को पूछना ?
ऐसे कई तुच्छ कारणों को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देकर
''जैसे के साथ तैसा'' की नीति अपनाकर मैंने बड़े भैया के साथ
ऊँची आवाज में बात करना शुरु कर दिया।
और आज परिणाम यह आया है कि
बड़े भैया और मेरा सम्बन्ध
बिना शक्कर के दूध जैसा, बिना नमक के नमकीन जैसा और
बिना चटनी की भेल जैसा बन चुका है।
उस युवक ने अपने बड़े भैया के विरुद्ध कोर्ट में मुकदमा दायर किया था
जबकि मैंने मन की अदालत में बड़े भैया को
अपराधी के कठघरे में खड़ा कर दिया है।
दिन उगता है और मैं प्रतिदिन उन पर नया-नया आरोप मढता जाता हूँ।
कोई सजा तो मैं उनको दे नहीं सकता, परंतु
निरंतर उनकी उपेक्षा करते रहकर उनको
बेचैन बनाता रहता हूँ, उनको उद्विग्न बनाता रहता हूँ।
महाराज साहब, ये सब सोचते-सोचते
बड़े भैया का चेहरा मेरी आँखों के सामने आ गया
और मैं अंदर से क़ाँप उठा।
उस युवक ने खुद होकर अपने बड़े भैया को नींद से जगाकर
सत्य स्वयं के पक्ष में होने पर भी उनसे माफी मांग ली
तो मैं भी खुद होकर बड़े भैया से माफी क्यों न मांग लूँ?
आखिर मैं भी कहाँ निर्दोष हूँ?
मन में जाग्रत हुए विचार को अमल में लाने के लिए
मैं तुरन्त ही बड़े भैया के कमरे तक पहुँच गया।
कमरे का दरवाजा खुला ही था, पर बड़े भैया
भाभी के साथ कुछ बात कर रहे थे।
'यश' शब्द सुनते ही मैं चौंक गया।
मुझे समझ में आ गया कि मेरी ही कुछ बात चल रही है।

जिज्ञासावश वह बात सुनने के लिए मैं वहीं खड़ा हो गया।
बड़े भैया भाभी से कह रहे थे
''क्या तुम अपनी देवरानी से बात नहीं कर सकती?''
''क्या करूँ?''
''यही कि यश के प्रति यदि मेरी ओर से कुछ अन्याय हो रहा हो
तो वह उससे जान ले, क्योंकि
मैं मेरे मित्रों की उपेक्षा सहन कर सकता हूँ, परंतु
यश की उपेक्षा सहन नहीं कर सकता।
मैं तुम्हारा उदास चेहरा देख सकता हूँ, पर
यश का उद्विग्न चेहरा मैं नहीं देख सकता।
आखिर वह मेरा छोटा भाई है।
पिताजी की अनुपस्थिति में उसे प्रसन्न रखने की जिम्मेदारी मेरी है।
महाराज साहब, मेरे पाँव कमरे के दरवाजे पर ही थम गए। (क्रमशः)

पर्युषण : जागने का पर्व

एक गाँव में एक अंधा आदमी रहता था, जो बहुत तार्किक बुद्धि वाला था। एक दिन एक आँख वाले व्यक्ति ने उससे कहा- सूरज उग आया है, प्रकाश फैल गया है। अंधे ने हाथ आगे बढ़ा कर कहा- प्रकाश? कहाँ है प्रकाश? मुझे छुआ कर बताओ। मैं भी जानूँ, कैसा है सूरज। आँखवाले ने कहा- नहीं भाई, वह तो बस दिखाई देता है। यह कोई ठोस नहीं है कि तुम छूकर, स्पर्श से जानो। अच्छा सुंघवाकर दिखाओ। नहीं उसकी कोई गंध नहीं है। उसकी आवाज सुनाओ। अगर प्रकाश है तो, जैसी तुम्हारी वाणी सुनता हूँ वैसे उसकी ध्वनि भी सुन लूँगा। परेशान हो गये गाँववाले कैसे बतायें प्रकाश है? वे सब मिलकर उसे एक गुरु के पास ले गये और कहा-''इसे दिखाई नहीं देता और मानता भी नहीं प्रकाश का अस्तित्व है। कैसे समझायें इसे''? गुरु ने कहा-''इसे डॉक्टर के पास ले जाओ, आँखों का इलाज कराओ। फिर प्रकाश को प्रमाणित करने की जरूरत नहीं रहेगी। प्रकाश तो स्वयं सिद्ध है, वह स्वयं प्रमाणित है। सिर्फ आँख चाहिए देखने की।'' पर्युषण के दिनों में हम अपनी आँखों का इलाज कर लें। यह इलाज का पर्व है। यह सूर्योदय का पर्व है। आँखें खोलने का, जागने का पर्व है।

-उपाध्याय साध्वी यशा

चिन्तन

जैन वैज्ञानिक भी जानें जैनदर्शन

प्रो. वीरसागर जैन

जैनदर्शन बड़ा ही वैज्ञानिक दर्शन है। उसका विचार-शास्त्र ही नहीं, आचार-शास्त्र भी आज विज्ञान द्वारा आश्चर्यजनक रूप से सिद्ध-सुपुष्ट किया जा रहा है। आज का युग वैज्ञानिक युग है और इसीलिए जैनदर्शन ही एक ऐसा दर्शन है जो आधुनिक युग के लिए सर्वाधिक उपयुक्त एवं विश्वसनीय सिद्ध होता है। किन्तु क्या इस दिशा में हम कोई ठोस प्रयत्न कर पा रहे हैं- यह गंभीरतापूर्वक विचारणीय है।

हमें जैनदर्शन के आचार-विचार को दुनिया के तमाम वैज्ञानिकों तक पहुँचाने का कोई ठोस उपक्रम अवश्य करना चाहिए। यह समय इस कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है। हमें प्रमाद छोड़कर तथा इधर-उधर के कार्यों से ध्यान हटाकर इस कार्य में तेजी से अपने को लगाना चाहिए।

यदि किसी कारणवश हम दुनिया भर के तमाम वैज्ञानिकों तक जैनदर्शन के आचार-विचार को नहीं पहुँचा सकें तो कम से कम इतना तो अवश्य करना चाहिए कि हमारे समाज के जो युवा वैज्ञानिक-क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं, उन्हें येन-केन प्रकारेण जैन दर्शन के आचार-विचार से भलीभाँति परिचित कराया जाय। इसके लिंए शिविर-संगोष्ठी आदि का सहारा तो ले ही सकते हैं, पत्राचार, इंटरनेट आदि का सहारा लेना चाहिए। यदि वे जैनदर्शन के आचार-विचार से भली-भाँति परिचित हो गये तो अन्य वैज्ञानिकों तक उसे पहुँचाने का कार्य वे आसानी से कर सकेंगे, हमें उनका कुछ सहयोग मात्र करना होगा। यदि वे ही (हमारे समाज के वैज्ञानिक ही) जैनदर्शन से अपरिचित या भ्रान्त धारणाओं से ग्रस्त रहेंगे तो हमारी जैन संस्कृति की महती हानि होगी, हम कथमपि अन्य वैज्ञानिकों तक अपने दर्शन को समीचीन रूप से नहीं पहुँचा पायेंगे।

अतः कैसे भी करके हमें अपने समाज के वैज्ञानिक युवाओं को तो जैनदर्शन का ज्ञान कराना ही चाहिए।

यदि यह कार्य हम दिगम्बर-श्वेताम्बर- दोनों मिलकर करें तो और भी अच्छी सफलता प्राप्त हो सकती है। हम इस महान कार्य के लिए अपने छुट-पुट मतभेदों को इससे दूर रख सकते हैं और एक ऐसी समिति, संस्था या परिषद् का

निर्माण कर सकते हैं जो साम्प्रदायिक मतभेदों से ऊपर उठकर इस महान् कार्य को सफलता पूर्वक संचालित कर सके।

कहने का तात्पर्य यह है कि सर्वप्रथम तो दिगम्बर और श्वेताम्बर समाज के कुछ सज्जनों को मिलकर एक ऐसी परिषद् बनानी चाहिए जिसका एक मात्र उद्देश्य जैनदर्शन को वैज्ञानिकों तक पहुँचाना ही रहे। उसके बाद जैन-वैज्ञानिकों के सम्पर्क सूत्र इकट्ठे कर उन्हें इस परिषद् से जोड़ना चाहिए। तत्पश्चात् उन्हें जैनदर्शन की समीचीन जानकारी हेतु कुछ प्रामाणिक सामग्री हिन्दी या अंग्रेजी आदि मनोवांछित भाषाओं में उपलब्ध करानी चाहिए। उसके बाद उनकी शंकाओं को आमंत्रित कर उनका वैज्ञानिक एवं संतोषजनक समाधान उपलब्ध कराना चाहिए। यह संवाद फोन या इंटरनेट से भी सुविधापूर्वक हो सकता है। किन्तु वर्ष में एक बार एक संवाद-शिविर भी आयोजित करना चाहिए। उसमें उन्हें पुरस्कार आदि देकर उनका उत्साहवर्धन भी करना चाहिए। इसके अतिरिक्त इन वैज्ञानिकों को हमें समाज की कुछ स्तरीय पत्रिकाएँ भी नियमित रूप से निःशुल्क भेजनी चाहिए, उससे जैन आचार-विचार का उन्हें कुछ तो ज्ञान अवश्य होगा। इसी प्रकार चिंतन करके कुछ अन्य उपाय भी खोजे जा सकते हैं, जिससे यह ठोस कार्य भली भांति संचालित हो सके।

-सी-274/4, द्वितीय माला, अर्जुन नगर, एस.जे.एन्क्लेव, नई दिल्ली-29

गुरु आप हो महान्

सुश्री रिंकल जैन

- गुरु तो वह प्रेरणास्रोत है, जो ज्ञान से हमारे जीवन को सजाता है।
- गुरु तो वह दिव्य दीपक है जो स्वयं प्रदीप्त होकर ज्ञान का नया प्रकाश दुनिया को प्रदान करता है।
- गुरु तो वह प्रकाश स्तम्भ है जो ज्ञान की अखण्डानन्दी ज्योति से प्रकाशित करता जहान है।
- गुरु तो वह सद्व्यवहार की शिला है, जहां संस्कारों का होता आदान-प्रदान है।
- गुरु तो वह सितारा है जिसके ज्ञान रूपी अलख से जगमगाता यह संसार है।
- गुरु तो वह वृक्ष है जिसकी प्रतिछाया में हम ज्ञान को प्राप्त कर दुनिया का नया विकास करते हैं।
- गुरु तो वह सागर है जिसके ज्ञान की कोई सीमा नहीं है।

-सुपुत्री श्री लक्ष्मीचंद जी पारख, जोधपुर (राज.)

तत्त्वज्ञान प्रश्नोत्तरी (क्रमशः 69)

आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ

(कषाय कुशील)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– कषाय कुशील प्रतिसेवी होते हैं अथवा अप्रतिसेवी?

समाधान– कषाय कुशील प्रतिसेवी नहीं, अप्रतिसेवी होते हैं। जो प्राणातिपातादि विरमण व्रतों में दोष लगाते हैं वे मूल गुण प्रतिसेवी तथा अनागत, अतिक्रान्त, कोटिसहित इत्यादि उत्तर गुणों में दोष लगाने वाले उत्तर गुण प्रतिसेवी कहलाते हैं। कषाय कुशील साधु-साध्वियों की यह विशेषता होती है कि वे मूल गुण तथा उत्तर गुण दोनों में किसी प्रकार का दोष नहीं लगाते, इस कारण से वे अप्रतिसेवी कहलाते हैं।

जिज्ञासा– कषाय कुशील साधुओं का ज्ञान एवं श्रुत कितना होता है?

समाधान– कषाय कुशील साधुओं में दो अथवा तीन अथवा चार ज्ञान होते हैं। यदि दो ज्ञान हों तो आभिनिबोधिक ज्ञान (मतिज्ञान) व श्रुतज्ञान होता है। यदि तीन ज्ञान हों तो आभिनिबोधिक ज्ञानं, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान होते हैं अथवा आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान, मनःपर्याय ज्ञान होते हैं। इस प्रकार तीन ज्ञान में अवधि व मनःपर्याय ज्ञान में से कोई एक ज्ञान होता है। चार ज्ञान हों तो आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान तथा मनःपर्याय ज्ञान होते हैं।

श्रुत की अपेक्षा से विचार करें तो ज्ञात होता है कि कषाय कुशील साधु-साध्वियों में जघन्य श्रुत आठ प्रवचन माता (पाँच समिति-तीन गुप्ति) का तथा उत्कृष्ट श्रुत चौदह पूर्वों का होता है।

जिज्ञासा– कषाय कुशील साधुओं में कितने शरीर होते हैं?

समाधान– कषाय कुशील साधुओं में तीन अथवा चार अथवा पाँच शरीर

हो सकते हैं। तीन शरीर हों तो औदारिक, तैजस व कार्मण शरीर होते हैं। किसी भी लब्धि का प्रयोग नहीं करने वाले कषाय कुशील साधुओं में ये तीन शरीर ही होते हैं। अथवा सातवें से दसवें गुणस्थानवर्ती साधु-साध्वियों में ये तीन शरीर ही पाये जाते हैं।

चार शरीर होने पर उक्त तीन शरीर के साथ वैक्रिय शरीर बढ़ जाता है। अर्थात् जब वे वैक्रिय लब्धि का प्रयोग छठे गुणस्थान में करते हैं तब उनमें चार शरीर होते हैं। पाँच शरीर होने पर उक्त चार के साथ आहारक शरीर और बढ़ जाता है। जब कोई चौदह पूर्वधारी प्रमत्त अणगार आहारक लब्धि का प्रयोग करते हैं, तब उनमें आहारक शरीर पाया जाता है।

जिज्ञासा– एक जीव में एक साथ कितने शरीर हो सकते हैं?

समाधान– एक जीव में एक साथ कम से कम दो शरीर (तैजस, कार्मण) होते हैं तथा अधिक से अधिक चार शरीर हो सकते हैं। पाँचों शरीर एक जीव में साथ नहीं पाये जाते। क्योंकि वैक्रिय तथा आहारक इन दोनों लब्धियों का प्रयोग एक साथ नहीं किया जा सकता, इसी कारण वैक्रिय व आहारक शरीर एक जीव में एक साथ नहीं मिलते हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि शक्ति की अपेक्षा (लब्धि से) पाँचों शरीर एक साथ एक जीव में मिल सकते हैं, किन्तु प्रवृत्ति में एक साथ एक जीव में चार शरीर से अधिक नहीं मिल सकते।

जिज्ञासा– कषाय कुशील साधु कहाँ जाकर उत्पन्न होते हैं?

समाधान– कषाय कुशील साधु यदि आराधक हैं अर्थात् संज्वलन कषाय के उदय के कारण से जो अतिचारादि लगे हों तो उनका शुद्धीकरण करके जो आराधक बन जाते हैं। ऐसे कषाय कुशील साधु यदि चरम शरीरी जीव हैं तो उसी भव में क्षपक श्रेणि करके स्नातक बनते हुए सिद्ध गति में चले जाते हैं। यदि देवायु का बन्ध किये हुए और आराधक हैं तो ऐसे कषाय कुशील साधु-साध्वी मरकर वैमानिक देवलोकों में ही उत्पन्न

होते हैं। यदि विराधक हों तो वे भवनपति आदि देवों में तथा अन्य दुर्गतियों में भी उत्पन्न हो सकते हैं।

यदि वैमानिक देवलोकों में उत्पन्न होते हैं तो पहले देवलोक से लेकर सर्वार्थसिद्ध विमान तक के देवलोकों में उत्पन्न हो सकते हैं।

वैमानिक देवलोकों में उत्पन्न हो तो कम से कम पल्योपम पृथक्त्व (कम से कम 2 पल्योपम) तथा अधिक से अधिक तैंतीस सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न होते हैं।

जिज्ञासा– कषाय कुशील साधु-साध्वी सवेदी होते हैं अथवा अवेदी?

समाधान– कषाय कुशील साधु-साध्वी सवेदी भी होते हैं तथा अवेदी भी होते हैं। क्योंकि कषाय कुशील में छठे से दसवें गुणस्थान तक पाँच गुणस्थान होते हैं। छठे, सातवें, आठवें गुणस्थान में वे सवेदी रहते हैं। नवाँ गुणस्थान सवेदी तथा अवेदी दोनों अवस्था वाला है। अर्थात् नवें गुणस्थान के प्रारम्भिक दो भाग सवेदी होते हैं तथा बाद के पाँच भाग अवेदी होते हैं। दसवाँ गुणस्थान अवेदी ही होता है। इस प्रकार छठे से लेकर नवें गुणस्थान के प्रारम्भिक दो भागों तक की अपेक्षा सवेदी तथा नवें के अन्तिम पाँच भागों व दसवें गुणस्थान की अपेक्षा कषाय कुशील अवेदी कहलाते हैं। (क्रमशः)

-रजिस्ट्रार, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

अपनों से दूरी

महासती श्री रुचिता जी म.सा.

कुत्ते को रोटी खिलाना अच्छा है, किन्तु यह विडम्बना है कि अपने ही भाई के बच्चों से एवं भाई से दूरी बढ़ाई जा रही है। उन्हें रोटी तो दूर पानी तक नहीं पिलाया जा रहा है। अपनों से दूरी है और पशुओं से प्रेम किया जा रहा है। यह मनुष्यता की पहचान नहीं है। जब तक मानव में मानव के प्रति सहानुभूति, मैत्री, सहिष्णुता, सहयोग की भावना सुदृढ़ नहीं होगी तब तक जीवन में शांति कोसों दूर है।

-अलवर प्रवचन से संकलित

धर्मकथा

धर्म का बाह्यरूप

श्रीमती पारसकंवर भण्डारी

मनुष्य भव बार-बार मिलना बहुत मुश्किल है। अगर मनुष्य भव प्राप्त हो भी गया तो उसमें मानवता आनी और भी मुश्किल है। वर्तमान में हर व्यक्ति इस भव को सुखी बनाने के लिए दौड़-धूप करता है। खाना-पीना, मौज-शौक, परिवार के लिये जरूरत अथवा गैरजरूरत के साधन जुटाने हेतु वह रात-दिन श्रम करके धन-वैभव को प्राप्त करता है। लेकिन मानव यह नहीं सोचता है कि जब मैं संसार में आया था तब क्या लेकर आया, और जब जाऊँगा तब क्या लेकर जाऊँगा? भविष्य की उसे कोई चिंता नहीं, धर्मक्रिया करने में रुचि नहीं। किसी के कहने से कुछ धर्म या दान पुण्य कर भी लेता है तो वह सब दिखावे के रूप में करता है। लोगों की नज़र में आने के लिए धर्म करता है, अन्तस् में लगन नहीं है। अगर अन्तस् में धर्म रम जाय तो उसका भव सीमित हो जाता है। पर ऐसे इन्सान बहुत कम मिलते हैं। अधिकतर बाहरी रूप में ही अपने को धर्म में उलझाए रखते हैं। अगर यह मिला हुआ भव मनुष्य हार गया तो, फिर चौरासी के चक्कर में पड़ जायेगा। वापस मनुष्य भव मिलना बहुत दुर्लभ है। महापुरुषों का कहना है कि मनुष्य भव को पाने के लिए 11 घाटियों को पार करना पड़ता है। ग्यारह घाटियां हैं:- 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, नरक और देव भव। इस तरह जीव इनमें भटक जाता है, वापस पुण्य जोर मारता है तभी वह मनुष्य भव प्राप्त कर पाता है।

इसके संदर्भ में वैदिक परम्परा की एक लघु कथा प्रस्तुत है- एक गांव था, वह सुन्दर और शोभायमान दिखाई देता था। उस गाँव में कई तरह के लोग बसे हुए थे। एक व्यक्ति जो धान का व्यापारी था, बहुत संपन्न और धार्मिक विचारों वाला था। वह हमेशा मन्दिर जाता, पूजा पाठ करता, तिलक छापा लगाता, फिर दुकान पर भी देवी-देवता के अगरबत्ती करता था। यह उसका रोज का नियम बना हुआ था।

एक बार नारद जी कहीं जा रहे थे। वे इस गाँव के पास से गुजरने लगे, तब उनके कानों में प्रभु-भक्ति की सुरीली आवाज आई- हरे राम! हरे कृष्ण!

हर-हर महादेव आदि। नारदजी को यह आवाज़ बहुत अच्छी लगी, नारदजी ने सोचा इस गांव में ऐसा कौन भक्त है जो प्रभु का नाम इतनी तन्मयता से ले रहा है। मैं जाऊँ और देखूँ कौन है। वे गांव के अन्दर आए, उन्होंने देखा एक व्यक्ति हाथ में माला लिए हुए प्रभु का जाप करता हुआ मन्दिर से बाहर निकल रहा है। नारद जी उसके पीछे-पीछे चलने लगे। वह किराने का व्यापारी अपनी दुकान पर आया और वहाँ जितनी भी तस्वीरे टंगी हुई थी, उन सबको नमस्कार किया, फिर अगरबत्ती से सबकी आरती उतारी और अपने कार्य में जुट गया। नारद जी यह सब देखकर बहुत खुश हुए और वहाँ से सीधे विष्णुजी के पास पहुँचे।

नारद जी को देखकर विष्णुजी मुस्कुराए और उनको आदर देकर आसन पर बिठाया। उनका हाल-चाल पूछते हुए कहने लगे- महर्षि! आप तो जगह-जगह घूमते रहते हो, कहो नयी खबर क्या है? नारदजी को तो बिन मांगे मोती मिल गये। वे तो यहाँ आए ही इसलिए थे कि विष्णुजी को सब कुछ बता दें। अब विष्णुजी स्वयं पूछ रहे हैं तो झट से बोल पड़े- ''हाँ भगवन्! एक भक्त की भक्ति देखकर आ रहा हूँ, वह आपकी इतनी भक्ति करता है कि मैं देखकर खुश हो गया। भगवन्! ऐसे भक्त को तो शीघ्र ही आपको अपने पास बुला लेना चाहिए। आपका भक्त इस दुःखी संसार में रहे यह तो ठीक नहीं, इसे शीघ्र अपने पास बुला लीजिये। आपकी आज्ञा हो तो मैं आपका रथ ले जाकर उसे रथ में बैठाकर शीघ्र ही आपके पास ले आऊँ।'' विष्णुजी ने कहा- ''नारदजी! जैसा आप सोचते हो वैसी बात नहीं है। वह अभी आपके साथ आने वाला नहीं है।'' ''भगवन्! वह आयेगा कैसे नहीं? व्यक्ति धार्मिक क्रिया क्यों करता है? बैंकुंठ में आने के लिए ही तो? भगवन्! बस आप तो अपना रथ ले जाने की आज्ञा फरमाइए। बस मैं अभी गया और अभी वापस आया। आपका भक्त दुःखी संसार में फंसा रहे, यह मैं नहीं देख सकता।''

विष्णुजी ने कहा- ''भले ही आप रथ ले जाइये, मुझे कोई ऐतराज नहीं है। लेकिन वह आपके साथ आने वाला नहीं है।'' ''नहीं भगवन्! मुझे विश्वास है वह जरूर आयेगा।'' ''ठीक है जाइये करिये कोशिश।'' नारदजी खुशी-खुशी रथ लेकर पहुँचे उस गाँव में। रथ की झंकार, उसका प्रकाश,

छम-छम की आवाज सुन कर गांव के लोगों को आश्चर्य होने लगा कि यह आवाज कहाँ से आ रही है, और किसकी आवाज है। इतने में रथ गाँव में प्रवेश हुआ, लोगों की आँखें चौंधियां गईं। सब सोचने लगे, यह किसका रथ है, देवता के विमान जैसा लग रहा है। यह यहाँ कैसे आया? सबको एक समान जिज्ञासा उत्पन्न हुई, और सब उस रथ के पीछे-पीछे चलने लगे। रथ सीधा भक्त व्यक्ति की दुकान पर पहुँचा, रथ की आवाज सुनकर सेठजी भी बाहर आये। रथ के साथ लोगों की भीड़ देखकर उसे भी आश्चर्य हुआ कि यह रथ किसका है और कहाँ से आया है? इतने में नारद जी रथ में से नीचे उतरे और दुकान की सीढ़िया चढ़ने लगे। सेठजी नारद जी को देखकर खुशी से झूम उठे, अहो! यह देव पुरुष मेरी दुकान पर आ रहा है। मैं कितना भाग्यशाली हूँ जो आज मेरी पेढ़ी पर देव-पुरुष के चरण पड़े। वह आगे आया और नारदजी का स्वागत किया, उन्हें आसन पर बैठाया, फिर हाथ जोड़कर नमस्कार किया, और पूछने लगा- ''महाशयजी आप कौन हैं, कहाँ से पधारे हैं, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ? आज मेरा अहो भाग्य है कि मुझे आपका दर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ।'' नारदजी ने कहा- ''मैं नारद हूँ, बैंकुंठ से आ रहा हूँ, विष्णुजी आपकी भक्ति देखकर बहुत खुश हैं, इसलिए आपको बैंकुंठ में बुलाने के लिए मुझे रथ देकर भेजा है। अब शीघ्र चलिए देरी मत कीजिए, वास्तव में आपके भाग्य खुल गये हैं जो स्वयं विष्णुजी ने आपको बुलाने भेजा है।'' इतना सुनना था कि सेठजी के हाथ पांव सुन्न पड़ गये, गले की आवाज रुंध गई। बैंकुंठ में जाना मतलब अब मेरी मौत आ गई। सेठजी थर-थर कांपने लगे, आँखों के सामने अंधेरा छाने लगा। फिर भी बनियों की बुद्धि संकट के समय में भी काम करने लग जाती है। उसने कुछ सोचकर कहा- ''नारद जी! मैं जरूर आपके साथ चलता, मुझे भी बैंकुंठ में जाने की बहुत इच्छा है, पर अभी मैं नहीं चल सकता, इसलिए माफी मांगता हूँ।'' ''अरे! चल क्यों नहीं सकते विष्णु जी ने स्वयं तुमको बुलाने के लिए अपना रथ देकर मुझे भेजा है, और आप कहते हैं कि मैं चल नहीं सकता। नहीं-नहीं आप शीघ्र कीजिए। आपको तो चलना ही होगा, नहीं तो मैं उन्हें क्या जवाब दूँगा।''

भक्त का जवाब था- ''नारद जी आप मेरी मजबूरी समझिए, मेरा

लड़का अभी पढ़ रहा है। अभी उसका विवाह भी नहीं हुआ है। वह अभी व्यापार सम्हालने लायक भी नहीं हुआ है। ऐसी दशा में मैं आपके साथ कैसे चल सकता हूँ? मेरा सारा कारोबार ठप्प हो जायेगा। मेरी पत्नी अकेली कैसे यह सारा काम सम्हाल पायेगी। इसलिए मैं यह सारा काम निपटा कर बाद में जरूर आपके साथ चलूँगा। अभी तो आप मुझे माफ करिये।'' अब नारद जी क्या बोलें? चुपचाप उठ कर जाने लगे। पर जाते-जाते यह कह कर गये कि सेठ जी मैं दुबारा आपके पास आऊँगा। आप अपना काम निपटा कर तैयार रहिये। ''हाँ-हाँ जरूर मैं तैयार रहूँगा।'' नारदजी चले गये, सेठजी ने लम्बे-लम्बे हाथ जोड़े और सोचा, चलो अबकी तो बला टली। मौत से छुटकारा मिला। अब आगे के लिए भी कुछ सोच कर रखना होगा।

नारद जी गये तो चौबे जी बन कर और आये दूबे जी बन कर। नारद जी का उतरा हुआ चेहरा देखकर विष्णुजी ने पूछा- ''क्यों क्या हुआ? नहीं आया आपका भक्त?'' ''भगवन् अभी उसका सारा कार्य अधूरा पड़ा है, इसलिए पूरा कार्य निपटा कर आने के लिए कह रहा है। मैं दुबारा जाकर जरूर उसे लेकर आऊँगा।'' विष्णु जी ने मंद-मंद मुस्काते हुए कहा- ''नारद जी ! हाथी के दांत खाने के अलग होते हैं और दिखाने के अलग। कहावत है कि मुँह में राम, बगल में छुरी। वह कहता कुछ है और करता कुछ है। वह आपके साथ कभी भी आने वाला नहीं है।'' ''नहीं भगवन्! ऐसी ऐसी बात नहीं है, उसने स्वयं कहा है कि काम निपटा कर मैं आपके साथ जरूर चलूँगा।''

(क्रमशः, दूसरी किश्त में समाप्य)

-128, मिन्ट स्ट्रीट, साहुकार पेट, चेन्नई-19

SOME BEAUTIFUL THOUGHTS

Ms. Minakshi Jain (Adv.)

- There is no use of running fast, when you are on the wrong road.
- Speak only when you feel your words are better than the silence.

-Surana ki Badi Pole, Nagaur-341001 (Raj.)

प्रासङ्गिक

जैन स्थानकों की पवित्रता

श्री स्वरूपचन्द बाफना, सी.ए.

जैन शास्त्रों में अनेक स्थानों पर उल्लेख मिलता है कि श्रावकजन अपनी साधना के लिए पौषधशालाओं का निर्माण करा कर नियमित रूप से पौषधसाधना या धर्माराधना हेतु उनका उपयोग करते थे। वर्तमान में ऐसे श्रावक देखने में कम आते हैं जिन्होंने स्वयं के लिए पौषधशाला बनाई हो एवं उसका नियमित उपयोग करते हों। वर्तमान में श्रावकजन सामूहिक संगठन बनाकर पूरे श्रावक-श्राविका समाज के लिए स्थानक, आराधना भवन आदि का निर्माण कराते हैं। स्थानकवासी परम्परा के अनुयायी इसे स्थानक के तौर पर प्रचारित करते हैं। तेरापंथी लोग तेरापंथ भवनों का निर्माण करते हैं। मंदिरमार्गी मंदिर व आराधना भवनों का निर्माण करते हैं। हमारे संत मुनिराज तथा साध्वीवर्ग इन्हीं स्थानों में ठहरते हैं।

इसी तरह देखने में आता है कि मुस्लिम लोग मस्जिदों का निर्माण नमाज़ अदा करने के लिए करते हैं और नियमित रूप से वहीं पर समुदाय के रूप में एकत्रित होकर नमाज अदा करते हैं। सिक्ख धर्म वाले अपने समुदाय के लिए गुरुद्वारों का निर्माण करते हैं तथा वहीं पर सामूहिक रूप से पाठ, कीर्तन आदि करते हैं। ईसाई समुदाय के लोग गिरिजाघरों का निर्माण कर वहीं प्रभु भक्ति व प्रार्थना नियमित रूप से करते हैं। धार्मिक स्थलों की पवित्रता के मामले में मुस्लिम, सिक्ख, क्रिश्चियन लोग बहुत ही दृढ़ रहते हैं और उन स्थानों के व्यापारीकरण या व्यवसायीकरण में उपयोग प्रायः नहीं करते। ये लोग भवनों की साफ सफाई भी स्वयं कर उन्हें पवित्र स्थान मानकर अपने आपको गौरवान्वित समझते हैं।

दूसरी तरफ पिछले दो दशकों में जिस तरह से सम्पन्नता बढ़ी है उसी तरह से हमारे जैन स्थानकों, आराधना भवनों की भव्यता भी बढ़ी है। बाजार में अच्छे से अच्छा मेटीरियल उपलब्ध है और श्रावकों के पास धन सम्पदा भी बहुत है। जैन स्थानक बनाने के नाम पर लोग लाखों, करोड़ों का दान भी देते हैं। लेकिन ऐसा देखने में आया है कि इन स्थानकों व भवनों की पवित्रता

बनाए रखने में हम गंभीर नहीं हैं। तीन चार मंजिल के भवन बनाकर एक मंजिल को स्थानक के रूप में उपयोग करते हैं वहाँ पर साधु-साध्वी जी ठहरते हैं और बाकी की मंजिलें शादी-विवाह, पार्टियों के लिए किराये पर दे देते हैं। यहाँ तक भी अभी देखने में आया है कि कहीं व्यापारिक उपयोग के लिए Sale आदि लगाने के लिए भी किराये पर भवन दिए जा रहे हैं। उन्हीं स्थानों पर साधु-साध्वी विराज रहे हैं और वहीं पर उनका व्यवसायीकरण कर धार्मिक स्थानों की पवित्रता समाप्त कर रहे हैं।

जो लोग दान देते है या अनुदान देते हैं मूलरूप से उनकी भावना धर्म स्थानक या भवन के लिए ही होती है और इन स्थानों का प्रयोग यदि व्यावसायिक एवं वैवाहिक आदि कार्यों के लिए होगा तो उनकी गरिमा व पवित्रता लुप्त हो जायेगी। जो लोग यह तर्क देते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में रखरखाव आदि का खर्चा निकालने के लिए आय के साधन बहुत जरूरी हैं तो हम सभी श्रावकों पर ही प्रश्नचिह्न लगता है। क्या एक जमाने में महाजन कहलाने वाले श्रावक सम्पन्नता बढ़ने के बावजूद इतने कमजोर हैं कि अपने पूजा व प्रार्थना स्थलों की पवित्रता बनाए रखने में सक्षम नहीं हैं। एक बात यह है कि मुस्लिम, सिक्ख व ईसाई धर्म-स्थलों पर कभी भी दानदाताओं का नाम इन स्थलों के बाहर व अन्दर देखने में नहीं आता है। क्या अपरिग्रह का व्रत धारण करने वाले जैन श्रावकजन इनसे कुछ सीख लेंगे और अपने धार्मिक स्थलों की पवित्रता बनाए रखने में अग्रणी भूमिका निभाते हुए समाज को नई दिशा तथा सोच देकर जिन धर्म व जैन श्रावकों की प्रतिष्ठा को सर्वोच्च प्रमाणित करेंगे?

एक सुझाव यह है कि जैन स्थानकों में धर्माराधना करते समय विद्युत, पंखा, कूलर आदि का उपयोग नहीं होता, इसलिए स्थानकों को दक्षिण-पश्चिम की ओर से खुला रखना चाहिए, एवं पर्याप्त खिड़कियां होनी चाहिए ताकि वायु का संचार सही रह सके एवं धर्म स्थानकों का उपयोग निर्दोष रूप से हो सके। एक ध्यान रखने योग्य बात यह है कि ऊँची-ऊँची सीढ़ियाँ चढ़कर जाने में वृद्ध श्रावकों को कष्ट होता है, अतः जहाँ तक हो सीढ़ियाँ अल्पतम हों।

-(शब्द.)

स्वास्थ्य-विज्ञान

चैतन्य चिकित्सा

डॉ. चंचलमल चोरडिया

स्वास्थ्य हेतु सही श्वसन आवश्यक

यदि किसी व्यक्ति को चन्द मिनटों के लिए लाखों रुपयों का प्रलोभन देकर श्वास रोकने अथवा बन्द करने का अनुरोध करें तो भी शायद ही कोई अभागा अथवा मूर्ख व्यक्ति हमारी बात को स्वीकारेगा। श्वास बंद होते ही व्यक्ति की मृत्यु होती है तथा मृत्यु के पश्चात् प्राप्त उस अपार धन राशि का स्वयं के लिए क्या उपयोग? ऐसी अमूल्य श्वास ऊर्जा हमें जीवित अवस्था में प्रकृति से अनवरत बिना कुछ मूल्य चुकाये प्रतिक्षण प्राप्त होती है।

श्वास का चेतना से सीधा संबंध

परन्तु प्राय: हम हमारी अमूल्य श्वास का पूर्ण सजगता के साथ सदुपयोग नहीं करते। हमारी चेतना अथवा प्राणशक्ति का श्वास के साथ घनिष्ठ संबंध होता है। जिस प्रकार बिजली की ऊर्जा को आवश्यकतानुसार रूपान्तरित कर एयर कंडीशनर, कूलर, फ्रीज, पंखे आदि ठण्डक प्रदान कराने वाले और हीटर, ओवन, गीजर आदि गर्मी पैदा करने वाले तथा ट्यूब, बल्ब आदि प्रकाश फैलाने वाले एवं वाहन आदि गति करने वाले उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है। ठीक उसी प्रकार शरीर में चेतना आंखों के सहयोग से देखने, कानों के सहयोग से सुनने, मन से मनन-चिंतन, नाक के सहयोग से सूंघने, मुख एवं जीभ के सहयोग से बोलने तथा आहार ग्रहण करने इत्यादि की क्षमता प्राप्त कर लेती है।

एकाग्रता से ऊर्जा बढ़ती है

हमारी अधिकांश प्रवृत्तियाँ पाँचों इन्द्रियों और मन के माध्यम से संचालित होती है। मन की चेतना सभी प्रवृत्तियों में निर्णायक भूमिका निभाती है। पाँचों इन्द्रियों और मन के सकारात्मक तालमेल एवं सदुपयोग से हम स्वस्थ और संतुलित होते हैं जबकि उनके नकारात्मक प्रयोग अथवा दुरुपयोग से हम असंतुलित एवं रोगी होते हैं। आत्मार्थी साधक इन्द्रियों का आलम्बन मन से हटाने हेतु पर्वतों, गुफाओं अथवा एकान्त स्थान का साधना हेतु चयन

करते हैं।

अत: यदि किसी विधि द्वारा शरीर के किसी भाग पर मन को केन्द्रित कर दिया जाये तो उस स्थान पर प्राण-ऊर्जा को बढ़ाया जा सकता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये प्राण अथवा चैतन्य ऊर्जा से अच्छा, प्रभावशाली और सशक्त कोई अन्य विकल्प प्राय: नहीं होता।

परन्तु मन को एकाग्र करना बहुत कठिन होता है और उस हेतु दीर्घकालीन ध्यान-साधना का अभ्यास आवश्यक होता है, जो जनसाधारण के लिये प्राय: संभव नहीं होता। अत: यदि हम आँख से देखना, मुँह से खाना और बोलना बंद कर दें तथा शांत एकान्त स्थान पर चले जायें तो आवाज न आने से कान और गंध परिवर्तन न होने से घ्राणेन्द्रिय को आराम मिल जाता है। ऐसे समय हम मन को जिस स्थान पर एकाग्र करना चाहें, सरलता से कर सकते हैं। हम भलीभांति जानते हैं कि जब सूर्य की किरणें किसी कांच के लेन्स के अन्दर से निकाली जाती हैं तो वे किरणें एकत्र होकर अपना प्रभाव दिखाने लगती हैं। जिस स्थान पर वे किरणें फेंकी जाती हैं, वहाँ इतनी गर्मी पैदा होने लगती है कि कुछ ही देर में वहाँ पड़ा कागज, कपड़ा अथवा अन्य ज्वलनशील पदार्थ जलने लगता है। जो कार्य सूर्य की असंख्य किरणें अलग-अलग नहीं कर सकती हैं, वही कार्य उनको एकाग्र करने से सहज हो जाता है। कहने का तात्पर्य यही है कि एकाग्रता से ऊर्जा की ताकत बढ़ जाती है। जिस प्रकार राष्ट्र की विकटतम समस्या के समाधान हेतु जब सर्वोच्च नेता का ध्यान आकर्षित हो जाता है, वह रुचि लेने लगता है तथा उन समस्याओं को प्राथमिकता से सुलझाने का प्रयास करता है तो उन समस्याओं का समाधान अवश्य हो जाता है। ठीक उसी प्रकार जब रोगग्रस्त भाग से चेतना का सीधा सम्पर्क हो जाता है, मन के दूसरे आलम्बन समाप्त हो जाते हैं तो प्राण-ऊर्जा का प्रवाह उस भाग में बढ़ने लगता है। जिससे शरीर के उस रोग-ग्रस्त भाग की क्षीण कार्य क्षमता पुन: बढ़ने लगती है। वहाँ से विजातीय तत्त्व एवं विकार दूर होने लगते हैं। फलत: रोगग्रस्त भाग रोग-मुक्त होने लगता है।

कैसे करें उपचार ?-

प्रात: काल हम इतना जल्दी उठें कि आसपास का वातावरण पूर्णतया शांत हो तो हमारा घर ही मन की एकाग्रता के लिये शांत और एकान्त

स्थान बन सकता है। ऐसे समय घर के शुद्ध वातावरण में स्थिर आसन बैठ आँख बंद कर दर्द वाले भाग को थपथपायें, उस भाग का संकुचन और फैलाव करें या उस भाग पर सहनीय दबाव दें तो हमारा ध्यान उस स्थान पर केन्द्रित होने लग जाता है। परिणामस्वरूप उस स्थान पर प्राण ऊर्जा अधिक मात्रा में प्रवाहित होने लगती है। जिससे विजातीय विकार दूर होने लगते हैं और कमजोर भाग सशक्त एवं रोगग्रस्त भाग रोग-मुक्त होने लगता है। मांसपेशियों में हलन-चलन होने से सक्रियता आने लगती है। जिस प्रकार जो स्प्रिंग क्रियाशील होती है, उसमें जंग लगने की संभावना कम रहती है, ठीक उसी प्रकार रोग वाले भाग पर मन को एकाग्र करके गहरा श्वास लेने तथा तेजी से श्वास निकालने अथवा जोर से मन ही मन बिना आवाज किए हँसने से रोगग्रस्त भाग की मांसपेशियों में हलन-चलन होने तथा प्राण-ऊर्जा का प्रवाह बढ़ने से उन पर लम्बे समय से जमे विकार दूर होने लगते हैं, जिससे तुरंत स्वास्थ्य लाभ की प्रक्रिया प्रारम्भ होने लग जाती है। मृत कोशिकाएँ पुनर्जीवित होने लगती है। जिस प्रकार मालिक के जागते ही चोर भाग जाता है, ठीक उसी प्रकार रोगग्रस्त भाग पर ध्यान करने से वहाँ से रोग के कारण दूर होने लगते हैं। डायाफ्राम के आसपास हृदय, फेंफड़ों, तिल्ली, आमाशय आदि के रोगों में यह चिकित्सा विशेष लाभकारी होती है। हृदय की शल्य चिकित्सा की मानसिकता वाले रोगी मात्र 10-15 रोज में इस प्रक्रिया के चमत्कारी परिणामों का अनुभव कर सकते हैं एवं नियमित अभ्यास से अपने आपको शल्य चिकित्सा से बचा सकते हैं।

प्राण-ऊर्जा से ज्यादा प्रभावशाली रोग निवारक शक्ति बाजार में उपलब्ध दवाइयों में प्राय: मिलना असंभव होता है। परन्तु जब रोगी की चेतना का दर्द अथवा कमजोर भाग से सीधा सम्पर्क हो जाता है तो प्राण ऊर्जा का प्रवाह आवश्यकतानुसार होने लगता है जिससे उपचार प्रभावशाली हो जाता है। अंत:स्रावी ग्रन्थियाँ आवश्यकतानुसार उस भाग में अपने स्राव के रूप में मदद भिजवाने लगती हैं, जिससे व्यक्ति रोग-मुक्त होने लगता है।

-चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)
फोन: 0291-2621454, 94141-34606
E-mail: cmchordia.jodhpur@gmail.com,
Website: www.chordiahealthzone.com

युवा-स्तम्भ

संत-सतियों के जीवन से लें प्रेरणा

श्री नितेश नागोरा जैन

1. पूज्य संत-सतिया जी जब मोबाइल, कार, फ्लाइट, कम्प्यूटर, लेपटॉप आदि साधनों के बिना ही समूचे हिन्दुस्तान में धर्म की पताका लहरा सकते हैं, ग्रामानुग्राम जिनवाणी का रसपान करा सकते हैं, तो साधन संपन्न हम श्रावकगण क्या अपने एवं आस-पास के धर्म संघों को मजबूत नहीं कर सकते हैं? आवश्यकता है चिंतन को व्यापक बनाने की, अपने बल, बुद्धि एवं साधन को साधना तथा शासन प्रभावना में लगाने की।
2. हमारी पूज्य चारित्र आत्माएँ जब नंगे पैर, तपती धरती पर ऊबड़-खाबड़ विकट रास्तों पर चलकर समूचे हिन्दुस्तान में प्रवचन, स्वाध्याय, धर्मकथा के माध्यम से साधकों को स्थिर कर सकती हैं, धर्म का मर्म समझा सकती हैं तब क्या हम जूते, चप्पल पहनने वाले , बाइक-कार वाले श्रावक-श्राविका अपने यहाँ चल रही धार्मिक पाठशाला, स्वाध्यायशाला, शिक्षण बोर्ड और धार्मिक प्रवृत्तियों को व्यवस्थित नहीं कर सकते हैं? जरूरत है प्रमाद को दूर भगाने की, सम्यक् पुरुषार्थ करने की।
3. हमारे ही अपने घर एवं आसपास से निकली पूज्य चारित्र आत्माएँ मात्र 4 पातरों तथा 72 व 96 हाथ कपड़ों में अपना जीवन यापन कर सकते हैं तब क्या उन्हीं के अनुयायी, अपरिग्रह को समझने वाले हम श्रावक-श्राविकाएँ अपने जीवन को संयमित और संतुलित नहीं कर सकते हैं? जरूरत है इच्छाओं, अभिलाषाओं को घटाने की एवं संतोष वृत्ति बढ़ाने की। परिग्रह घटाने की, विवेक को जगाने की.....वस्तुतः

   खाने के लिए रोटी के दौ कौर चाहिए,
   सोने के लिए जमीन की ठौर चाहिए।
   भगवान महावीर ने परिग्रह में पाप कहा है,
   पर हम जैनियों को और और और चाहिए।।

4. हमारे साथ खेलने वाले, हमारे यहाँ बड़े नाज से पलने वाले संत-सतियां जी म.सा. जब जीवन पर्यन्त के लिए स्नान का त्यागकर ब्रह्मचर्य का

अखण्ड दृढ़ता पूर्वक पालन कर सकते हैं, तब उनसे अपनी पहचान देने वाले, उन्हें अपना मानने वाले, उनको अच्छे से पहचानने वाले, उनके समर्थक और अनुयायी भगवान महावीर के श्रमणोपासक होने के नाते क्या हम पर्व तिथियों को स्नान व मैथुन सेवन के त्यागी नहीं बन सकते हैं? क्या अपने जीवन को मर्यादित एवं व्यवस्थित नहीं कर सकते हैं? जरूरत है आत्मिक वैराग्य बढ़ाने की, हड्डी-हड्डी की मज्जा में धार्मिक दृढ़ता बढ़ाने की।

5. संत-सतियां जी म.सा. संसार में रहकर भी जीवन पर्यन्त के लिए अपने घर-परिवार, कुटुम्ब-समाज के मोह-बंधन से दूर निर्मोही बनकर जीवन पर्यन्त अपनी साधना के प्रति समर्पित रहते हैं तब क्या उन्हीं के अनुयायी हम श्रावक श्राविकाएँ अष्टमी, चौदस, पक्खी के दिन दया, पौषध, संवर आदि प्रवृत्तियाँ करके अपने राग भाव को कम करते हुए आत्मार्थिपन नहीं बढ़ा सकते हैं? जरूरत है स्वयं से स्वयं की मुलाकात की, संसार में रहते हुए निरासक्त भावों से जीवन जीने की.....एक न एक दिन, संसार त्याग कर संयम लेने के भावों की।

6. हमारी प्रेरणा के स्रोत पूज्य संत-सतियां जी जब अपने जीवनकाल में अनेक शास्त्र, सैकड़ों थोकड़ों व हजारों गाथाओं को कण्ठस्थ कर सकते हैं तब उन्हीं के अनुयायी होने के नाते क्या हम नवतत्त्व, 25 क्रिया, सामायिक, प्रतिक्रमण, 25 बोल, गति-आगति आदि सामान्य एवं आवश्यक ज्ञान भी कण्ठस्थ नहीं कर सकते हैं? जरूरत है कंठस्थ ज्ञान के प्रति रुचि जगाने की, नियमित अभ्यास और लगन की। वस्तुतः ज्ञान हमारा भव-भव का साथी, पथ प्रदर्शक और मार्गदर्शक है। हमें ठोस एवं आदर्श श्रमणोपासक बनाने वाला है।

आज आवश्यकता है पूज्य संत-सतियां जी म.सा. के जीवन से प्रेरणा लेने की। उनके अनुयायी और उपासक होने के नाते अपने जीवन की दिशा और दशा को बदलने की। मात्र जयकारे, गुण-स्तुति और सेवा-सान्निध्य से हमारा कल्याण संभव नहीं है। हम भी उनके जीवन-आदर्शों को अपने जीवन-व्यवहार में अपनाकर अणगार नहीं तो आगार धर्म को तो निष्ठापूर्वक निभा ही सकते हैं। ज्ञानीजन का यही फरमाना है-

संयम अगर नहीं ले सको तो, दृढ़धर्मी श्रावक बनना,
सूरज नहीं बन सकते हो तो, दीपक बनकर तुम रहना।

छोड़ न सको संसार भले तुम मर्यादित व्यवहार करो,
लेकर प्रेरणा चरित्र आत्माओं से, निज जीवन विकास करो।

हम सभी बनें ज्ञानवान, विवेकवान, दृढ़धर्मी, ठोस, आत्मार्थी, पापभीरू एवं आदर्श श्रमणोपासक।

-कर सलाहकार, जैन बोर्डिंग एरिया, भवानीमंडी (राज.)

पत्रिका की उत्कृष्टता हेतु लेखकों से निवेदन

जिनवाणी मासिक पत्रिका की गुणवत्ता निरन्तर अभिवृद्ध होती रहे, एतदर्थ लेखकों एवं रचनाकारों से निवेदन है कि वे अपनी रचनाएँ एवं आलेख उत्कृष्ट से उत्कृष्टतर बनाकर भिजवाने का श्रम करें। जिनवाणी पत्रिका के विविध स्तम्भों में प्रकाशित श्रेष्ठ लेखों एवं रचनाओं को पुरस्कृत किया जाता है। विगत तीन वर्षों से यह क्रम चल रहा है। शोधालेख भेजते समय प्रामाणिकता हेतु सन्दर्भ युक्त पाद टिप्पणों का पूर्ण उल्लेख आवश्यक है। आध्यात्मिक, नैतिक मूल्यों से युक्त आलेख, कविता, कथा आदि का स्वागत है। वैज्ञानिक आलेखों को तभी प्रकाशित किया जाता है जब उनकी पुष्टि/तुलना जैन धर्म-दर्शन से की गई हो। सद्गुणों के आधान, जीवन-व्यवहार के शोधन की प्रेरणा देने वाली रचनाएँ जिनवाणी में सदैव स्थान पाती हैं। नारी-स्तम्भ एवं युवास्तम्भ के लिए हमें श्रेष्ठ रचनाओं की प्रतीक्षा रहती है। बाल-स्तम्भ हेतु प्रेरक कथाओं की भी आवश्यकता रहती है।

जिनवाणी पत्रिका का अब तक जो स्तर उन्नत हुआ है, उसमें लेखकों एवं रचनाकारों का योगदान प्रशंसनीय है। आपकी रचनाएँ कदाचित् विलम्ब से प्रकाशित हो अथवा प्रकाशित न भी हो तो भी निराश न हों, अपितु आप अपना प्रयास जारी रखें। एक बार प्राप्त रचनाएँ लौटाना सम्भव नहीं हैं, अतः उनकी एक प्रति अपने पास सुरक्षित रखें। यदि आप कम्प्यूटर से e-mail द्वारा अपनी रचनाएं भेज सकें तो इसे प्राथमिकता दें। जिनवाणी का E-mail पता है- jinvani@yahoo.co.in यदि हाथ से लिखकर भेजें तो सुवाच्य हस्तलेख हो।

आपकी रचना श्रेष्ठता का पुरस्कार प्राप्त करे, ऐसी शुभकामना है। विभिन्न स्तम्भों में 2100 रुपये से लेकर 5100 रुपये की राशि का पुरस्कार सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री पी.शिखरमल सुराणा की ओर से देय है।

-डॉ. धर्मचन्द जैन, सम्पादक

कविता

विषादहीन मरघट

श्री जितेन्द्र चोरड़िया 'प्रेक्षक'

दुनियां तुम्हारी हिम्मत की भी, देनी होगी दाद।
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।

वैराग्य जगाता था शव-दर्शन, पहले किसी जमाने में,
निमित्त रह गया है शव अब, लोगों की भीड़ जुटाने में।
गपशप में मस्त सभी रहते, होकर ग़म से आजाद,
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।1।।

दुःख-संतृप्त शवयात्रा पहले, निकला करती थी मौन,
'राम नाम.....' का नारा है फिर, मौन रहे अब कौन?
'राम नाम.....' की आड़ में चलते, रहते वाद-विवाद,
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।2।।

आधुनिक युग में सहानुभूति का, मौलिक स्तर ढ़ह गया,
अवशेष रूप में खण्डहर उसका, आज मात्र है रह गया।
घड़ियाली आँसू भी बनकर, रह गये अब अपवाद,
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।3।।

राजनीति-व्यापारादि की, चर्चा का रहता है ज़ोर,
ध्यान किसी का नहीं जाता, इस नश्वर तन की ओर।
अमूल्य क्षणों को क्यों मानव! यूं ही करता बरबाद?
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।4।।

शोकाकुल माहौल में दागी, पहले नहीं कुछ पीते-खाते,
गुटखे-पान और चाय-कॉफी भी, शौक से अब हैं उड़ाते।
'मुझे भी मरना है' अब यह, नहीं रहता किसी को याद,
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।5।।

तुझको भी जाना होगा, हे मानव! एक दिन जग से,
सवार चार कंधों पर होगा, न चल सकेगा पग से।

मानव! अमर नहीं तू कैसा, तुझे चढ़ा उन्माद?
शवयात्रा और मरघट में भी, न किसी को कोई विषाद।।6।।

ओस-बिंदु की भांति क्षणिक, मानव-जीवन है हमारा,
फिर भी 'पर' में उलझ रहे, नहीं 'स्व' को कभी निहारा।
फुरसत कहाँ किसी को स्वयं से, जो कर ले संवाद?
सहानुभूति से मरघट 'प्रेक्षक', अब कब होगा आबाद?।।7।।

-समर्थ भवन, खींचन-342308, जिला-जोधपुर (राज.)

गुरुकृपा

■ *कवि प्रकाश नागोरी*

आपने दीक्षा ग्रण की लाभ हम लेते रहे,
आपने काँटे चुने फूल हम लेते रहे।।

ज्ञान का अध्याय हमने एक भी जाना नहीं।
आपने खुद दी परीक्षा पास हम होते रहे।।

मैं किनारे सोचता था, पार भवसागर करूँ।
राह में तूफां भी थे, पर नाव खुद खेते रहे।।

हैं कदम भी, राह भी है, आप ही मंजिल मेरी।
आप ही दाता मेरे हो झोलियां भरते रहें।।

हम है व्यापारी बबूलों को सदा सींचते रहे।
आप बन गुलशन के माली, आम ही बोते रहे।।

आपने हमको जगाने को किये कितने जतन।
ये है अपनी बदनसीबी जाग के सोते रहे।।

हमने मन को हर विकारों में डूबो मैला किया।
आप धोबी बन के 'गुरुवर' मन मेरा धोते रहे।।

वक्त का वो था करिश्मा या मेरी तकदीर थी।
मैं हुआ जिस पल तुम्हारा तुम मेरे होते रहे।।

थी हमें कैसी बीमारी जान न पाये हकीम।
आपने खाई दवा और ठीक हम होते रहे।।

-'हिना' 61, न्यू अहिंसापुरी, फतहपुरा, उदयपुर-313001 (राज.)

बाल-स्तम्भ

बोरियत से कैसे बचें?

श्री कैलाश जैन 'एडवोकेट'

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित आलेख को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 5 अक्टूबर 2011 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-250 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-200 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 150 रुपये तथा 100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

आधुनिक सभ्यता एवं शहरी संस्कृति की एक सर्वव्यापी हैरतअंगेज देन है- 'बोरियत'। बोरियत की यह प्रवृत्ति आज एक फैशन बन चुकी है। बस की प्रतीक्षा में खड़े हम बोर हो जाते हैं, किसी की बातें सुन-सुनकर बोर हो जाते हैं। हम खुद अपने ही अकेलेपन से बोर हो जाते हैं। बोर होना मानसिक अस्वस्थता का द्योतक है। यह कार्य में रस नहीं आने पर अनुभव होता है।

मानव सभ्यता ने अपने इतिहास के अनेक पड़ाव तय करते हुए प्लेग, चेचक जैसी असाध्य महामारियों पर नियन्त्रण पा लिया, लेकिन बोरियत का कोई इलाज अभी तक नहीं तलाशा जा सका है। शायद बोरियत हमारी सभ्यता का एक अनिवार्य अंग बन गई है। वस्तुतः 'बोर होना' या 'बोरियत' है क्या? शब्दकोष में दी गई परिभाषा के अनुसार बोर होने का अर्थ है- नीरसता का अनुभव करना, परेशान होकर खीझना।

अब सवाल यह है कि हमारी इस बोरियत के कारण क्या हैं? दरअसल तेज रफ्तार जिन्दगी की बहुमुखी कृत्रिम गतिविधियों में आदमी अपने ही दायरे में इतना अंतर्मुखी हो गया है कि वह जीवन एवं जगत की इतनी सारी उन्मुक्त सुन्दरता में भी अपने लिए कुछ तलाश

नहीं कर पाता। ऐसे में बोर होते रहना ही उसकी नियति बन चुकी है।

बोरियत के इस रोग से बड़े ही नहीं छोटे बच्चे भी ग्रस्त हैं। वे भी पढ़ते-पढ़ते बोर हो जाते हैं, टी.वी. सीरियल एक ही तरह का हो तो भी बोर हो जाते हैं, भोजन भी एक तरह का हो तो भी बोर हो जाते हैं। इन सब पर विचार करने से लगता है कि बच्चे भी परिवर्तन चाहते हैं, विविधता चाहते हैं। प्रश्न यह उठता है कि आज बच्चों के पास जितनी तरह की भोज्य सामग्री, पुस्तकें, खिलौने, टी.वी., कम्प्यूटर आदि हैं, उसका कुछ प्रतिशत भी पहले के बच्चों के पास नहीं था। उनके पास निश्चित भोज्य वस्तुएँ, किताबें, खिलौने आदि होते थे। फिर भी वे बोरियत महसूस नहीं करते थे। कारण खोजने पर पता चलता है कि उस समय बच्चे पशु, पक्षी और प्रकृति से जुड़े रहते थे, उनके साथ उनको परिवर्तन एवं विविधता दोनों मिल जाते थे। अतः 'बोर होना' वे जानते ही नहीं थे। आज बच्चे मशीनों से जुड़ते हैं, परन्तु वे जीवन्त नहीं होतीं, अतः उनमें प्रेम व करुणा का संचार नहीं हो पाता और वे रसहीन होकर बोर होने लगते हैं।

बोरियत के मुख्य कारण हैं- लक्ष्यहीनता, कार्य में अरुचि और सदैव स्वार्थकेन्द्रित कार्य करने की प्रवृत्ति। जीवन में कोई लक्ष्य न हो तो व्यक्ति अपने कृत कार्यों का आकलन नहीं कर पाता है। वह समझ नहीं पाता कि मेरे कार्य ठीक हुए या नहीं, तो मन में कार्य के प्रति नीरसता आने लगती है। नीरसता की भूमि पर ही बोरियत का जन्म होता है। अतः बहुत आवश्यक है कि व्यक्ति अपने जीवन में एक लक्ष्य बनाए। वह लक्ष्य अपने सामर्थ्य, शक्ति, रुचि आदि ध्यान में रखते हुए बनाए, ताकि लक्ष्य-प्राप्ति में धैर्यपूर्वक आगे बढ़ सके। लक्ष्य-पूर्ति येन-केन प्रकारेण न हो, मूल्यों के साथ उसे प्राप्त करे।

मशीनीकरण के इस युग में व्यक्ति मानसिक-कार्य शारीरिक कार्यों की तुलना में बहुत अधिक करता है। इससे शरीर और मन का संतुलन नहीं बन पाता। अतः बहुत जरूरी है कि दैनिक कार्य जहाँ तक सम्भव हो अपने हाथ से करें। इससे शरीर भी पुष्ट होता है, मन की प्रसन्नता बढ़ती है तथा जीवन में स्वावलम्बन बढ़ता है। जो स्वावलम्बी

होता है वह किसी भी कार्य को छोटा-बड़ा नहीं समझता है, प्रत्येक कार्य में रुचि लेकर उसे ठीक से सम्पादित करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार उसके कार्यों में विविधता होती है। यह विविधता उसके भीतर कार्य-रुचि बनाए रखती है।

दरअसल हम अपने आस-पास की दुनिया से इस कदर कट चुके हैं कि अपने चारों तरफ रहते लोगों और घटती घटनाओं तक में हमारी कोई दिलचस्पी नहीं रही। हम लोगों से मिलते हैं और मिलकर खुश होने का ढोंग करते हैं, जबकि उनसे मिलकर वस्तुतः हमें कोई खुशी नहीं होती। जब सम्बन्ध सतही हो जाते हैं, तो उनमें घनिष्ठता तलाश करना फिजूल होता है, लेकिन लोकाचार के नाते हमें कृत्रिम प्रसन्नता का पाखण्ड करना होता है, जबकि हम वास्तव में बोर हो रहे होते हैं।

बोरियत एक ऐसी मनःस्थिति है, जो आदमी को विचलित एवं अस्वस्थ कर देती है तथा मस्तिष्क को तनावग्रस्त कर देती है। ईर्ष्या, असफलता एवं आत्म-विश्वास का अभाव भी बोरियत के कारण हैं। बोरियत दूर करने के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात है कि स्वयं को यथा-सम्भव व्यस्त रखा जाए। स्वस्थ एवं दीर्घायु जीवन जीने के लिए जरूरी है कि मनुष्य स्वकेन्द्रित होकर ही दुनिया में नहीं जीए। वह अपने आपको स्व-हित के कार्यों में ही व्यस्त न रखे। अपने को पर-हित से भी जोड़े। वह यह सोचे कि मैं दूसरों के लिए क्या कर सकता हूँ? उनकी कितनी सहायता कर सकता हूँ? उनके दुःख को कैसे दूर कर सकता हूँ? इस प्रकार का चिन्तन जीवन में सरसता और उमंग पैदा करता है। स्वार्थ का त्याग कर पर-सेवा करने से जीवन में करुणा, मैत्री के भाव को बल मिलता है। इन भावों से आत्म-बोध की ओर रुचि बढ़ती है। आत्म-बोध की प्रक्रिया में आत्मरस वृद्धिंगत होने से जीवन की नीरसता समाप्त हो जाएगी और बोरियत का अभाव हो जाएगा।

-34, बंदा रोड़, भवानी मण्डी-326502, जिला-झालावाड़ (राज.)

प्रश्नः-

1. बोर होने का क्या अर्थ है तथा यह किसका द्योतक है?

2. बोर होने के कारण बताइए।
3. बोरियत दूर करने के लिए क्या उपाय हो सकते हैं?
4. स्वस्थ एवं दीर्घायु जीवन जीने के लिए क्या करना चाहिए?
5. स्वावलम्बन से क्या लाभ है?
6. विलोम शब्द लिखिए-

स्वहित, नीरसता, स्वावलम्बन, अन्तर्मुखी।

बाल-स्तम्भ [जुलाई-2011] का परिणाम

जिनवाणी के जुलाई-2011 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'आह्वान : नौनिहाल पीढ़ी को' कहानी के प्रश्नों के उत्तर 22 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक 25 में से दिये गये हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-250/-	रत्नेश बोहरा-जोधपुर	25
द्वितीय पुरस्कार-200/-	सौरभ भण्डारी-पीपाडशहर	24.5
तृतीय पुरस्कार- 150/-	अर्पित जैन-जोधपुर	24
सान्त्वना पुरस्कार- 100/-	गौरव जैन-जोधपुर	24
	प्रणत धींग-बम्बोरा	23.5
	नवीन वैद-भीनासर	23.5
	सुजल जैन-मंदसौर	23
	गजेन्द्रकुमार जैन-जयपुर	22.5

निःशुल्क प्राप्त करें

निम्न उपयोगी अवशिष्ट प्रतियाँ धर्मप्रचारार्थ जीवदया मण्डल ट्रस्ट द्वारा निःशुल्क वितरण करने का निर्णय लिया गया है। जिन्हें आवश्यकता हो, डाक शुल्क 8 रुपये (टिकट या नकद) भिजवाकर मंगवा सकते हैं- 1. उत्तम षोडश भावनाएँ, 2. समाधिमरण, 3. मूढ़ता की वकालत, 4. स्वाभाविक आहारःशाकाहार, 5. भगवान मल्लिनाथ चरित्र (पद्य), 6. गृहस्थ-साधक टीप, 7. शराब है खराब, 8. णमोकार महामंत्र। **-मंत्री,** जीवदया मण्डल ट्रस्ट, डागा सदन, संघपुरा, पो. टोंक-304001 (राज.)

श्राविका-मण्डल

मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (18)

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा संचालित)

अ. भा.श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.) से प्रकाशित पुस्तक **जैन धर्म का मौलिक इतिहास (भाग दो-सामान्य पूर्वधर खण्ड)** के आधार पर संचालित मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता की यह छठी किश्त है। प्रतियोगी के उत्तर लाइनदार पृष्ठ पर मय अपने नाम, पते (अंग्रेजी में), दूरभाष न. सहित Smt. Vajainti Ji Mehta, C/o Shri Anil Ji Mehta, 91, 5th main, 5th A cross, III Block, Tayagraj Nagar, Banglore-560028 (Karnataka) Mobile No. 09341552565 के पते पर 10 अक्टूबर 2011 तक मिल जाने चाहिए।

सर्वश्रेष्ठ तीन प्रतियोगियों को क्रमशः राशि 500, 300, 200 तथा 100-100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार दिए जायेंगे। इसके अतिरिक्त वर्ष के अन्त में 12 माह तक प्रतियोगिता में भाग लेने वाले और सर्वश्रेष्ठ रहने वाले प्रतियोगी को विशेष पुरस्कार दिए जायेंगे। - *मधु सुराणा, अध्यक्ष*

जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग-2

(पृष्ठ 241 से 300 तक से प्रश्न)

(अ) मुझे मेरा नाम दो।

1. मुझ पर किसी विद्या का प्रभाव नहीं हो सकता।
2. मैंने मगध राज्य का पर्याप्त विस्तार कर लिया था।
3. मुझे अमेध्यकूप (गन्दा पानी डालने का कुआ) में ढ़केल दिया।
4. मैं कलिंगपति सुलोचना राजा का जामाता बना।
5. मुझे राज्य के अधिकार से वंचित कर दिया।

(आ) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए:-

6. जो आपको.....अधिक.....है।
7. .....और ..... ने .....में ही ..... किया।
8. धारिणी ..... में..... के .....पहुँची।
9. ..... की ही तरह ..... भी ..... का ..... था।
10. भय के ..... उसका ..... उठा।

(इ) किसने किसको कहा ?

11. यह शत्रु मेरा सहोदर किस प्रकार हो सकता है ?
12. भगवन्! मैं यह जानना चाहता हूँ कि मैं वास्तव में कौन हूँ?
13. एक प्राण – दो शरीर सहोदरों में परस्पर यह युद्ध कैसा ?
14. देखो वह मधु बिन्दु मेरे मुंह में टपकने वाली है।
15. देव ने हमें इस राज्य का उत्तराधिकारी दिया है।

(ई) हाँ या ना में उत्तर दीजिए:–

16. धर्मयश मुनि का यश चारों ओर छा गया।
17. यह तो कोई अलौकिक अनुपम अज्ञानी विरागी पुरुष है।
18. एक ही भव में किस तरह 18 प्रकार के सम्बन्ध हो जाते हैं।
19. मगध के राज्यपाट पर कूणिक के पुत्र उदायी का अभिषेक किया गया।
20. जैन ग्रन्थों में इस प्रकार का कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

(उ) पर्यायवाची शब्द लिखिए।

21. क्षत्रौजा –
22. मातुल –
23. करोटी –
24. चाप –
25. कुणिक –

मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (16) का परिणाम

जिनवाणी जुलाई, 2011 में पूछे गए प्रश्नों के उत्तर 262 व्यक्तियों से प्राप्त हुए। 25 अंक प्राप्तकर्ता विजेताओं का चयन लॉटरी द्वारा किया गया है।

प्रथम पुरस्कार- श्री कंवलराज मेहता-जोधपुर (राज.)

द्वितीय पुरस्कार- शान्ता पीतलिया-अमरावती (महा.)

तृतीय पुरस्कार-श्री तनय ललवानी-नागौर (राज.)

सान्त्वना पुरस्कार-

1. यशोदा माणकचन्द जी गुन्देचा-नागपुर (महा.)
2. मंजू जैन श्री कृष्णमोहन जी जैन-हिण्डौन सिटी, करौली (राज.)
3. मोनाली मिश्रीलाल पीपाड़ा-इचलकरंजी (महा.)
4. अनीता अतुल मुणोत-इचलकरंजी (महा.)
5. कल्पना धाकड-गुड़गांव (हरियाणा)

अन्य 25 अंक प्राप्तकर्ता–Aarti Rajendrakumarji Mutha-Amravati (M.H), Abha Jain-Alwar, Abhilasha Hirawat-Mumbai, Anu Jain-Hoshiarpur, Aruna Jain-Hosiarpur Punjab, Asha Dosi-Jaipur, Ashish Jain-Sawai Madhopur, Babulal Jain-Mansarovar Jaipur, Babulal Ratanchand Jain-Jalgaon, Bharti Sunil Surpure-Ichalkaranji, Bhavika Shah-Belgaum, Chandan Mal Gugalia-Pali Marwar, Chandni Jain-Indore, Chandra Munot-Mumbai, Chandrakala Mehta-Bangalore, Chandralata mehta-Dudu, Jaipur, Chetana B Bothra-Mumbai, Chirag Jain-Sawai Madhopur, D.C.Jain-Jaipur, Deepmala Singhvi-Pali Marwar, Devendra Nath Modi-Jodhpur, Dharmesh Punamiya-Pali Marwar, Ghewarchand Chajjer-Bellary, Hajarimal jain-Durg (C.G), Hansa Devi Surana-Bikaner, Hem Raj Surana-Jaipur, Hema Jain-Jaipur, Hema Kishore Bagmar-Secundrabad, Hemlata Jain-Beawar, Hemlata Kherada-Bhilwara, Indu Kamleshji Jain-Mumbai, Janesh Surana-Pali Marwar, Javer Narendra Shah-Belgaum, Jaya Bhandari-Beawar, Johari Mal Chajjer-Jodhpur, Jyoti Bhansali-Bangalore, Kamala Modi-Jodhpur, Kamla Singhvi-Jaipur, Kamla Surana-Pali Marwar, Kanak Bader-Delhi, kanchan Lodha-Nasik, Kanhaiya Lal Jain-Bhilwara, Kiran Jain-Hoshiarpur, Kiran Kothari-Jaipur, Kiran Kumbhat-Jodhpur, Kiran Pramod Tated-Dewas (M.P), Kishor Munisa-Bikaner, Komal Ankur Kothari-Baroda, Krishna Agarwal-Jaipur, Kuntal Kumari Jain-Jaipur, Kusum Pareshji punamiya-Ichalkaranji, Lad Devi Hirawat-Jaipur, Lata Satishji Aanchaliya-Dhulia (M.H), Leelabai Prakashchandji Munot-Ichalkaranji, Leena Mahendra Jain-Chiplun, Ratnagiri, Mahendra Kumar Jain-Alwar, Mamta Jain-Sawai Madhopur, Manila Parakh-Jaipur, Manju Bhandari-Beawar, Manju Dilip Jain-Mumbai, Manjula Vasant kumarji Jain-Mumbai, Manoj Kothari-Udaipur, Maya Alijar-Secundrabad, Mayuri Jain-Dhule, Meenakshi Mehta-Ajmer, Meenu Jain-Chennai, Munnalal Bhandari-Jodhpur, Narendra Gopichand Bamb-Bhayandar, Naurat Mal Changailiya-Ajmer, Neelam Chipad-Dudu, Jaipur, Neelam Jain-Ajmer, Neelam Kankaria-Nagaur, Neelu Jain-Ludhiana, Punjab, Neha Jain-Sawai Madhopur, Nilima Yograjji Chopda-Ichalkaranji, Nirmala Hirawat-Jaipur, Nirmala Rajendraji Bora-Ichalkaranji, Nirmala Vijayji Gundecha-Kolhapur, Nisha Jain-Aligarh, Tonk, Nutan Ajit Bhandari-Ichalkaranji, Padam Chand Agarwal-Jaipur, Padam Chand munot-Jaipur, Pinky jain, Pinky Jain-Jaipur, Pista Golecha-Jaipur, Pooja Nitin Bora-Ichalkaranji, Prabha Gulecha-Bangalore, Pramila Babulalji Pokarna-Dhulia (M.H), Pramila Bohra-Jaitaran, Pramila Mehta-Dudu, Jaipur, Pramila Sajjanrajsa Mehta-Bangalore, Pratibha Pradeepji Gandhi-Pune, Praveena Kothari-Jaipur, Preeti Jain-Jaipur, Preeti khincha-Jaipur, Prem Jain-Alwar, Premlata Lodha-Jaipur, Premlata Sand-Pali Marwar, Priyanka Jain-Jaipur, Priyanka mukesh Chopda-Ichalkaranji, Pushpa Hastimal Golecha-Beawar Ajmer, Pushpa Jain-Jaipur, Pushpa Jain-Pali Marwar, Pushpa Navlakha-Jaipur, Pushpa Prakashchand Kankariya-Raichur, R. Chandra Bothra-Choolai, Rajendra Kumar Chopra-Jabalpur M.P, Rajul Rameshji Kothari-Dhulia (M.H), Ratan Chand Mehta-Jodhpur, Ratan Karnawat-Jaipur, Rekha Kankariya-Pali Marwar, Rikab Raj Bohra-Delhi, Rishabh Jain-Bundi, Sadhana Dilipji Gugale-Ichalkaranji, Sangeeta Jain-Sawai Madhopur, Sangeetha P Baid-Chennai, Sangita Ravindra Chhajed-Jalgaon, Sapna R Jain-Amravati (M.H), Sarita Manoj Babel-Ichalkaranji, Sarita Vinod Jain-Ajmer, Sarla Golecha-Beawar , Sarla Rameshji Chajjed-Jalgaon, Saroj Nahar-Delhi, Seema Dhing-Udaipur, Shakuntala Hansrajji Bohra-Ichalkaranji, Shashank Choudhary-Jaipur, Shashikala Sakhlecha-Bangalore, Sheela Surana-Jaipur, Sheelu Hirawat-Jaipur, Shilpa Surana-Ajmer, Shobha Nahar-Secundrabad, Siddhi Bafna-Jodhpur, Smita Nileshji Muthiyan-Ichalkaranji,

Subhash M Dhadiwal-Mumbai, Sudha Bhansali-Jodhpur, Sugan Chand Chajjer-Jodhpur, Suman Daga-Bhopal, Suman Jain, Sunita Doshi-Beawar, Sunita Kankariya-Ahemdabad, Sunita Navlakha-Kota, Sunita Oswal-Jaipur, Suresh Kumar Sand-Pali Marwar, Sushila Bhandari-Bangalore, Sushila Kantilalji Runwal-Pune, Sushila S Surana-Nasik, Sushila Tater-Bhilwara, Suvarna Nitin Bora-Ichalkaranji, Sweety Golecha-Beawar Ajmer, Ugama Bai Dosi-Secundrabad, Upma Choudhary-Ajmer, Urmila Mehta-Jaipur, Usha Lunawat-Ajmer, Usha Surana-Jaipur, Vandana Punamiya-Pali Marwar, Varsha Dosi-Nagaur, Vijaimal Mehta-Jodhpur, Vijay Laxmi Mohnot-Jaipur, Vikas Bamb-Mumbai, Vimla N Mehta-Jodhpur, Vimla Ranulal Kocchar-Nasik, Yugal Nemichand Ranka-Ahmedabad, Parsabai D Runwal-Bijapur, Jaanvi Sagar Gandhi-Ichalkaranji, laxmi kawad-Pali, Marwar, Rohit Oswal-Jaipur, Sagar mal Nahar-Chittorgarh, Bhikam Chand Kothari-Chennai, Kalpana Kathariya-Bagalkot, Sangita Rameshji Chordiya-Nasik, Anjana Jain-Jaipur, Dharm Chand Bafna-Bikaner, Sushil Hirawat-Jaipur, Balwant Singh Chordia-Jhalarapatan, Manjulata Jamer-Jaipur, Sweta Jain-Duni Tonk, Kshama Jain-Mumbai, Sapna Jain-Bundi, Madhu Bala Jain-Bundi, Abhay kumar Jain-Patiala.

24 अंक प्राप्तकर्ता– Alpa Rameshji Kothari-Dhulia (M.H), Anil kumar Jain-Kota, Anita Duggad-Dhulia (M.H), Chanchal Golecha-Jaipur, Chandan Mal Parlecha-Jodhpur, Divya Daga-Jaipur, Gunmala Jain-Chittorgarh, Hans Raj Mohnot-Jaipur, Jaimala Jain-Sawai Madhopur, Jyoti Lodha-Nagpur, Kamala Devi Satia-Ajmer, Kusum Singhvi-Jodhpur, Lalita Devi Runwal, Lalita Ganeshji Surana-Solapur, Manju Kanstiya-Kolkata, Meena Vijay Bora-Mumbai, Meenabai Rajkumari Nahar-Ichalkaranji, Monika Jain-Kapurthala, Mridula Kumbhat-Jodhpur, Nathmal kothari-Durg (C.G), Neetu Gulecha-Hyderabad, Nenchand Bafna-Jodhpur, Padma R Bohra-Raichur, Poonam Jain-Faridkot, Punjab, Prabha Kishan Kataria-Mumbai, Pramila Kothari-Jodhpur, Prasan Gang-Mumbai, Prasan Kothari-Jodhpur, Priti Jain-Ujjain, Pukhraj Sethiya-Ajmer, Rajkumari Lodha-Jaipur, Rakhi Jain-Dooni (Tonk) Rajasthan, Reema Jain-Ludhiana, Punjab, Renumal Jain-Jodhpur, Sarla Kankariya-Jalgaon, Shashikala P Lunawat-Nasik, Shobha Sagarmalji Kothari-Dhule, Sonam Golecha-Beawar Ajmer, Sudha Daga-Bikaner, Sunanda Lodha-Dhulia (M.H), Sunayana Gelra-Borawar, Sunitha Y Singhvi-Chennai, Surekha Nemichandji Nahar-Jaipur, Suresh Chand Jain-Alwar, Sushila Gang-Jodhpur, Sushila Ranka-Jalgaon, Trupti P Bora-Ichalkaranji, Ugma Devi Duggar-Bangalore, Usha Praveenji Bardia-Dhulia (M.H), Vibha Jain-Jodhpur, Vijay Laxmi - Ajmer, Vimalabai Kankariya-Jalgaon, Vinod Kumar Palrecha-Jodhpur, Pawan Kumar Jain-Sawai Madhopur, Kamlesh Gelada-Ajmer, Anita A Khivasara-Mumbai, Akshay Jain-Sawai Madhopur, N.K.Malliga-Vellore, Akhilesh-Jodhpur.

23 या इससे कम अंक प्राप्तकर्ता– Basanta Madanlalji Sanklecha-Dhulia (M.H), Basanti Champalal Bhatewar-Dhulia (M.H), G.C.Kothari-Ajmer, Kamla Surana-Jodhpur, Pramila Mehta-Ajmer, Prem kanta kothari-Jaipur, Renu Heerawat-Jaipur, Saroj Parasmalji Runwal-Dhulia (M.H), Shobha N Gugale-Ichalkaranji, Vidhya Sanghvi-Badnawar, Vimla Bohra-Jaipur, Hemant Jain-Sawai Madhopur, Anjana Rajendraji Jain-Dewas (M.P), Surya Kala Bagmar-Chennai, Prakashbai Bhurawat-Bhandara, Rekha Surana-Nagaur, Seema Jain-Aligarh, Tonk, Minal Jain-Sawai Madhopur, Shakuntala Jain-Sawai Madhopur, Shakuntala Khushalchand Khivasara-Jalgaon, Kamla Singhvi-Jalgaon.

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

जैन एकता का प्रश्न- डॉ. सागरमल जैन, प्राच्य विद्यापीठ, दुपाड़ा रोड़, शाजापुर-465001 (म.प्र.), ***पृष्ठ***- 32, ***मूल्य***-उल्लेख नहीं, ***संस्करण***-उल्लेख नहीं।

जैन समाज न केवल धार्मिक दृष्टि से विभिन्न सम्प्रदायों में बंटा हुआ है, अपितु सामाजिक दृष्टि से अनेक जातियों और उपजातियों में विभाजित है। दिगम्बर परम्परा के बीस पंथ, तेरापंथ और तारणपंथ ये तीन उपविभाग हैं। वर्तमान में कानजी स्वामी के अनुयायियों का नया सम्प्रदाय भी बन गया है। श्वेताम्बर परम्परा में मूर्तिपूजक, स्थानकवासी एवं तेरापंथी ये तीन सम्प्रदाय हैं। इनमें मूर्तिपूजक और स्थानकवासी अनेक गच्छों में विभाजित हैं। श्रीमद् राजचन्द्र के कविपंथ का भी स्वतन्त्र सम्प्रदाय के रूप में अस्तित्व है। जैन धर्म के ये सभी सम्प्रदाय परस्पर बिखरे हुए हैं और कोई भी ऐसा सूत्र तैयार नहीं हो पाया है, जो इन बिखरी हुई कड़ियों को एक दूसरे से जोड़ सके । जैन जातियां परस्पर बंटी हुई हैं, जिनमें परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध नहीं होते हैं। जैन-जातियों में पारस्परिक अलगाव की स्थिति उनकी भावनात्मक एकता में बाधक है। डॉ. सागरमल जैन लिखते हैं-'' हमारा बिखराव दोहरा है- एक जातिगत और दूसरा सम्प्रदायगत। जब तक इन जातियों में परस्पर विवाह-सम्बन्ध और समानस्तर की सामाजिक एकात्मता स्थापित नहीं होती तब तक भावनात्मक एकता को स्थायी आधार नहीं मिलेगा।'' '' जैन धर्म मूलतः जातिवाद एवं ऊँच-नीच का समर्थक नहीं रहा है, यह सब उस पर ब्राह्मण संस्कृति का प्रभाव है। यदि हम अन्तरात्मा से जैनत्व के हामी हैं तो हमें ऊँच-नीच और जातिवाद की इन विभाजक दीवारों को समाप्त करना होगा, तभी भावनात्मक सामाजिक एकता का विकास होगा।'' ''जैन समाज की एकता की आवश्यकता दो कारणों से है। प्रथम तो यह कि पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष एवं प्रतिस्पर्धा में समाज के श्रम, शक्ति और धन का जो अपव्यय हो रहा है, उसे रोका जा सके। दूसरे, जैनधर्म की धार्मिक एवं सामाजिक एकता का प्रश्न आज इसलिए महत्त्वपूर्ण बन गया है कि अब इस प्रश्न के साथ हमारे अस्तित्व का प्रश्न जुड़ा हुआ है। प्रजातन्त्रीय

शासन-व्यवस्था में किसी वर्ग की आवाज़ इसी आधार पर सुनी और मानी जाती है कि उसकी संगठित मतशक्ति एवं सामाजिक प्रभावशीलता कितनी है।'' ''समाज में जब कोई मुनि या पण्डित थोड़ा बहुत प्रवचन-पटु बना कि वह अपना एक तम्बू अलग गाडने का प्रयास करने लगता है। अपने उपासक अपनी संस्था और अपना पत्र इस प्रकार एक नया वर्ग खड़ा हो जाता है और बिखराव की स्थिति आ जाती है।'' ''यदि हम सच्चे हृदय से जैन एकता को चाहते हैं तो समाज से व्यक्तिपरक स्तुतियाँ तत्काल बन्द कर देना चाहिए।'' समाज में जब व्यक्तिपूजा के स्थान पर गुणपूजा प्रतिष्ठित होगी तभी समाज में एकता की भावना सबल होगी।'' ''हमारी धार्मिक एवं सामाजिक एकता का विकास तभी सम्भव है जब सामाजिक जीवन में व्यक्तियों के अहंकार के पोषण की अमर्यादित प्रवृत्तियाँ प्रतिबन्धित हों और दूसरों को हीन बताने या अपमानित करने के अवसर नहीं हों।''

लेखक ने जैन एकता के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया है। उन्होंने लघु पुस्तिका में जैन धर्म के साम्प्रदायिक मत भेदों एवं उनके निराकरण के उपायों की चर्चा की है। मूर्तिपूजा, दयादान, मुखवस्त्रिका, सचेलता-अचेलता, स्त्री-मुक्ति, केवली-कवलाहार जैसे प्रश्नों पर भी विमर्श किया है। डॉ. जैन साहब ने पर्युषण पर्व एवं संवत्सरी की एकरूपता पर भी चिन्तन दिया है। यह छोटी-सी पुस्तिका विचारों की समग्रता से परिपूर्ण है, जो पाठक को विशेष सामग्री तथा चिन्तन के आयाम प्रदान करती है।

अहिंसक जीवन शैली- श्री चंचलमल चोरडिया, ***प्रकाशक***- कल्याणमल चंचलमल चोरडिया ट्रस्ट, चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.), ***पृष्ठ***- 32, ***मूल्य***-15 रुपये, वर्ष का उल्लेख नहीं।

लेखक का मन्तव्य है कि हिंसा आत्म-विकास में बाधक है एवं अहिंसा मानव-चेतना का विकास करती है। आज खान-पान, व्यवसाय, शिक्षा-चिकित्सा आदि में बढ़ती हिंसा को रोककर किस प्रकार अहिंसक जीवन जीया जा सकता है, इसकी पुस्तक में सुन्दर प्रस्तुति हुई है। पुस्तक के प्रमुख अध्याय हैं- 1. क्या अहिंसक जीवन जीना सम्भव है?, 2. अच्छे स्वास्थ्य हेतु संयम आवश्यक, 3. क्या स्वास्थ्य के लिए सम्यक्दर्शन आवश्यक है? 4. क्या उपचार हेतु हिंसा उचित है? 5. सम्यक्दर्शन और स्वास्थ्य, 6. सेवा हेतु हिंसा को समर्थन अनुचित, 7. पशु-क्रूरता कानून कितना न्याय संगत?

श्री जैठमल गुलेछा, 269, सरदारपुरा 4बी रोड़, जोधपुर से प्राप्त पुस्तकें:-

1. ***स्वप्नः एक चिन्तन (20 पृष्ठ)***- इसमें आगमों के आधार पर स्वप्न सम्बन्धी चर्चा का संग्रह है। पुस्तक का मूल्य नित्य स्वाध्याय है।
2. ***प्रत्याख्यान सूत्र (84 पृष्ठ)***- इसमें प्रत्याख्यानों के पाठ, उनका अर्थ एवं विवेचन दिया गया है। पुस्तक अतीव उपयोगी बन गई है। मूल्य नित्य स्वाध्याय है।

क्षमायाचना

छद्मस्थता में त्रुटि स्वाभाविक है। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व की आराधना करते हुए हमने भाद्रपद शुक्ला 4 गुरुवार, 01.09.2011 को सांवत्सरिक प्रतिक्रमण कर सर्व जीवयोनि से विशुद्ध हृदय से क्षमायाचना की है। हम पूज्य आचार्यप्रवर-उपाध्यायप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द से अविनय-आशातना के लिए करबद्ध क्षमाप्रार्थी हैं, वहीं संघ-समाज के सभी भाई-बहनों से हार्दिक क्षमायाचना करते हैं।

क्षमाप्रार्थी

सुमेरसिंह बोथरा	गौतमचन्द हुण्डीवाल	पूरणराज अबानी
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	महामंत्री

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

पी.एस. सुराणा	सम्पतराज चौधरी	विरदराज सुराना
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

मधु सुराणा	मंजू भण्डारी,पूर्णिमा लोढ़ा	शशि टाटिया
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	महासचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर

बुधमल बोहरा	राजकुमार गोलेच्छा	मनोज कांकरिया
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	महासचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर

सुशीला बोहरा	गौतमचन्द कवाड़	राजेश कर्णावट
संयोजक	सह संयोजक	सचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

नवरतन डागा	राजेश भण्डारी
संयोजक	सचिव

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर

विमला मेहता	धर्मेश चौपड़ा	सुभाष हुण्डीवाल
संयोजक	सह संयोजक	सचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर

स्वाध्यायी परिचय

वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री उम्मेदचन्द जी जैन

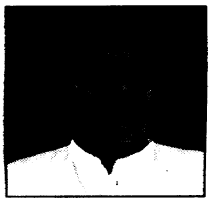

समाज-सेवी, सहनशील, सदाचारी, व्यवहारकुशल वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री उम्मेदचन्द जी जैन का जन्म जरखोदा निवासी सुश्रावक श्री हरकचन्द जी जैन की अर्धांगिनी सुश्राविका श्रीमती कल्याणी देवी की कुक्षि से 5 दिसम्बर 1951 को जरखोदा जिला-बूंदी (राज.) ग्राम में हुआ। धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत श्री उम्मेदचन्द जी की प्रारम्भिक शिक्षा जरखोदा में तथा माध्यमिक शिक्षा ग्राम नैनवाँ में हुई। व्यावहारिक शिक्षा के साथ-साथ माता-पिता के संस्कार के प्रभाव से तथा प्रातः स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की प्रेरणा से मात्र 20 वर्ष की अवस्था में आप स्वाध्यायी बने, तब से अब-तक निरन्तर पर्युषण सेवा द्वारा जिन धर्म की प्रभावना हेतु तत्पर हैं। आप कई वर्षों से ग्राम पंचायत जरखोदा के सरपंच पद का भी कुशलता पूर्वक निर्वहन कर रहे हैं।

आपने आध्यात्मिक शिक्षा बोर्ड, घोड़ों का चौक, जोधपुर द्वारा आयोजित प्रवेशिका की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की। आपको प्रतिक्रमण, 25 बोल, भक्तामर स्तोत्र, मेरी भावना, 21 भजन तथा 8 चौबीसियाँ कण्ठस्थ हैं। धार्मिक शिविरों में भाग लेकर अपना आध्यात्मिक ज्ञान बढ़ाने में विशेष रुचि रखते हैं। उत्तराध्ययन सूत्र, दशवैकालिक सूत्र तथा अन्तगड दशा सूत्र का आपने वाचन किया है।

पर्वाधिराज पर्युषण में आपने मारवाड़, पोरवाल, पल्लीवाल, मेवाड़, तमिलनाडु, महाराष्ट्र आदि क्षेत्रों में पधार कर अपनी सेवाओं द्वारा जन-जन में धार्मिक रुचि पैदा कर जिनवाणी की प्रभावना की है। पर्युषण पर्व में आप उभयकाल प्रतिक्रमण, प्रार्थना अन्तकृत सूत्र का वाचन एवं व्याख्या, चौपाई, प्रतियोगिताएँ और अन्त्याक्षरी द्वारा लोगों को धर्म से जोड़ने हेतु प्रयासरत रहते हैं। आपने अब तक निम्न क्षेत्रों में सेवा देकर धर्म की प्रभावना की- कैथूदा, अलीगढ़, खातोली, सुमेरगंज मंडी, आरणी, सिहारे, जरखोदा, विटनेर, हीरापुर, बड़ा महुआ, लासूर, खलाणे, वाकोद, गंगापुर

सिटी, बडेर, भरतपुर, देवली छावनी, नागद, कुण्डेरा, धरणगांव, छोटा भटवाड़ा, मण्डलेश्वर, वर्धमान नगर, धनारीकला, दूणी, समीधी, देई आदि।

आपकी वक्तृत्व शैली अच्छी है और गायन शैली उत्तम है। आपने कई स्वाध्यायी शिविरों में भाग लेकर ज्ञानार्जन के साथ अपनी कई प्रकार की जिज्ञासाओं को भी शान्त किया है। घर में रहते हुए आप प्रतिदिन दो सामायिक तथा प्रतिदिन प्रतिक्रमण करते हैं। प्रतिदिन नवकारसी करते हैं। चाय का सर्वथा त्याग, सामूहिक भोज में जमीकंद का त्याग, अष्टमी-चतुर्दशी को हरी वनस्पति का त्याग, होली पर रंग खेलने एवं दीपावली पर बारूद का त्याग है। काव्य पाठ, भजन और मुक्तक आदि लिखने में आपकी विशेष रुचि है।

आप सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं में विशेष सहयोग करते रहते हैं। असहाय लोगों की सेवा में आपको विशेष आनन्दानुभूति होती है। धार्मिक प्रचार-प्रसार कार्यक्रम में, नये स्वाध्यायी बनाने, ज्ञान-ध्यान सिखाने तथा अपने क्षेत्र में जहाँ-जहाँ स्वाध्यायी सेवा देने जाते हैं उन्हें सम्भालकर उन्हें प्रोत्साहित करने में भी आपका पूर्ण सहयोग रहता है।

-मोहनकौर जैन, पूर्व सचिव, स्वाध्याय संघ, जोधपुर (राज.)

कविताएँ

डॉ. दिलीप धींग

अवशेष

अपनी बचकानी हरकतों के क्रम में
कुछ आदमियों ने बचाई थी
थोड़ी-सी संवेदना
सिर्फ आदमी के लिए!
तब से बची-खुची आदमियत ने भी
दम तोड़ दिया।
अब बची है संवेदना से शून्य
जिन्दा लाशों की भीड़।

खण्डहर

भव्य विशाल गगनचुम्बी प्रासाद
इन खण्डहरों का अतीत थे;
इन आलीशान इमारतों का
भविष्य है खण्डर;
हमें न अतीत का भान,
न भविष्य की पहचान,
और हो रहा खण्डहर
हमारा वर्तमान।

-53, डोरेनगर, उदयपुर-313002 (राज.)

समाचार-विविधा

आचार्यप्रवर के सान्निध्य में जिनवाणी का बरसा अमृत, श्रावक-श्राविकाओं में अपूर्व उत्साह

पन्द्रह मासखमण, 200 अठाई तप एवं सैकड़ों तेले सम्पन्न

महासती निरंजना जी द्वारा 36 दिवसीय तप

परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा 11 तथा साध्वीप्रमुखा, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा., तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 12 के चातुर्मास के सुयोग से ज्ञानाराधन-तपाराधन-धर्माराधन का अनमोल अवसर प्राप्त हुआ है। कला, साहित्य, संस्कृति के संगम-स्थल जोधपुर महानगर के आबाल-वृद्ध सभी सदस्यगण गुरुभक्ति, संघदीप्ति और सत्संग-सेवा, संत-समागम के सुयोग से न केवल हर्षित-प्रमुदित हैं, अपितु ज्ञान-ध्यान, त्याग-तप, साधना-आराधना और व्रत-नियमों की श्रद्धा समर्पित करने में सक्रिय हैं।

आचार्यप्रवर पूज्य गुरुदेव के सामायिक-स्वाध्याय भवन पावटा चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश से उपवास-आयंबिल-एकासन व तेले की लड़ी का शुभारम्भ हुआ वह अनवरत गतिमान है। प्रार्थना, प्रवचन, प्रश्न-चर्चा, शास्त्र-वाचन, प्रतिक्रमण जैसे दैनिक कार्यक्रमों में सूर्यनगरी के विभिन्न क्षेत्रों एवं उपनगरों के श्रद्धालुओं की भक्ति-भावना के कारण भक्तजन उमड़-घुमड़ कर गुरु-सन्निधि के लाभ से लाभान्वित हो रहे हैं। अष्टमी, चतुर्दशी व रविवारीय अवकाश के दिनों में सामूहिक दया-संवर और उपवास-पौषध की साधना का सुन्दर रूप अपने-आप में अनूठा है।

रविवार के ध्यान-साधना शिविर के आयोजन में युवकों का उत्साह प्रेरणादायी है। साथ ही साथ बाल-संस्कार शिविर में बालक-बालिकाओं का भी अपूर्व उत्साह है। ज्ञान-साधना में शास्त्रवाचन, बोल-थोकड़ों का अभ्यास एवं सामायिक-प्रतिक्रमण कण्ठस्थ करने वालों की रुचि व भावना वस्तुतः

अनुकरणीय है।

पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर की पावन प्रेरणा से उपवास-बेले-तेले-पाँच-आठ-दस-बारह-पन्द्रह-इक्कीस, मासखमण व मासखमण के उपरान्त तपश्चर्या में बुजुर्ग श्रावक-श्राविकाओं, युवक-युवतियों के ही नहीं बालक-बालिकाओं के उल्लास की भी निरन्तरता बनी हुई है। पन्द्रह मासखमण, करीब 200 अट्ठाइयों के साथ सैंकड़ों तेलों की तपश्चर्या तप-साधकों की भावना का अनुपम उदाहरण है। बाह्य तप के साथ आभ्यन्तर तप रूप कषाय विजय की पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा साकार करने में सूर्यनगरीवासी नित्यप्रति क्रोध-त्याग के प्रति सजग हैं। कोई एक माह, एक वर्ष एवं कोई जीवनपर्यन्त क्रोध से बचने का संकल्प कर रहे हैं।

प्रवचन-सभा में विशाल उपस्थिति और स्वप्रेरित अनुशासन का आदर्श दिखाई दे रहा है। आचार्यप्रवर के अतिशय प्रभाव से आबाल-वृद्ध सभी प्रवचन-श्रवण में समय का सदुपयोग कर रहे हैं। रविवार को ऊपर-नीचे दोनों स्थानों पर प्रवचन-व्यवस्था करके जनसमुदाय को जिनवाणी श्रवण करवाई जा रही है। पर्वाधिराज पर्युषण महापर्व पर पावटा, शक्तिनगर और घोड़ों का चौक तीनों स्थानों पर पर्वाराधन की व्यवस्था देकर संघनायक ने जिस दूरदर्शिता का परिचय दिया है वह सूर्यनगरीवासियों की साधना-आराधना के लिए सुन्दर व्यवस्था बन गई है। तीनों ही स्थानों पर अपूर्व उत्साह बना हुआ है। शक्तिनगर स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा., श्रद्धेय श्री मनीषमुनि जी म.सा. आदि ठाणा 4 एवं घोड़ों के चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में व्याख्यात्री महासती श्री शांतिप्रभा जी म.सा., महासती श्री दर्शनलता जी म.सा. आदि ठाणा 3 की सन्निधि में पर्वाराधन पर तीनों स्थानों पर नवरंगी, पचरंगी के साथ संवर-पौषध की साधना, नमस्कार महामंत्र का जाप, प्रश्नोत्तर प्रतियोगिताओं के आयोजन एवं तपस्याएं सफलता पूर्वक सम्पन्न हुई हैं।

आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण और सत्संग-सेवा की भावना से समीपवर्ती-सुदूरवर्ती क्षेत्रों के श्री संघों व श्रद्धालुओं का निरन्तर आवागमन बना हुआ है। अनेक श्रद्धालु परिवारों ने गुरुचरण सेवा में चातुर्मासिक सेवा-लाभ के वर्षों पुराने आदर्श को जीवन्त बनाए रखा है। जोधपुर संघ की आत्मीयता-अपनत्व के साथ अतिथि-सेवा, आवास-भोजनादि व्यवस्थाएँ सुन्दर हैं।

दिनाँक 01 सितम्बर 2011 तक सम्पन्न मासखमण इस प्रकार हैं- श्रीमती शशिकला इन्दरचन्द जी गाँधी-35, सुश्री प्रियंका नवरतनजी चौधरी-31, श्री मानेन्द्र जी (मन्त्री, स्थानीय संघ) सुपुत्र स्व. श्री रिखबचन्द जी ओस्तवाल-30, श्री मंगल जी सुपुत्र स्व. श्री जुगराज जी चौपड़ा-31, श्रीमती संगीता मंगल जी चौपड़ा-31, श्रीमती मुन्नीदेवी नवरतन जी बाफना-30, श्री महेन्द्र हरकराज जी सुराणा- 30, श्रीमती संतोष बहादुरमल जी डोसी-30, श्रीमती सूरजकंवर मिश्रीमल जी पारख- 30, श्रीमती प्रेमलता दिलीप जी मेहता-30, श्रीमती रेखा सुरेश जी कांकरिया- 31, श्रीमती मंजू धनरूपचन्द जी मेहता-31, श्रीमती किरण दुलीचन्द जी लुणावत-30, श्रीमती संगीता माणकचन्द जी कोचर मेहता-31, श्री महेशजी सुपुत्र स्व. श्री विजयमल जी बुबकिया-32, श्री अरुण दशरथमल जी भण्डारी, अहमदाबाद-33 , श्रीमती रेणुका दिलीप जी चौपडा (मासखमणोपरान्त तपस्या जारी)।

इनके अतिरिक्त साध्वीप्रमुखा, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. की शिष्या महासती निरंजना जी म.सा. ने 36 दिवसीय उपवास कर महान् पुरुषार्थ किया है। तपस्याओं में अभी कई साधक-साधिकाएँ अग्रसर हैं।

शीलव्रत के खंध अंगीकार करने वाले दम्पतियों की सूची

परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुखारविन्द से अध्यात्म-चेतना वर्ष में 424 दम्पतियों ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया था। उसके पश्चात् पौष सुदी पूर्णिमा सं. 2067 दिनांक 19 जनवरी 2011 से 27 अगस्त 2011 तक 102 दम्पतियों ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण किए हैं, जिनकी सूची इस प्रकार है-1. श्री उमरावमलजी भण्डारी-बावड़ी, 2. श्री रामविलासजी भूतड़ा-पीपाड़ शहर, 3. श्री पुखराजजी जांगीड़-पीपाड़ शहर, 4. श्री माधवलाल जी शर्मा-चौकड़ी कलां, 5. श्री नेमीचंद जी ओस्तवाल-गोटन, 6. श्री बाबूलाल जी ओस्तवाल-गोटन, 7. श्री सुगनसिंह जी रावणा राजपूत-गोटन, 8. श्री मोहनलाल जी देसरला-गोटन, 9. श्री पदमचंद जी जैन, आलनपुर वाले-जयपुर, 10. श्री शांतिलालजी कोठारी-मेड़ता सिटी (शहर), 11. श्री हेमराजजी सेठिया-मेड़ता सिटी, 12. श्री प्रकाशचंद जी मेहता-मेड़ता सिटी,13. श्री हस्तीमल जी डोसी-मेड़ता सिटी, 14. श्री मोतीलाल जी तातेड़-मेड़ता सिटी, 15. श्री ताराचन्द जी कोठारी-मेड़ता सिटी, 16. श्री गब्बू भाई इस्लाम-मेड़ता सिटी, 17. श्री विमलचन्द जी सुराणा-ब्यावर, 18. श्री शिवदयाल जी जैन-हरसाना, 19. श्री नरेशचन्द जी बौंल वाले-जयपुर, 20. श्री उदलसिंह जी चौधरी-लीली (लक्ष्मणगढ़), 21. श्री जिनेश जी

जैन-हरसाना, 22. श्री बसन्तीलाल जी जैन-हरसाना, 23. श्री ज्ञानचन्द जी जैन-हरसाना, 24. श्री प्रेमचन्द जी गौड़-निमाज, 25. श्री मोहनलाल जी प्रजापत-निमाज, 26. श्री मांगीलाल जी तिवाड़ी-निमाज, 27. श्री चन्द्रशेखर जी पाठक-निमाज, 28. श्री लालूराम जी कुमावत-बिरांठिया, 29. श्री प्रकाशचन्द जी भण्डारी-निमाज, 30. श्री विजयराज जी चंडालिया-पाटवा, 31. श्री भरतनारायण जी पण्डित-करमावास मालियान, 32. श्री कानसिंह जी ठाकुर-करमावास मालियान, 33. श्री मंगलसिंहजी राजपुरोहित-करमावास मालियान, 34. श्री इन्दरसिंह जी ठाकुर राजपूत-करमावास मालियान, 35. श्री चांदमल जी सीयाल-हीराबाग, बैंगलोर, 36. श्री केवलदास जी वैष्णव-बिंजवाडिया, 37. श्री तुलसी जी बोथरा-ब्यावर, 38. श्री शांतिलाल जी कांकरिया-बिलाड़ा, 39. श्री सुरजाराम जी सीरवी-बाला, 40. श्री मांगीलाल जी भण्डारी-रावर, 41. श्री पदमराज जी भण्डारी-मधुवन कॉलोनी, जोधपुर, 42. श्री शांतिलाल जी सिंघवी-मधुवन कॉलोनी, जोधपुर, 43. श्री पुखराज जी मेहर-श्योपुर कलां, 44. श्री शांतिचंद जी नाहर-देवगढ़ मदालिया, 45. श्री रिखबचन्द जी जैन-बजरिया, सवाईमाधोपुर, 46. श्री माणकमल जी भण्डारी-हा.बोर्ड, जोधपुर, 47. श्री महेन्द्रकुमार जी सेठिया-जोधपुर, 48. श्री माणकमल जी भंसाली-हा. बोर्ड, जोधपुर, 49. श्री बुधराज जी भंसाली-हा.बोर्ड, जोधपुर, 50. श्री गौतमचन्द जी मेहता-महावीर नगर, जोधपुर, 51. श्री प्रकाशचंद जी गुन्देचा-दाऊ की ढ़ाणी, जोधपुर, 52. श्री चन्द्रशेखर जी मुणोत-प्रतापनगर, जोधपुर, 53. श्री गणपतराज जी सिंघवी-प्रतापनगर, जोधपुर, 54. श्री गौतमकुमार जी ढ़ेलरिया-प्रतापनगर, जोधपुर, 55. श्री मनसुख लाल जी गांधी-प्रतापनगर, जोधपुर, 56. श्री धर्मचन्द जी जैन 'रजिस्ट्रार'-प्रतापनगर, जोधपुर, 57. श्री सुरेशचंद जी खींवसरा-प्रतापनगर, जोधपुर, 58. श्री प्रकाशमल जी लोढ़ा-भगत की कोठी, जोधपुर, 59. श्री महेन्द्रकुमार जी मेहता-सरदारपुरा, जोधपुर, 60. श्री श्रीपाल जी नाहर-सरदारपुरा, जोधपुर, 61. श्री सुरेशनाथ जी मोदी-सरदारपुरा, जोधपुर, 62. श्री गोविंदमल जी गांग-नेहरू पार्क, जोधपुर, 63. श्री रतनचंद जी मेहता-सरदारपुरा, जोधपुर, 64. श्री अमरचन्द जी मेहता-सरदारपुरा,जोधपुर, 65. श्री कान्तिचन्द जी बोरा-सरदारपुरा,जोधपुर, 66. श्री दलपतराज जी सिंघवी-मैसूर, 67. श्री मदनचंद जी कांकरिया-सरदारपुरा,जोधपुर, 68. श्री चंपालाल जी कवाड़-शास्त्रीनगर, जोधपुर, 69. श्री श्रीपाल जी डोसी-जोधपुर, 70. श्री माणक जी दरजी-शक्तिनगर, जोधपुर, 71. श्री सोहनलाल जी कांकरिया-सरदारपुरा, जोधपुर, 72. श्री प्रसन्नचंद जी फोफलिया-पावटा,जोधपुर, 73. श्री मीठालाल जी कुंभट-लक्ष्मीनगर, जोधपुर, 74. श्री नरपतमल जी लोढ़ा-पावटा, जोधपुर, 75. श्री दलपतचंद जी डागा-अजीत कॉलोनी,जोधपुर, 76. श्री सोहनलाल जी बांठिया-अजीत कॉलोनी, जोधपुर, 77.

श्री बाबूलाल जी बांठिया-अजीत कॉलोनी, जोधपुर, 78. श्री प्रकाशलाल जी जैन-एयरफोर्स रोड़, जोधपुर, 79. श्री बुधमल जी ललवाणी-डागा बाजार, जोधपुर, 80. श्री रमेश जी भण्डारी-सिंहपोल, जोधपुर, 81. श्री पुखराज जी बोरा-महिलाबाग, जोधपुर, 82. श्री सायरचंद जी पारख-शांतिपुरा, जोधपुर, 83. श्री देवराज जी बोरा-महिलाबाग, जोधपुर, 84. श्री शांतिलाल जी चौपड़ा-पब्लिक पार्क के पीछे, जोधपुर, 85. श्री भंवरलाल जी बैताला-साहूकार पेट, चेन्नई, 86. श्री मनोहरलाल जी रांका-पब्लिक पार्क के पीछे, जोधपुर, 87. श्री पुनवानचन्द जी ओस्तवाल-पावटा, जोधपुर, 88. श्री सुमतिचंद जी कोठारी-जयपुर, 89. श्री लूणकरण जी कांकरिया-अजीत कॉलोनी-जोधपुर, 90. श्री सागरमल जी चोरडिया-साहूकार पेट, चेन्नई, 91. श्री सम्पतमल जी चोरडिया-साहूकार पेट, चेन्नई, 92. श्री हीराचंद जी कांकरिया-शिप हाउस, जोधपुर, 93. श्री प्रेमचन्द जी कुंभट-थाना, 94. श्री गोविन्दराम जी सेवक-महामंदिर, जोधपुर, 95. श्री प्रसन्नचंद जी हुण्डीवाल-पावटा, जोधपुर, 96. श्री सुरेश जी गांग-पावटा, जोधपुर, 97. श्री हरकचंद जी सदावत-पावटा, जोधपुर, 98. श्री सुरेन्द्रनाथ जी मोदी-सरदारपुरा, जोधपुर, 99. श्री प्रमोदकुमार जी संचेती-जोधपुर, 100. श्री अरविन्दकुमार जी जीरावला-प्रतापनगर, जोधपुर, 101. श्री शांतिलाल जी लोढ़ा-राई का बाग, जोधपुर, 102. श्री भंवरसिंह जी राजपुरोहित-चावण्डिया।

उपाध्यायप्रवर के सान्निध्य में धर्माराधन की निरन्तरता

उपाध्यायप्रवर पं.रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 5 एवं व्याख्यात्री महासती श्री सुमतिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 4 के पावन सान्निध्य में सामायिक-स्वाध्याय भवन में ज्ञानाराधन, तपाराधन एवं धर्माराधन की निरन्तरता बनी हुई है। यहाँ प्रवचन-स्थल में पूरा श्वेताम्बर समाज एवं अजैन बन्धु भी प्रवचन-श्रवण में पूर्ण उत्साह से उपस्थित होते हैं। अतः उपस्थिति बहुत अच्छी रहती है। दिन में 2 से 3 बजे तक शास्त्र-वाचन एवं 3 से 4 बजे तक धार्मिक पाठशाला चलती है। सायंकाल प्रतिक्रमण में स्थानक भरा रहता है।

प्रत्येक रविवार को सामूहिक एकाशन एवं दयाव्रत का आयोजन रहता है। दोपहर में रविवार को बाल-संस्कार शिविर आयोजित होता है, जिसमें लगभग 100 बच्चे लाभ ले रहे हैं। हर गुरुवार को श्रद्धेय श्री लोकचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में श्राविकाएँ ज्ञान-ध्यान सीख रही हैं। महासती श्री सुभद्रा जी के अठाई तप सम्पन्न हुआ है। श्री गुलाबचन्द जी छल्लाणी ने आजीवन शीलव्रत

अंगीकार किया है। **23 युवा-दम्पतियों ने चार माह शीलव्रत पालन का नियम लिया है।** श्रीमती शकुन्तला जी रांका, सैलाना ने एक सिद्धितप की आराधना की है। पर्युषण पर्व में 2 पंचरंगी एवं 12, 11, 9, 8, 7 एवं तेले की अनेक तपस्याएँ हुई हैं। तेले की तपस्या एवं उपवास की लड़ी निरन्तर चल रही है।

निकट एवं दूरवर्ती ग्राम-नगरों से श्रावक-श्राविकाओं का आगमन बना हुआ है। नागौरवासी अतिथि-सेवा का अच्छा लाभ ले रहे हैं।

साध्वी-मण्डल के सान्निध्य में धर्माराधना

मसूदा- सेवाभावी महासती श्री सन्तोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में तपाराधन एवं ज्ञानाराधन में श्रावक-श्राविका उत्साहपूर्वक भाग ले रहे हैं। प्रातः प्रार्थना में 125 की उपस्थिति एवं प्रवचन में 150 की उपस्थिति हमेशा रहती है। तपस्या का ठाट लगा हुआ है। श्रीमती मनभर बाई रांका एवं श्रीमती बीनाबाई बुरड़ ने 11 उपवास किए हैं। 9,8,5 की तपस्याएँ अनेक बहनों ने की है। दर्शनार्थी श्रावक-श्राविकाओं का भी आगमन होता रहता है।

गंगापुरसिटी- परमपूज्य महासती श्री के सान्निध्य में स्थानक (महावीर भवन) में प्रतिदिन प्रार्थना, प्रवचन, शास्त्र-वाचन, प्रतिक्रमण आदि में जैन-जैनेतर भाई बहिनों की उपस्थिति प्रमोदजन्य है। प्रत्येक रविवार को स्थानक में दया का कार्यक्रम रखा जाता है तथा प्रत्येक रविवार को अति रोचक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें समाज के सभी युवक मण्डल, बालिका मण्डल, श्रावक व श्राविका मण्डल के सदस्यों की उपस्थिति व उत्साह देखते ही बनता है।

श्रद्धेय महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. ने सर्वप्रथम आठ दिन का तप (अठाई) करके समाज के सभी श्रावक-श्राविकाओं को अधिक से अधिक तपस्या करने की प्रेरणा दी, जिसमें प्रेरित होकर श्रावक-श्राविकाओं ने चातुर्मास के प्रारम्भ से ही अठाई, उपवास, आयंबिल एवं एकासना की कड़िया प्रारम्भ की जो निरन्तर चल रही हैं साथ ही बेला, तेला, चार, पाँच, नौ एवं ग्यारह दिन का उपवास भी श्रावक-श्राविकाओं के द्वारा किये जा रहे हैं। एकासना के दो मासखमण भी चल रहे हैं।

महासती मण्डल की प्रेरणा से गंगापुर के निम्न श्रावक-श्राविकाओं द्वारा आजीवन शीलव्रत धारण किया गया है- 1. श्रीमती एवं श्री ज्ञानचन्द जी

जैन, 2. श्रीमती एवं श्री विनयकुमार जी जैन, 3. श्रीमती एवं श्री पदमचन्द जी जैन, 4. श्रीमती एवं श्री तेजपाल जी जैन, 5. श्रीमती एवं श्री जगदीशचन्द जी जैन, 6. श्रीमती एवं श्री मनोहरलाल जी जैन, 7. श्री महावीर प्रसाद जी जैन।

वैशाली नगर, अजमेर- व्याख्यात्री महासती श्री रुचिता जी म.सा. आदि ठाणा 3 के सान्निध्य में तपस्या एवं धर्माराधन का ठाट लगा हुआ है। प्रतिदिन एकासन, आयम्बिल एवं तेले की लड़ी चल रही है। प्रतिदिन 2 घण्टे नवकारमंत्र का जाप होता है। दोपहर में भाई-बहिन शिक्षण के लिए अच्छी संख्या में आते हैं। एकासन के चार मासखमण हुए एवं दो एकान्तर चल रहे हैं। महासती कृपाश्री जी ने अठाई तप पूर्ण किया है। श्रीमती राजकुमारी एवं श्री सांवतसिंह जी मुणोत तथा एक युगल ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया है। श्रीमती प्रकाशदेवी जी लोढ़ा धर्मपत्नी श्री हस्तीमल जी लोढ़ा ने 31 की तपस्या कर मासखमण पूर्ण किया है। छोटी-बड़ी अनेक तपस्याएँ चल रही हैं। प्रत्येक रविवार को धार्मिक प्रतियोगिता आयोजित होती है।

सूर्यनगरी में वीतराग-ध्यान शिविर

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के संयुक्त तत्त्वावधान में वीतराग ध्यान साधना केन्द्र द्वारा 08 से 15 सितम्बर, 2011 तक वीतराग ध्यान साधना शिविर का आयोजन सूर्यनगरी-जोधपुर में वीतराग साधना के आचार्य श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा के कुशल नेतृत्व में आयोजित किया जा रहा है। श्री संजय अग्रवाल ध्यान साधना करायेंगे।

-शान्ता मोदी, संयोजक (93144-70972)

जैनागम स्तोक वारिधि पाठ्यक्रम (थोकड़े) की परीक्षा 15 जनवरी को

जैनागम स्तोक वारिधि पाठ्यक्रम (पंचवर्षीय) के प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम की परीक्षा 15 जनवरी, 2012 रविवार को आयोजित की जायेगी, जिसमें प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में निम्नांकित 10 थोकड़े रहेंगे-

1. **प्रथम प्रश्न-पत्र में (पाँच)-** 1. 25 बोल, 2. 67 बोल, 3. सुपच्चक्खाण-दुपच्चक्खाण, 4. संज्ञा, 5. सवणेनाणे का थोकड़ा।
2. **द्वितीय प्रश्न-पत्र में (पाँच)-** 1. कर्म प्रकृति, 2. गति-आगति, 3. चौदह गुणस्थान का बासठिया, 4. रूपी-अरूपी, 5. उपयोग का थोकड़ा।

द्वितीय राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी 5-6 नवम्बर को

इस वर्ष सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के तत्त्वावधान में परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के पावन सान्निध्य में जोधपुर (राज.) में 5-6 नवम्बर, 2011 को **'अध्यात्म और भ्रष्टाचार'** (Spirituality and Corruption) विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। संगोष्ठी में विद्वानों, प्रशासनिक अधिकारियों एवं न्यायविदों के पधारने की सम्भावना है।

संक्षिप्त-समाचार

जयपुर- राजस्थान राज्य में बिना उचित लाइसेंस प्राप्त किये अवैध मांस की दुकानें खुलती जा रही हैं तथा मांस व्यापारियों द्वारा 16 निषेध अगता दिवसों पर भी मांस का व्यापार किया जा रहा है। मांस विक्रेता खुले में दुकानों के बाहर मांस व पशु लटकाकर रखते हैं जो कि कानून का खुला उल्लंघन है। राष्ट्रीय शाकाहार समिति के श्री कमल लोचन ने कहा कि सभी अहिंसा व जीव कल्याण कार्यकर्ताओं को अवैध दुकानों को बन्द करने के आन्दोलन से जोड़ा जायेगा तथा मुख्यमंत्री, राज्यपाल, महापौर, जिला क्लेक्टर व पुलिस कमिश्नर को ज्ञापन दिया जायेगा ताकि मांस विक्रेताओं से पशुवध के लिये बने कानूनों की पालना सुनिश्चित की जा सके।

बैंगलुरु- आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की दीक्षा-जयन्ती एवं गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की पुण्यतिथि को बैंगलुरु के तीनों घटकों द्वारा तीन-तीन सामूहिक सामायिक की आराधना के रूप में, श्रमण संघीय उपाध्याय श्री प्रवीणऋषिजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में मनाया गया। श्राविका मण्डल द्वारा मई माह में 75 जैन छात्रों को स्कूल एवं कॉलेज शुल्क प्रदान किया गया।

चेन्नई में 23 सितम्बर से श्राविका-शिविर

अ.भा.श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा श्राविकाओं में आध्यात्मिक-नैतिक व ज्ञानार्जन के उद्देश्य से चेन्नई महानगर में दिनांक 23,24 व 25 सितम्बर, 2011 को त्रिदिवसीय शिविर का आयोजन किया जा रहा है। शिविर में भाग लेने वाले शिविरार्थियों को आने-जाने का मार्ग व्यय दिया जायेगा। चेन्नई पधारने पर व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा.

आदि ठाणा 11 के दर्शन-वन्दन व प्रवचन-श्रवण का भी लाभ प्राप्त होगा। सभी बहिनों से निवेदन है कि श्राविका मण्डल के कार्यक्रम में लाल चून्दड़ी की साड़ी पहनकर भाग लें। **शिविर स्थल व सम्पर्क सूत्र-** मरलेचा गार्डन, नं. 48, हन्टर रोड़, गोपाल मेन्शन स्ट्रीट, अयप्पा ग्राउण्ड के पास, शूले, चेन्नई, फोन- 044-32426373/ 98410-89858/ 98410-98930

-शशि टाटिया-महासचिव (090011-25751)

बधाई/चुनाव

नई दिल्ली- युवा वैज्ञानिक डॉ. महावीर जी गोलेछा (मूल निवासी बालोतरा)

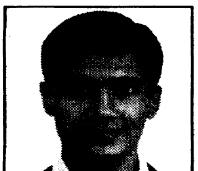

को मस्तिष्क्रीय रोग के निवारण हेतु औषधि अन्वेषण के लिए अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर निरन्तर पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हो रहे हैं। अभी सातवां अन्तरराष्ट्रीय पुरस्कार 29 वें अन्तरराष्ट्रीय एपिलेप्सी कांग्रेस रोम (इटली) में दिया जाना है। यहाँ वे चेयरपर्सन के रूप में भी सम्बोधित करेंगे।

जयपुर- डॉ. अरिहन्त जैन सुपुत्र श्रीमती शान्तिदेवी एवं श्री धर्मचन्द जी जैन

(पाटोली वाले) का सेठ जी.एस. मेडिकल कॉलेज एवं के.ई.एम. हॉस्पिटल, मुम्बई में M.D. (Pediatrics) में प्रवेश हुआ है। आपने MBBS ग्रान्ट मेडिकल कॉलेज, मुम्बई से टाटा ट्रस्ट से छात्रवृत्ति प्राप्त करते हुए पूर्ण की। संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली द्वारा आयोजित चिकित्सा अधिकारियों की परीक्षा-2010 में आपने मेरिट में द्वितीय स्थान प्राप्त कर गौरव अर्जित किया है।

जोधपुर- सुश्री मनीला गाँधी सुपुत्री श्रीमती ललिता-गौतमचन्द जी गाँधी एवं

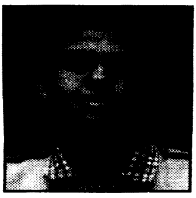

सुपौत्री श्री पदमचन्द जी गाँधी ने सीनियर सैकण्डरी वाणिज्य वर्ग की परीक्षा में राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की वरीयता सूची में सम्पूर्ण राजस्थान में 26 वां तथा जोधपुर जिले की वरीयता सूची में आठवां स्थान प्राप्त किया है।

दिल्ली- श्री आलोक जैन सुपुत्र श्री आनन्द देव ग्वालियर क्षेत्र में कर्नल बने। आपने इंजीनिररिंग करने के बाद सेना में प्रवेश लिया। कश्मीर में आतंकवादियों से लड़ने में तथा कारगिल युद्ध में आपने वीरतापूर्वक लड़ाई लड़ी फलस्वरूप कई वीर पुरस्कार प्राप्त हुए।

अजमेर- श्री चन्द्रप्रकाश जी गाँधी सुपुत्र श्री नेमीचन्द जी गाँधी को उत्कृष्ट सेवा पुरस्कार 'विद्युत वितरण निगम लिमिटेड' के प्रबन्ध निदेशक द्वारा 15 अगस्त 2011 के कार्यक्रम में प्रदान किया गया।

जोधपुर- प्रोफेसर (डॉ.) सुमनेश नाथ मोदी को जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर के व्यावसायिक वित्त एवं अर्थशास्त्र विभाग के विभागाध्यक्ष (अध्यक्ष) पद पर 3 वर्षों के लिए नियुक्त किया गया है। डॉ. मोदी के 25 से अधिक शोध-पत्र राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं तथा 50 से अधिक संगोष्ठियों में भाग लिया है।

सी.ए. उत्तीर्ण छात्र/छात्राएँ

1. सुश्री गरिमा सुपुत्री श्रीमती शशी-अजीत जी कुम्भट-मुम्बई, एवं सुपौत्री श्री किशनमल जी कुम्भट, जोधपुर।
2. श्री राजकुमार कांकरिया सुपुत्र श्रीमती सीमादेवी-महावीर जी कांकरिया-भोपालगढ़ (जोधपुर) द्वारा सी.ए. एवं सी.एस. परीक्षा उत्तीर्ण।
3. श्री सुनील चौधरी सुपुत्र श्रीमती प्रमिला-निहालचन्द जी चौधरी एवं सुपौत्र श्रीमती शांतिदेवी-कंवरलाल जी चौधरी, अजमेर।

श्रद्धाञ्जलि

अजमेर- श्री रतनलाल जी रांका का असामयिक स्वर्गवास 22 अगस्त, 2011 को हो गया। आप सरल स्वभावी, शान्तदान्त होने के साथ छोटे-बड़े सभी के प्रिय थे। आप प्रतिदिन तप-त्याग करते रहते थे एवं 14-15 सामायिक करते थे। आपका सम्पूर्ण परिवार आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा., आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि सभी सन्त सतियों के प्रति तन-मन-धन से श्रद्धापूर्वक समर्पित है। गुरु भगवन्तों की प्रेरणा से आपके

परिवार में गत 40 वर्षों से रविवार को आयम्बिल चल रहा है। गत पाँच वर्षों से सपरिवार सवेरे 7-8 बजे तक नवकार मंत्र का जाप होता रहा है। आपके पुत्ररत्न श्री पारसमल जी रांका गत 14 वर्षों से श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, अजमेर के अध्यक्ष पद की शोभा बढ़ा रहे हैं। *-नेमीचन्द कटारिया*

खेरली- सामाजसेवी सुश्रावक श्री भगवान सहाय जी जैन (दांतिया वाले) का

दिनाँक 20 जुलाई, 2011 को 82 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप कई वर्षों तक सरपंच रहे। आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं वर्तमान आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर, सन्त सतियों के प्रति आपकी दृढ़ आस्था रही। आप ''आचार्य हस्ती धर्मार्थ औषधालय'' के अध्यक्ष एवं ट्रस्टी थे।

जोधपुर- श्री संजय जी कांकरिया आत्मज श्री सुमेरमल जी कांकरिया का 9

जुलाई 2011 को 45 वर्ष की वय में मुम्बई में असामयिक स्वर्गगमन हो गया। धर्मनिष्ठ परिवार में जन्मे एवं पले-बढ़े श्री कांकरिया जी रत्नसंघ के पूर्व मारवाड़ क्षेत्रीय प्रधान श्रावकरत्न श्री नरपतराज जी चौपड़ा के दामाद थे।

इन्दौर- श्री पद्मावती पोरवाल जैन संघ के संस्थापक, धर्मप्रिय सुश्रावक श्री

फूलचंद जी जैन (भूरी पहाडी वाले) का 29 जुलाई, 2011 को देवलोकगमन हो गया। उनका समग्र जीवन सेवा और परमार्थ के पवित्र उद्देश्य के प्रति समर्पित रहा। सादा जीवन उच्च विचार के वे मूर्तिमंत प्रतीक थे। अपनी सक्रियता व कार्यकुशलता से आप श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ ट्रस्ट महावीर भवन के उपाध्यक्ष पद पर दीर्घकाल तक रहते हुए धर्म और समाज सेवा में सदैव अग्रणी बने रहे। श्रद्धेय साधु-साध्वीगणों की सेवा में आप हमेशा तत्पर रहते थे। समाज का प्रत्येक व्यक्ति आपको ''काली टोपी वाले काकाजी'' के प्रिय संबोधन से पुकारता था। संघ और समाज की सेवा आपका जीवन धर्म था। उनकी स्मृति में परिवार की ओर से एक लाख इक्यावन हजार रुपये की धनराशि धार्मिक व पारमार्थिक कार्यों में प्रदान करने का संकल्प किया गया है।

जयपुर- सन्तसेवी, श्रद्धानिष्ठ समाजसेवी सुश्रावक श्रीमान् सरदारमल जी सुपुत्र स्व. श्री सुकनमल जी भण्डारी का स्वर्गवास 20 अगस्त, 2011 को हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण था। धर्मनिष्ठता, कर्तव्य

परायणता, कर्मठ सेवाभावना, स्वधर्मि वात्सल्य, विनम्रता आदि अनेक गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णतः समर्पित थे। आपके जीवन पर आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. व आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., पण्डित रत्न उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. का विशेष प्रभाव रहा। आपने कुछ वर्ष पूर्व अपनी शादी की हीरक जयन्ती मनायी थी। आप एवं आपकी धर्मसहायिका श्रीमती उमरावकँवर जी भण्डारी द्वारा प्रदान किये गये सुसंस्कार के कारण पूरा परिवार धर्मपरायण बना हुआ है।

इन्दौर- सुश्रावक श्री लड्डूलालजी जैन (श्यामपुरा वाले) का 95 वर्ष की वय में 04 अगस्त, 2011 को स्वर्गवास हो गया। आप सरल-स्वभावी, मिलनसार एवं धार्मिक प्रवृत्ति के श्रावक थे। आप हमेशा स्वाध्याय एवं साधु-साध्वियों की सेवा में रुचि रखते थे।

भरतपुर- वरिष्ठ स्वाध्यायी, आदर्श श्रावक रत्न श्री मुरारीलाल जी जैन का 78 वर्ष की वय में स्वर्गवास हो गया। आप दृढ़ क्रियावान एवं आगमों के अध्येता थे। 55 वर्ष की वय में परम विदुषी सौभाग्यवती म.सा. से शीलव्रत के प्रत्याख्यान कर साधुमय दिनचर्या पालन कर श्रावक-श्राविकाओं को ज्ञान, ध्यान, प्रतिक्रमण, सामायिक आदि का ज्ञान दिया करते थे। आप संघ के 10 वर्ष तक अध्यक्ष पद पर रहे। मुम्बई, जलगांव, अहमदाबाद में आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के चातुर्मास काल में आठ दिन गुरुदेव के सान्निध्य में रहकर तपाराधन किया।

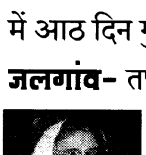

जलगांव- तपसाधिका श्रीमती ताराबाई धर्मपत्नी श्री भंवरलाल जी लुंकड़ का 85 वर्ष की आयु में 27 जुलाई 2011 को स्वर्गवास हो गया। शीलव्रत अंगीकार करने वाली सुश्राविका ने कम वय में पति की मृत्यूपरान्त प्रतिकूल परिस्थिति में भी परिवार को आगे बढ़ाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वे अनुशासनप्रिय, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं सूझबुझ की धनी थीं। गुरु हस्ती से प्रेरित होकर आपने पूरे परिवार को सुसंस्कारित किया।

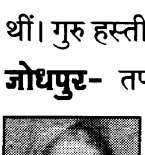

जोधपुर- तपसाधिका, सुश्राविका श्रीमती पुष्पा जी लोढ़ा धर्मपत्नी स्व. श्री पारसचन्द जी लोढ़ा का 29 अगस्त 2011 को चार उपवास के पारणे के बाद देहावसान हो गया। आप नित्य सामायिक, प्रतिक्रमण करती थीं। आपने अनेक बड़ी तपस्याएँ भी कीं। आपके पुत्र शान्तिचन्द जी लोढ़ा युवक परिषद् के सक्रिय कार्यकर्ता हैं तथा वर्तमान में अ.भा.श्री जैन रत्न युवक परिषद् के मारवाड़ शाखा के क्षेत्रीय प्रधान हैं।

बालोतरा- धर्माराधिका सुश्राविका श्रीमती वरजूदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री चम्पालाल जी लुंकड़ का 25 जुलाई 2011 को अवसान हो गया। आपका जीवन सरल, सहज एवं कर्त्तव्यनिष्ठ था। आप सामाजिक कार्यों से जुड़ी रहती थीं। आपने आचार्य श्री एवं उपाध्याय श्री के बालोतरा चातुर्मास में खूब धर्माराधना की।

बालोतरा- अनन्य गुरुभक्त, संघहितैषी सुश्रावक श्री भंवरलाल जी सेठिया का 03. अगस्त, 2011 को देहावसान हो गया। आपकी संघ के प्रति अटूट निष्ठा थी। आचार्यप्रवर एवं उपाध्यायप्रवर के बालोतरा पधारने पर आपने एवं आपके परिवार वालों ने धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ लिया। पारिवारिक सुसंस्कारों से संस्कारित धार्मिक संस्कारों के प्रति जागरुक सुश्रावक का जीवन धार्मिक क्रिया-कलापों से युक्त था। सामाजिक कार्यों में भी आपका योगदान सराहनीय था।

आगोलाई- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री जवरीलाल जी गोगड़ सुपुत्र श्री हेमराज जी गोगड़ का 20 जून 2011 को देहावसान हो गया। आप नियम से प्रतिवर्ष आचार्य श्री के दर्शनार्थ जाते थे।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, *जिनवाणी* तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

छोड़ दे माँ! तुच्छ विचार

श्रीमती कमला सुराणा

लक्ष्मी हूँ मैं, सरस्वती हूँ मैं
शक्ति हूँ मैं, इन्दिरा गांधी हूँ मैं
दिग्गजों की माँ हूँ मैं, पूजी जाती हूँ मैं।
विडम्बना है मेरी, एक ओर पूजा, दूसरी ओर घात
संसार में आने से पहले मार दी जाती हूँ मैं।
क्या कहूँ! किसे कहूँ? बोलने का अवसर दिया नहीं मुझे।
गर्भ में नष्ट किया जाता मुझे, क्यों न आने दिया जाता मुझे।
सुन माँ! मैं भी माँ बनना चाहती हूँ।
सृष्टि रचानी है, भ्रष्टाचार मिटाना है
माँ का गौरव बढ़ाना है।
तो छोड़ दे माँ तुच्छ विचार
जन्म दे माँ मुझे, निर्भय हो जन्म दे,
नाम तेरा चोटी पर रख दूँगी।

-ई-123, नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

13169 श्री समरथ जी भण्डारी, 805, जागृति नगर, न्यू लोहा मण्डी, इन्दौर (मध्यप्रदेश)
13170 श्रीमती मंजुलादेवी जी लुणावत, उदय मार्ग, तिलक नगर, जयपुर (राजस्थान)
13171 श्री जिनेन्द्रसिंह जी बाफणा, रानीसती मंदिर के पास, सूरत (गुजरात)
13172 श्री गौतमजी सेठिया,खाराकुँआ, गुजराती स्कूल के पास, औरंगाबाद (महा.)
13173 Shri Rajendra ji Nagouri, Vashi, Navi Mumbai (M.H.)
13174 श्री नरपतराज जी नागौरी, निवारू लिंक रोड़, कालवाड़ रोड़, जयपुर (राज.)
13175 श्री दीपचन्द जी संचेती, पुराने पेट्रोलपम्प वाली गली, फालना, पाली (राज.)
13176 डॉ. रोहित जी बोथरा, भड़गाँव रोड़, पाचोरा, जिला–जलगाँव (महाराष्ट्र)
13177 श्री अंशजी कोठारी, शान्तिनगर,दुर्गापुरा रेलवे स्टेशन के पीछें,जयपुर (राज.)
13178 श्री शंकरलाल जी ललवाणी, सरस्वती नगर, बासनी, जोधपुर (राजस्थान)
13179 Shri Pankaj Kumar ji Jain, Vallam, Thanjavur (Tamilnadu)
13180 श्री मदनलाल जी सुराणा, पारोला रोड़, महादेव मंदिर के पास, धुले (महा.)
13181 डॉ. अतुल जी भलगट, मेन रोड़, शिरूर (घोड़ नदी), पुणे (महाराष्ट्र)
13182 श्री राजेश जी सुराणा, स्वर्णकार भवन के पास, गली नं. 5, धुलिया (महा.)
13183 श्री नीरज जी संचेती, संचेती मार्केट, बापू बाजार, जयपुर (राजस्थान)

जिनवाणी हेतु साभार-प्राप्त

11111/- श्री पारसमल जी, माणकचन्द जी, धर्मीचन्द जी एवं समस्त रांका परिवार, अजमेर, पूज्य पिताश्री श्री रतनलाल जी रांका का दिनांक 22 अगस्त, 2011 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

5100/- शाह सागरमल जी, महावीरचन्द जी, राजेश जी छाजेड़, चेन्नई, साध्वी प्रमुखा मैनासुन्दरी जी म.सा. की सुशिष्या निरंजना जी म.सा. के 36 की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

2100/- श्री नितिन जी एवं नितिश जी सुपुत्र श्री पारसमल जी डागा, जोधपुर, नितिन जी के ग्यारह उपवास एवं नितिश जी के तीन तेले के उपलक्ष्य में भेंट।

2100/- श्री अशोककुमार जी आशीषकुमार जी सुराणा, ब्यावर, स्व. श्री ज्ञानचन्द जी सुराणा की तेरहवीं पुण्यतिथि पर भेंट।

1500/- श्री चन्द्रप्रकाश जी गाँधी, अजमेर, 15 अगस्त 2011 को उत्कृष्ट सेवा हेतु मेरिट सर्टिफिकेट व रुपये 1100/- का केश अवार्ड प्राप्त होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1500/- श्री चंचलमल जी–वीनाक्षी जी बच्छावत, कोलकाता, पुत्रवधू श्रीमती रीचा जी धर्मपत्नी श्री मोहित जी के तेले की तपस्या एवं मोहित जी के बेले की तपस्या के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री इन्दरचन्द जी, योगेश कुमार जी गाँधी, जोधपुर, आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. प्रभृति

सन्त-सतीवृन्द के जोधपुर वर्षावास के पावन सान्निध्य में वीरमाता शशिकला जी धर्मसहायिका श्री इन्दरचन्द जी गाँधी द्वारा 35 दिवसीय उग्र तपस्या की साधना के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री जवाहरलाल जी बाघमार (कोसाणा वाले), चेन्नई, पूज्य आचार्य भगवन्त के जोधपुर, उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के नागौर, शासन प्रभाविका साध्वीप्रमुखा महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. के जोधपुर चातुर्मास स्थलों पर जाकर दर्शन-वन्दना प्राप्त करने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री कँवरलाल जी, भागचन्द जी चौधरी, अजमेर, श्री सुनील जी चौधरी सुपौत्र स्व. श्रीमती शांतिदेवी जी, कँवरलाल जी चौधरी, सुपुत्र श्रीमती प्रमिला-निहालचन्द जी चौधरी, दौहित्रे के प्रथम प्रयास में सी.ए. की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री दिलीप जी भंडारी, पीपाड़वाले हाल मुकाम रत्नागिरी, अपने पूज्य पिताजी स्व. श्री सुगनचन्द जी भंडारी की पुण्य स्मृति में भेंट।

1000/- श्री माणकमल जी, मोहन जी, मनोज जी भण्डारी, जोधपुर, हाल मुकाम सूरत, अपने पिताजी स्व. श्री पारसमल जी भण्डारी की पुण्य तिथि पर एवं श्री प्रकाश मुनि जी म.सा. की पुण्य तिथि पर भेंट।

1000/- श्री प्रकाशचन्द जी राजेशकुमार जी जैन, खेडला, बड़ागांव, साध्वी प्रमुखा मैना सुन्दरी जी म.सा. की सुशिष्या निरंजना जी म.सा. के 36 की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

501/- श्रीमती शांतिदेवी जी, धर्मचन्द जी जैन (पाटोली वाले), जयपुर, सुपुत्र डॉ. अरिहन्त जी जैन का संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली द्वारा आयोजित चिकित्सा अधिकारियों की परीक्षा में मेरिट प्राप्त करने की खुशी में सप्रेम भेंट।

501/- श्री सुरेशमल जी, सौरभमल जी गांग, जोधपुर, स्व. श्री सोहनमल जी की पुण्य स्मृति में भेंट।

501/- श्री सुरेशमल जी गांग, जोधपुर, सपरिवार आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर के दर्शन-लाभ लेने के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्रीमती पुष्पा जी धर्मपत्नी श्री मदनचन्द जी कांकरिया, जोधपुर, महासती निरंजना जी म.सा. के तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री आनन्द जी, धनपत जी, सुरेश जी, यश जी, सुमित जी भंसाली, मुम्बई, दादाजी स्वर्गीय श्री कुन्दनमल जी भंसाली की पुण्य स्मृति श्रावण शुक्ला चतुर्दशी की पावन स्मृति में सप्रेम भेंट।

500/- श्री लडडूलालजी, बाबूलालजी, लल्लूलालजी, ताराचन्दजी जैन, इन्दौर, सुश्रावक श्री फूलचन्द जी जैन का दिनांक 29 जुलाई 2011 को देवलोक गमन हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

500/- श्री मनोजकुमार जी, बस्तीमल जी लुणिया, शेरगढ़, वीरमाता बहिन श्रीमती शशिकला जी धर्मसहायिका श्री इन्दरचन्द जी गाँधी द्वारा आचार्य भगवन्त के जोधपुर चातुर्मास में 35 दिवसीय तपस्या की साधना पर तथा अनुमोदना में आजीवन रात्रि भोजन त्याग के प्रत्याख्यान पूज्य आचार्यश्री के मुखारविन्द से

ग्रहण करने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री निर्मल कुमार जी, मनोहर जी बम्ब, बैंगलोर, चि. हितैष जी सौ.कां. मयूरी जी की पूज्य आचार्य भगवन्त के मुखारविन्द से गुरु आम्नाय व दर्शन लाभ प्राप्त करने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री पन्नालाल जी, अशोक कुमार जी कोठारी, वेलचरी-चेन्नई, जोधपुर में पूज्य आचार्यश्री के दर्शनलाभ एवं पौत्र की सगाई के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्रीमती उजास कंवर जी डाकलिया धर्मपत्नी स्व. श्री शांतिलाल जी डाकलिया, अपनी पूज्य माताजी श्रीमती पारसकंवर जी मेहता के स्वर्गवास होने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

500/- श्री रामस्वरूप जी, त्रिलोकचन्द जी, शान्तिलाल जी, ओमप्रकाश जी, घनश्याम जी जैन श्यामपुरा वाले, अपने पूज्य पिताजी सुश्रावक श्री लडडूलाल जी जैन (चौधरी) श्यामपुरा वाले का स्वर्गवास दिनांक 04 अगस्त, 2011 को होने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

500/- श्री लक्ष्मीरूपचंद जी भण्डारी, जोधपुर, अपनी सुपुत्री श्रद्धा भण्डारी के सी.ए. बनने के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री मदनमल जी, सुशीला जी, सोनु जी खींवसरा, जोधपुर, साध्वी प्रमुखा मैना सुन्दरी जी म.सा. की सुशिष्या निरंजना जी म.सा. के 36 की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री मोहनलाल जी सोहनलाल जी जैन, चौथ का बरवाडा, चि. प्रमोद जी सुपुत्र श्री सोहनलाल जी जैन का शुभविवाह सौ.कां. सीमा जी सुपुत्री श्री धर्मराज जी जैन, सवाईमाधोपुर के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार प्राप्त

8000/- श्री राजेन्द्र जी पटवा, जयपुर, स्वाध्याय संघ में प्रिण्टर खरीदने हेतु भेंट।

आगामी पर्व

आश्विन कृष्णा 8	बुधवार	21.09.2011	अष्टमी
आश्विन कृष्णा 14	सोमवार	26.09.2011	चतुर्दशी, पक्खी
आश्विन शुक्ला 8	मंगलवार	04.10.2011	अष्टमी, आयम्बिल ओली प्रारम्भ
आश्विन शुक्ला 10	गुरुवार	06.10.2011	आचार्य पूज्य श्री भूधर जी म.सा. की पुण्य तिथि
आश्विन शुक्ला 14	सोमवार	10.10.2011	चतुर्दशी
आश्विन शुक्ला 15	मंगलवार	11.10.2011	पक्खी
आश्विन शुक्ला द्वि 15	बुधवार	12.10.2011	आयम्बिल ओली पूर्ण
कार्तिक कृष्णा 1	गुरुवार	13.10.2011	आचार्य पूज्य श्री हमीरमल जी म.सा. की 158 वीं पुण्य तिथि
कार्तिक कृष्णा 8	गुरुवार	20.10.2011	आचार्य पूज्य श्री गुमानचन्द्र जी म.सा. की 210 वीं पुण्यतिथि

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं के त्रिदिवसीय कार्यक्रम

शुक्रवार, दि. 16 सितम्बर, 2011

अ. भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की कार्यकारिणी बैठक

समय : अपराह्न 1.30 बजे

शनिवार, दि. 17 सितम्बर, 2011

अ.भा.श्री जैन रत्न आ. संस्कार केन्द्र की कार्यकारिणी बैठक समय : प्रातः 11 बजे (पावटा स्थानक)

संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की वार्षिक साधारण सभा

समय : अपराह्न 1.30 बजे

श्राविका मण्डल का वार्षिक अधिवेशन समय : सायं 7 बजे

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् का सम्मान कार्यक्रम एवं चिन्तन बैठक समय : रात्रि 8 बजे

कार्यक्रम स्थल

सामायिक-स्वाध्याय भवन,

शक्तिनगर छठी गली, पावटा सी रोड, जोधपुर

रविवार, दि. 18 सितम्बर, 2011

सम्मान समारोह एवं गुणी अभिनन्दन कार्यक्रम

समय : अपराह्न 1.30 बजे

कार्यक्रम स्थल

जयनारायण व्यास टाऊन हॉल, हाईकोर्ट रोड, जोधपुर

मुख्य अतिथि: माननीय न्यायमूर्ति श्री राजेन्द्रमल जी लोढ़ा
न्यायाधिपति-सर्वोच्च न्यायालय, दिल्ली

विशिष्ट अतिथि: माननीय श्री कुलदीप जी रांका
आयुक्त-जयपुर नगर निगम विकास प्राधिकरण, जयपुर

अध्यक्षता: माानीय श्री सुमेरसिंह जी बोथरा
रत्नसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष

सम्पर्क-सूत्र:

पूछताछ कार्यालय: श्री सम्पतराज जी बोथरा-0291-6419979

जिनवाणी पत्रिका की सदस्यता ग्रहण करने हेतु प्रारूप

(इच्छुक पाठक जो जिनवाणी की सदस्यता ग्रहण करना चाहते हैं निम्नांकित प्रारूप में अपनी सम्पूर्ण जानकारी भरकर नीचे लिखे पते पर प्रेषित करें।)

मैं.....पुत्र/पुत्री/पत्नी श्री.....

पता.....

.....

फोन नं. :.....मो. :.....

ई-मेल.....

जिनवाणी मासिक पत्रिका की आजीवन सदस्यता ग्रहण करना चाहता हूँ। इस हेतु मैं 500/-रुपये का चैक/ड्राफ्ट संलग्न कर रहा हूँ। कृपया मुझे पत्रिका नियमित प्रेषित करावें।

स्तम्भ सदस्यता-21,000/- आजीवन विदेश में-12,500/-

संरक्षक सदस्यता- 11,000/- त्रैवार्षिक सदस्यता-120/-

हस्ताक्षर

मण्डल द्वारा प्रकाशित साहित्य की सदस्यता हेतु प्रारूप

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा प्रकाशित साहित्य की आजीवन सदस्यता के इच्छुक पाठक निम्नांकित प्रारूप में अपनी सम्पूर्ण जानकारी भरकर नीचे लिखे पते पर प्रेषित करें।)

मैं.....पुत्र/पुत्री/पत्नी श्री.....

पता.....

.....

फोन नं. :.....मो. :.....

ई-मेल.....

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा प्रकाशित साहित्य की आजीवन सदस्यता ग्रहण करना चाहता हूँ। इस हेतु मैं 4000/- नकद/चैक/ड्राफ्ट संलग्न कर रहा हूँ। कृपया मुझे साहित्य नियमित प्रेषित करावें।

हस्ताक्षर

प्रारूप भेजने का पता– विरदराज सुराणा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.), फोन नं. 0141-2575997।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राजस्थान) फोन नं. 2575997, 2571163 फैक्स नं. 0141-2570753

प्रकाशित साहित्य-सूची

क्र.	पुस्तक का नाम	दर रु.
1.	अमरता का पुजारी	15
2.	अमृत-वाक्	10
3.	अजीव पर्याय	5
4.	आवश्यक सूत्र (हिन्दी-अंग्रेजी)	10
5.	आहार संयम और रात्रि भोजन त्याग	4
6.	आचारांगसूत्र (मूल)	10
7.	आध्यात्मिक आलोक	40
8.	आध्यात्मिक पाठावली	2
9.	आनुपूर्वी	10
10.	अहिंसा निउणा दिट्ठा	40
11.	अध्यात्म की ओर*	30
12.	अन्तगडदसासूत्र	30
13.	भक्तामर स्तोत्र	10
14.	चौदह नियम	4
15.	24 ठाणा का थोकड़ा	5
16.	दशवैकालिकसूत्र	40
17.	दशवैकालिकसूत्र (हिन्दी भावार्थ)	20
18.	दीक्षा कुमारी का प्रवास	25
19.	दो बात	5
20.	दुर्गादास पदावली	5
21.	एकादश चरित्र संग्रह*	15
22.	गजेन्द्र सुक्ति सुधा*	20
23.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-1	15
24.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-2	15
25.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-3	15
26.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-4	15
27.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-5	15
28.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-6	15
29.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-7	15
30.	गजेन्द्र पद मुक्तावली	5
31.	गमा का थोकड़ा	10
32.	गुणस्थान स्वरूप	3
33.	गुरु गरिमा एवं श्रमण जीवन	100
34.	ज्ञातासूत्र की कथायें	10
35.	ज्ञान लब्धि, द्रव्येन्द्रिय का थोकड़ा	2
36.	हीरा प्रवचन पीयूष भाग-1*	15
37.	हीरा प्रवचन पीयूष भाग-2	25
38.	हीरा प्रवचन पीयूष भाग-3*	15
39.	हीरा प्रवचन पीयूष भाग-4	25
40.	जैन इतिहास के प्रसंग भाग-1 से 40	5
41.	जैन आचार्य चरितावली	15
42.	जैन स्वाध्याय सुभाषित माला*	10
43.	जैन तमिल साहित्य और तिरुकुरल	20
44.	जैन धर्म का मौलिक इतिहास-1*	225
45.	जैन धर्म का मौलिक इतिहास-2	225
46.	जैन धर्म का मौलिक इतिहास-3	225
47.	जैन धर्म का मौलिक इतिहास-4	225
48.	जैन धर्म का मौलिक इतिहास संक्षिप्त	75
49.	जैनागम	50
50.	जैन विचारधारा में शिक्षा	25
51.	जैन धर्म में ध्यान	70
52.	झलकियाँ जो इतिहास बन गईं	15
53.	जीवन निर्माण भजनावली	2
54.	जीवन अमृत की छाँव*	20
55.	जीव धड़ा	3
56.	जीव पज्जवा, काय स्थिति	5
57.	कर्म प्रकृति	2
58.	कर्मग्रन्थ	15
59.	कुलक कथायें	20
60.	कायोत्सर्ग	50
61.	लघुदण्डक	3
62.	नवतत्त्व	5
63.	निसीहज्झयणं (मूल)	10
64.	निर्ग्रन्थ भजनावली	40
65.	नमो गणि गजेन्द्राय	20
66.	पच्चीस बोल (विवेचन सार्थ)	10
67.	25 बोल (मूल)	3
68.	पाँच बात	5
69.	पथ की रुकावटें	15
70.	प्रश्नव्याकरणसूत्र भाग-1	45
71.	प्रश्नव्याकरण सूत्र भाग-2	35
72.	प्रार्थना प्रवचन	15
73.	प्रथमा पाठ्यक्रम (प्रतिक्रमणसूत्र)	5
74.	प्रतिक्रमण विशेषांक	50
75.	प्रेरक कथाएँ	20
76.	पर्युषण साधना	5
77.	पर्युषण सन्देश	20
78.	पर्युषण पर्वाराधन	15
79.	मुक्तक-मुक्ता	15
80.	मुक्ति का राही	100
81.	रत्नसंघ के धर्माचार्य*	20
82.	रत्नस्तोक मंजूषा	5
83.	67बोल उपयोग, संज्ञा और	2
84.	47 बोल, 50 बोल व 800 बोल	3
85.	समिति गुप्ति-गति आगति	2
86.	सामायिक सूत्र प्रवेशिका पाठ्यक्रम	5
87.	सप्त कुव्यसन*	5
88.	षडद्रव्य एवं विचार पंचशिका	5
89.	सिरि अन्तगडदसाओसूत्र	35
90.	सैद्धान्तिक प्रश्नोत्तरी	5
91.	शिवपुरी की सीढ़ियाँ*	15
92.	शास्त्र स्वाध्याय माला	20
93.	श्रमण आवश्यक सूत्र	10
94.	श्रावक सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र	5
95.	श्रावक सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र	10
96.	श्रावक के बारह व्रत	5
97.	श्री सामायिक सूत्र (सार्थ)	3
98.	श्री नवपद आराधना*	5
99.	श्री नन्दीसूत्रम्	40
100.	सुख विपाक सूत्र*	10
101.	स्वाध्याय स्तवन माला	30
102.	सामायिक साधना और स्वाध्याय	10
103.	उत्तराध्ययनसूत्र भाग-1	30
104.	उत्तराध्ययनसूत्र भाग-2	50
105.	उत्तराध्ययनसूत्र भाग-3*	50
106.	उत्तराध्ययनसूत्र हिन्दी	50
107.	उत्तराध्ययनसूत्र पद्यानुवाद	20
108.	युवा सँवारे यौवन	20
109.	वैराग्य शतक	5
110.	व्रत प्रवचन संग्रह	10
111.	बृहत्कल्पसूत्रम् (सटीकम्)	30
112.	बृहद् आलोयणा	5

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

क्रोध पर विजय प्राप्त करनी हो तो क्षमा से प्रतिकार करें।

– आचार्यश्री हस्ती

जोधपुर में प्लॉट, मकान, जमीन, फार्म हाऊस खरीदनें व बेचने हेतु सम्पर्क करें।

पद्मावती

डेवलोपर्स एण्ड प्रोपर्टीज

महावीर बोथरा
09828582391

नरेश बोथरा
09414100257

प्लॉट नं. 170 ललवाणी भवन, आस्था हॉस्पीटल के पीछे
द्वितीय पोलो, पावटा, जोधपुर 342001 फोन नं. : 0291-2556767

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

जो संघ में भक्ति रखता है और शासन की उन्नति करता है, वह प्रभावक श्रावक है।

Opening Ceremony

of

BAGHMAR TOWER

C/o CHANARMUL UMEDRAJ
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIER'S
S. RAJAN FINANCIERS

BAGHMAR TOWER
218, Ashoka Road 1, Mohalla, Mysore-570001
(Karanataka)

With Best Compliments from :
C. Sohanlal Budhraj Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurav, Akhilesh Baghmar
Tel. : 4265431 (O)
Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।।

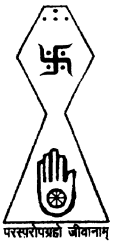

With Best Compliments From :

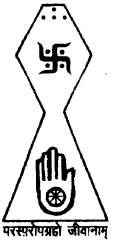

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

23, Vada malai Street, Sowcarpet
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 044-25292727
M. 9841091508

BRANCHES :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph. 26251960

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph. 26243455/56

Balalji Motors
Chennai-50, Ph. 26247077

Padmavati Motors
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

Gurudev

SURANA™
yes, the best TMT RE-BARS

DRI Plant

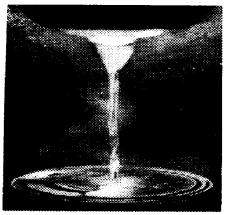
Electric Arc Furnace

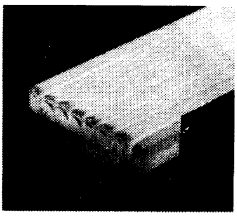
Billets

Rolling Mill

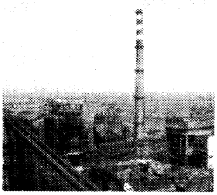
Captive Power Plant

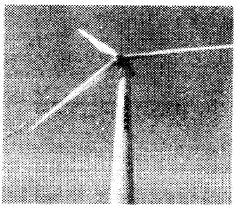
Windmill

With best wishes from

ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143

Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजानें के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त
रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल
के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHIVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित

युग मनीषी, सामायिक स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक परमाराध्य आचार्य भगवंत श्री हस्तीमलजी म.सा. के जन्म दिवस वर्ष 2010-11 को अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा शताब्दी वर्ष के रूप में मनाने के लिए आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना बनाई गई थी। यह एक पंचवर्षीय एवं बहुउद्देश्यी योजना थी, जिसे गतवर्ष पाली में आयोजित आमसभा में संघ द्वारा दो वर्ष के लिए आगे विस्तारित कर दिया गया है।

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना के प्रमुख उद्देश्य –

1. परमाराध्य, अध्यात्म योगी, युग मनीषी परम उपकारी आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के 100वीं जयन्ती वर्ष को शताब्दी वर्ष के रूप में मनाना। 2. कोई भी युवारत्न बंधु धनाभाव या साधनाभाव से उच्च शिक्षा से वंचित न रहें। 3. युवारत्न बन्धुओं का शैक्षणिक उन्नयन, चारित्र निर्माण एवं चहुँमुखी विकास करना। 4. प्रतिभाशाली युवाओं एवं युवतियों की खोज हो सकें। 5. रत्नसंघ में जैन दर्शन के विद्वान तैयार करना। 6. युवारत्न बन्धुओं एवं बहिनों में संघ के प्रति कर्त्तव्य एवं गुरुओं के प्रति श्रद्धा एवं समर्पण की भावना विकसित करना।

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना द्वारा आयोजित शिविर –

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना की चयन समिति द्वारा पिछले पांच वर्षों से लगातार लाभान्वित छात्र-छात्राओं के धार्मिक ज्ञान अभिवृद्धि के लिए शिविरों का आयोजन किया जा रहा है। अब तक 9 शिविरों का आयोजन किया जा चुका है। इन शिविरों का आयोजन आचार्य भगवंत एवं उपाध्याय भगवंत के सान्निध्य में किया गया। गुरु भगवंतों का लाभ लाभान्वित छात्र-छात्राओं द्वारा पूर्णरूपेण लिया गया।

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना के लक्ष्य की ओर बढ़ते चरण –

योजना समिति द्वारा अपने लक्ष्य से कई ज्यादा छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्ति प्रदान की जा रही है। इस योजना की प्रगति की संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है।

वर्ष	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11
लक्ष्य	96	193	291	390	500
प्राप्ति	130	250	400	560	450

- कई प्रशासनिक एवं प्रोफशनल युवारत्नबंधु एवं बहिनें तैयार।
- शिविरों में अध्यापन कार्य के लिए कई युवारत्नबंधु एवं बहिनें तैयार।

ज्ञान का दीया जलाईये, सहयोग के लिए आगे आईये
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का लाभ उठाकर आनन्द पाईये

आदरणीय रत्न बंधुवर

छात्रवृत्ति योजना में एक छात्र के लिए रू. 12000 के गुणक में दान राशि "Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund" योजना के नाम चैक/डापट (Donation to Gajendra Nidhi are Exempt u/s 80G of Income Tax Act, 1961) देने के लिए **निम्नांकित व्यक्तियों से सम्पर्क करें** –

1. अशोक कवाड़, चैन्नई (9381041097), 2. सुमतिचन्द मेहता पीपाड़ (9414462729), 3. महेन्द्र सुराणा, जोधपुर (9414921164), 4. बुधमल बोहरा,चैन्नई (9444235065), 5. राजकुमार गोलेच्छा,पाली (9829020742) 6. मनोज कांकरिया, जोधपुर (9414563597), 7. कुशलचन्द जैन, सवाई माधोपुर (9460441570) 8. प्रवीण कर्णावट, मुम्बई (9821055932), 9. जितेन्द्र डागा, जयपुर (9829011589) 10. महेन्द्र बाफना,जलगांव (9422773411), 11. हरीश कवाड,चैन्नई (9500114455)

सहयोग राशि भेजने,योजना संबंधी अन्य जानकारी एवं आवेदन पत्र प्रेषित करने के लिए निम्न पत्ते पर सम्पर्क करें–

B.BUDHMAL BOHRA
No.-53,Erullappan street, Sowcarpet, Chennai - 600079 (T.N.)
Telefax No - 044-42728476

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

प्यास बुझाये, कर्म कटाये फिर क्यों न अपनायें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)

098407 18382

2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

ISSN 2249-2011
आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 68 ★ अंक : 09 ★ मूल्य : 10 रु.
10 सितम्बर, 2011 ★ भाद्रपद, 2068

Kalpataru
AURA

• Awarded Best Architecture (Multiple Units) at Asia Pacific Property Awards 2010 • A complex of multi-storeyed buildings • Luxurious 2 BHK & E3 homes • Two clubhouses with gymnasium, squash, half-basketball and tennis courts • Mini-theatre • Yoga room • Swimming pool • Multi-functional room • Spa • Landscaped garden and children's play area • Safety and security features

KALPA-TARU®

Site Address: LBS Marg, Ghatkopar (West), Mumbai - 400 086.
Head Office: 101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East), Mumbai - 400 055.
Tel.: 022-3064 3065 • **Fax:** 022-3064 3131
Email: sales@kalpataru.com • **Visit:** www.kalpataru.com

All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. All project elevations are an artistic design. Conditions apply.

Kalpataru Limited is proposing, subject to market conditions and other considerations, to make a public issue of securities and has filed a Draft Red Herring Prospectus ("DRHP") with the Securities and Exchange Board of India (SEBI). The DRHP is available on the website of SEBI at www.sebi.gov.in and the respective websites of the Book Running Lead Managers at www.morganstanley.com/indiaofferdocuments, www.online.citibank.co.in/rhtm/citigroupglobalscreen1.htm, www.icicisecurities.com, www.nomura.com/asia/services/capital_raising/equity.shtml, www.idfccapital.com. Investors should note that investment in equity shares involves a high degree of risk and for details relating to the same, see 'Risk Factors' in the aforementioned offer documents. This communication is not for publication or distribution to persons in the United States, and is not an offer for sale within the United States of any equity shares or any other security of Kalpataru Limited. Securities of Kalpataru Limited, including its equity shares, may not be offered or sold in the United States absent registration under U.S. securities laws or unless exempt from registration under such laws.

स्वामी–सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक विरदराज सुराणा, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।